ISSN 0973-3914

रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइन्सेस

Peer-Reviewed Research Journal
UGC Journal No. (Old) 40942 Impact Factor 5.125 (IIFS)
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©
ProQuest, U.S.A. Title Id : 715205

Centre for Research Studies
REWA (M.P.)

अंक-34 हिन्दी संस्करण वर्ष-17 जनवरी-जून 2021

2021

www.researchjournal.in

आई. एस. एस. एन. 0973-3914

रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइन्सेस

Peer-Reviewed Research Journal
UGC Journal No. (Old) 40942
Impact Factor 5.125 (IIFS)
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, ProQuest, U.S.A. Title Id : 715205

अंक-34	हिन्दी संस्करण	वर्ष-17	जनवरी-जून 2021

प्रोफेसर ब्रजगोपाल
प्रधान सम्पादक
सेवानिवृत्त आचार्य, उच्च शिक्षा
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड से सम्मानित
profbrajgopal@gmail.com

डॉ. अखिलेश शुक्ल
ऑनरेरी सम्पादक
प्राध्यापक, समाजशास्त्र एवं समाजकार्य विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड तथा पं. गोविन्द वल्लभ पंत एवार्ड से सम्मानित
akhileshtrscollege@gmail.com

डॉ. संध्या शुक्ल
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
drsandhyatrs@gmail.com

डॉ. गायत्री शुक्ल
अतिरिक्त निदेशक, सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
shuklagayatri@gmail.com

डॉ. आर. एन. शर्मा
सेवानिवृत्त आचार्य, उच्च शिक्षा, रीवा
rnsharmanehru@gmail.com

सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा

की मुख्य शोध पत्रिका
म.प्र. सोसायटी रजिस्ट्रेशन एक्ट, 1973 के अंतर्गत पंजीकृत
पंजीयन क्रमांक 1802, सन् 1997

विषय विशेषज्ञ/परामर्श मण्डल

1. डॉ. अरविंद जोशी (आचार्य) बनारस हिंदू विश्वविद्यालय वाराणसी
arvindvns@outlook.com
2. डॉ. रामशंकर, आचार्य, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर
rs_dubey@yahoo.com
3. डॉ. डी. एस. राजपूत, आचार्य, डॉक्टर हरीसिंह गौर केंद्रीय विश्वविद्यालय सागर
drdiwakarrajeut@rediffmail.com
4. डॉ. बी. के. सिंह, आचार्य, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी
imdrbrajesh.kv@gmail.com
5. डॉ. अंजली श्रीवास्तव, आचार्य, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा
anjali_apsu@rediffmail.com
6. डॉ. बी. पी. बडोला, सेवानिवृत्त, आचार्य, कांगड़ा हिमाचंल प्रदेश
bpbadola@gmail.com
7. डॉ. आभा सक्सेना, सह प्राध्यापक, अग्रसेन कन्या स्वशासी महाविद्यालय वाराणसी
drabhasaxena7@gmail.com
8. डॉ. प्रज्ञा मिश्रा, आचार्य, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय चित्रकूट
pragyamishramgcgv@gmail.com
9. डॉ. आशीष सक्सेना, आचार्य, इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद उत्तर प्रदेश।
ashish.ju@gmail.com
10. डॉ. ज्योति उपाध्याय, आचार्य, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन मध्य प्रदेश
drjyotiupadhyay11@gmail.com
11. डॉ. प्रमिला पुनिया, सह प्राध्यापक, इतिहास, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर राजस्थान
pramilapoonia@rediffmail.com
12. डॉ. रामलला शुक्ला, प्राध्यापक, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान रीवा
ramlalashukla666@gmail.com
13. डॉ. मृदुल जोशी, आचार्य, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार
dr_mriduljoshi@yahoo.com
14. डॉ. के. के. शर्मा, प्राध्यापक, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान रीवा
sharmakktrs@gmail.com
15. डॉ. शैलजा दुबे, प्राध्यापक, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यालय भोपाल
shailjadubey70@yahho.in
16. डॉ. प्रमिला श्रीवास्तव, आचार्य, शासकीय कला महाविद्यालय कोटा राजस्थान
dr21pramila@gmail.com
17. डॉ. जयशंकर शाही, आचार्य, अलवर राजस्थान
jayshankarshahi@gmail.com
18. डॉ.एन. पी. त्रिपाठी ,सेवानिवृत्त आचार्य, रीवा मध्य प्रदेश
19. डॉ. राजेश भट्ट, एच. एन. बी. केंद्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखंड
rajeshbhatt11@gmail.com

Guide Lines

- **General:** English and Hindi Editions of Research Journal are published separately. Hence Research Papers can be sent in Hindi or English.
- **Manuscript of research paper:** It must be original and typed in double space on the one side of paper (A-4) and have a sufficient margin. Script should be checked before submission as there is no provision of sending proof. It must include Abstract,Keywords, Introduction, Methods, Analysis, Results and References. Hindi manuscripts must be in Devlys 010 or Kruti Dev 010 font, font size 14 and in double spacing. All the manuscripts should be in two copies and in Email also. Manuscripts should be in Microsoft word program. Authors are solely responsible for the factual accuracy of their contribution.
- **References :** References must be listed cited inside the paper and alphabetically in the order- Surname, Name, Year in bracket, Title, Name of book, Publisher, Place and Page number in the end of research paper as under- Shukla Akhilesh (2018) Criminology, Gayatri Publications, Rewa : Page 12.
- **Review System:** Every research paper will be reviewed by two members of peer review committee. The criteria used for acceptance of research papers are contemporary relevance, contribution to knowledge, clear and logical analysis, fairly good English or Hindi and sound methodology of research papers. The Editor reserves the right to reject any manuscript as unsuitable in topic, style or form without requesting external review.

लेखकों से निवेदन–

- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेज (ISSN-0973-3914) सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज की मुख्य शोध पत्रिका है, जो मानव संसाधन मंत्रालय तथा पंजीयक समाचार पत्र एवं पत्रिका, भारत सरकार नई दिल्ली द्वारा पंजीकृत हैं।
- शोध पत्रिका उलरिच इन्टरनेशनल पीरियाडिकल्स डाइरेक्ट्री प्रोक्वेस्ट, संयुक्त राज्य अमेरिका से इंडेक्स्ड और लिस्टेड हैं।
- शोध पत्रिका का अंग्रेजी एवं हिन्दी संस्करण अलग–अलग प्रकाशित होता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेस का प्रकाशन प्रतिवर्ष जून एवं दिसंबर में किया जाता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइंसेस को इम्पैक्ट फैक्टर एवं आई.एस.एस.एन प्राप्त हैं। शोध पत्रिका Peer-Reviewed हैं।
- शोध पत्रिका के नवीनतम अंक में प्रकाशित शोध पत्रों को हमारी वेबसाइट www.researchjournal.in (Current Issue) में देखा जा सकता है तथा डाउनलोड किया जा सकता है।
- शोध पत्रिका का प्रिंट एडीशन सदस्यों को अलग से डाक द्वारा भेजा जाता है।
- शोध पत्र में शीर्षक, नाम, पद, पदस्थापना का विवरण, पत्र व्यवहार का पता तथा दूरभाष क्रमांक,
- मोबाइल नं., ई–मेल एड्रेस अवश्य दिया जाये।
- शोध पत्र के प्रारम्भ में कम से कम 50–100 शब्दों का सारांश दिया जाये।
- मुख्य शब्द सारांश के नीचे टाइप कराया जाये।

- शोध पत्र में शोध पद्धति तथा शोध में प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण किया जाना चाहिए।
- शोध पत्र में निष्कर्ष और अंत में संदर्भ ग्रंथ सूची दी जाये। संदर्भ ग्रंथों का विवरण पूरा दिया जाये। लेखक का नाम, वर्ष, पुस्तक का नाम, प्रकाशक का विवरण, प्रकाशक का स्थान और पृष्ठ संख्या आदि का विवरण दिया जाना चाहिए।
- शोध पत्र माईक्रोसॉफ्ट वर्ड की फाइल में टाइप किया हुआ होना चाहिए। (नोट- पेज मेकर की फाइल, पी.डी.एफ. फाइल, स्कैन मैटर आदि में कदापि शोध पत्र न भेजें) शोध पत्र हिन्दी लिपि में कृतिदेव या देवलिस फांट 010 (फॉन्ट साइज 14, स्पेस डबल, मार्जिन ए-4 साईज के कागज में चारो तरफ 1 इंच) में भेजा जाना चाहिए।
- शोध पत्र के साथ यह घोषणा अवश्य संलग्न करें कि शोध पत्र मौलिक है तथा इसे कहीं अन्यत्र प्रकाशनार्थ प्रेषित नहीं किया गया है।

सर्वप्रथम शोध पत्र ई-मेल द्वारा भेजें-

researchjournal97@gmail.com,
researchjournal.journal@gmail.com

शोध पत्र की स्वीकृति की सूचना सम्पादकीय कार्यालय द्वारा लेखक को ई-मेल एवं दूरभाष द्वारा प्रदान की जाती है।

© सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज

एक अंक रुपये 500.00

-सदस्यता शुल्क -		
अवधि	व्यक्तिगत सदस्यता	संस्थागत सदस्यता
वर्ष एक	2000-00	2500-00
वर्ष दो	2500-00	4000-00

सदस्यता शुल्क की राशि गायत्री पब्लिकेशन्स के स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रांच-रीवा सिटी (आईएफएस कोड 0004667 MICR Code 486002003) के खाता क्रमांक 30016445112 में जमा की जाय, नगद जमा की स्थिति में 75 रु. अतिरिक्त बैंक चार्ज जोड़ा जाय।

प्रकाशक: गायत्री पब्लिकेशन्स
रीवा- 486001 (म.प्र.)

मुद्रक: लीनेज ऑफसेट
रीवा (म.प्र.)

संपादकीय कार्यालय

186/1, विन्ध्य विहार कालोनी
रीवा- 486001 (म.प्र.)
दूरभाष- 7974781746
E-mail- researchjournal97@gmail.com, researchjournal.journal@gmail.com
www.researchjournal.in

रिसर्च जरनल में प्रस्तुत किये गये विचार और तथ्य लेखकों के हैं, जिनके विषय में सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं हैं। रिसर्च जरनल के सम्पादन एवं प्रकाशन में पूर्ण सावधानी रखी गई है, किन्तु किसी त्रुटि के लिए सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं है। सम्पादन का कार्य अव्यावसायिक और ऑनरेरी है। सभी विवादों का न्यायालय क्षेत्र, रीवा जिला रीवा (म.प्र.) रहेगा।

सम्पादकीय

विगत कुछ दिनों से भारत सरकार और भारत के गणमान्य नागरिक इस विषय पर विचार कर रहे हैं कि एक देश एक चुनाव होना चाहिए। लोकसभा और राज्यों की विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराए जाने के मुद्दे पर लंबे समय से बहस चल रही है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने इस विचार का समर्थन कर इसे आगे बढ़ाया है। वैसे इस मुद्दे पर चुनाव आयोग, नीति आयोग, विधि आयोग और संविधान समीक्षा आयोग विचार कर चुके हैं। 'एक देश-एक चुनाव' लोकसभा और राज्यों की विधानसभाओं का चुनाव एक साथ करवाने का एक वैचारिक उपक्रम है। बेशक यह मुद्दा आज बहस के केंद्र में है, लेकिन विगत में 1952, 1957, 1962, 1967 में ऐसा हो चुका है, जब लोकसभा और राज्यों की विधानसभाओं के चुनाव साथ-साथ करवाए गए थे। यह क्रम तब टूटा जब वर्ष 1968-69 में कुछ राज्यों की विधानसभाएँ विभिन्न कारणों से समय से पहले भंग कर दी गईं। वर्ष 1971 में पहली बार लोकसभा चुनाव भी समय से पहले हो गए थे। ऐसे में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि जब इस प्रकार चुनाव पहले भी करवाए जा चुके हैं तो अब क्या समस्या है?

दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र हमारे देश में है और चुनावों को लोकतंत्र का सबसे बड़ा उत्सव माना जाता है। यदि हम देखें तो हर वर्ष किसी न किसी राज्य में चुनाव होते रहते हैं। चुनाव की इस निरंतरता के कारण प्रशासनिक और नीतिगत निर्णय भी प्रभावित होते हैं, बल्कि देश के राजस्व पर भी भारी बोझ पड़ता है। निश्चित ही ऐसी परिस्थितियों में 'एक देश-एक चुनाव' विचार पहली नजर में अच्छा प्रतीत होता है, पर यह व्यावहारिक है या नहीं, इस पर विशेषज्ञों की अलग-अलग राय है। बेशक बार-बार होने वाले चुनावों के बजाय एक स्थायित्व वाली सरकार बेहतर होती है, लेकिन इसके लिये सबसे जरूरी है, आम सहमति का होना और यह कार्य बेहद मुश्किल है। राजनीतिक सर्वसम्मति के अभाव में संविधान में आवश्यक संशोधन करना संभव नहीं होगा, क्योंकि इसके लिये दो-तिहाई बहुमत की जरूरत पड़ेगी, जो कि बिना आम सहमति के नहीं किया जा सकता।

पाँच साल में एक बार चुनाव कराने से सभी हितधारकों यानी राजनीतिक दलों, निर्वाचन आयोग, अर्धसैनिक बलों,पुलिस तथा नागरिकों को इसकी तैयारी के लिये अधिक समय मिल सकता है। यदि पहले की तरह लोकसभा और विधानसभाओं के चुनाव साथ-साथ होने लगें तो एक तो बार-बार होने वाले चुनावों के कारण देश की राजनीति का ध्यान राष्ट्रीय हितों से भटकने की समस्या का समाधान होगा और दूसरे, राष्ट्रीय संसाधनों की भी बचत होगी।

यह सही है कि एक साथ चुनाव कराने से सरकारी राजस्व और समय की बचत होगी तथा नीति निर्णय की प्रक्रिया प्रभावित नहीं होगी। चुनावों के समय लगभग यह देखा जाता है कि पूरा का पूरा प्रशासनिक अमला और राजनीतिक दल बेहद व्यस्त हो जाते है। चुनावी आचार संहिता लागू हो जाने के कारण भी विकास के कार्य रुक जाते हैं। प्रायः देखा जाता है कि जब चुनाव का समय नजदीक आता है तो मंत्रियों सहित पूरा सरकारी अमला बेहद व्यस्त हो जाता है, इसके साथ ही चुनाव आचार संहिता लागू होने से विकास कार्य भी ठप पड़ जाते हैं। निश्चित रूप से एक साथ चुनाव कराने के लिए संविधान में कुछ संशोधन करने होंगे, लेकिन यह कोई ऐसा काम नहीं जो बहुत कठिन हो। यदि राजनीतिक सहमति बने तो यह काम अधिक आसानी से किया भी जा सकता है।

जनवरी 2017 में 'राष्ट्रीय मतदाता दिवस' पर पूर्व राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने लोकसभा और विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराने का समर्थन करते हुए चुनाव आयोग से कहा था कि सभी राजनीतिक दलों को एक मंच पर लाने की कोशिश करे, ताकि आम सहमति बनाई जा सके। एक साथ चुनाव कराने से न केवल मतदाताओं का उत्साह बना रहेगा, बल्कि इससे धन की बचत होगी और प्रशासनिक प्रयासों की पुनरावृत्ति से भी बचा जा सकेगा। राजनीतिक दलों के खर्च पर भी नियंत्रण लगेगा, जिससे चुनावों में काला धन खपाने जैसी समस्या से भी बचाव होगा। बार-बार चुनावी आदर्श आचार संहिता भी लागू नहीं करनी पड़ेगी, जिससे जनहित के कार्य प्रभावित होते हैं। सरकारी अधिकारियों, शिक्षकों व कर्मचारियों की चुनावी ड्यूटी लगती है, जिससे बच्चों की पढ़ाई व प्रशासनिक कार्य प्रभावित होते हैं, उस पर अंकुश लगेगा। एक साथ लोकसभा व विधानसभा के चुनाव होने पर सरकारी मशीनरी की कार्य क्षमता बढ़ेगी तथा आम लोगों को इससे फायदा होगा।

एक देश एक चुनाव के विचार के समक्ष कुछ प्रमुख चुनौतियां भी हैं, जिनमें सबसे बड़ी चुनौती लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के कार्यकाल को समन्वित करने की है। 'एक देश-एक चुनाव' के लिये सभी राजनीतिक दलों को राजी करना आसान काम नहीं है। कुछ राजनीतिक विशेषज्ञों का यह मानना है कि 'एक देश-एक चुनाव' की आवधारणा देश के संघात्मक ढाँचे के विपरीत सिद्ध हो सकती है। वर्तमान में मतदान करने के लिये प्रत्येक मतदान केंद्र पर एक म्टड का उपयोग एक टटचाज मशीन के साथ किया जा रहा है। लोकसभा और विधानसभाओं के चुनाव एक साथ कराने पर इनकी संख्या दोगुनी हो जाएगी। एक साथ चुनाव कराए जाने पर हमें अधिक मतदान अधिकारियों और कर्मियों की आवश्यकता होगी और सुरक्षा व्यवस्था भी अत्यंत मजबूत करनी होगी और इसके लिए हमें पुलिस और केंद्रीय बलों की संख्या को बढ़ाना पड़ेगा। एक साथ चुनाव होने पर म्टड और टटचाजकी संख्या ज्यादा होगी और उनकी सुरक्षा एक महत्वपूर्ण मुद्दा होगा।

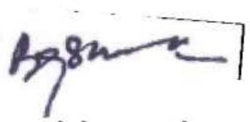

(प्रोफेसर ब्रजगोपाल)
प्रधान संपादक

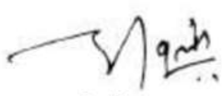

डॉ. अखिलेश शुक्ल
सम्पादक

अनुक्रमणिका

01	अपराध नियंत्रण में पुलिस के कर्तव्य, भूमिका एवं महत्व **अखिलेश शुक्ल**	09
02	महिला बाल विकास की समेकित योजनाओं का मूल्यांकन (रीवा नगर के विशेष संदर्भ में) **निशा सिंह** **के.के. शर्मा**	20
03	असंगठित क्षेत्र के फुटकर/पथ विक्रेताओं की स्थिति एवं शासकीय प्रयास एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण **अखिल यदु**	26
04	ऑनलाइन (वेव आधारित) शिक्षा का समग्र प्रभाव 21वीं सदी इंटरनेट की सदी है : एक कदम ज्ञान की ओर **महानन्द द्विवेदी** **एस. राठौर**	36
05	गंदी बस्ती के युवाओं में नशे की प्रवृत्ति : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (छत्तीसगढ़ के रायपुर नगर के विशेष संदर्भ में) **जवाहर लाल तिवारी** **चेतानंद जांगड़े**	44
06	छत्तीसगढ़ में हस्तशिल्प कला का विकास एक ऐतिहासिक अध्ययन **महेन्द्र कुमार सार्वा**	51
07	नई शिक्षा निति की गुणवत्ता **दिनेश कुमार**	56
08	आधुनिक जीवन में कुँडुख बोली एवं लिपि की स्थिति का अध्ययन **बाल किशोर राम भगत**	62
09	स्वच्छ भारत मिशन एवं शहरी जीर्णोद्धार **सिद्धार्थ मिश्र**	67
10	स्त्रीवादी चेतना का मर्दवादी विमर्श **फिरोजा जाफर अली**	71
11	सुपर फूड अलसी – शक्ति का अद्‌भुत खजाना **मंजरी अवस्थी**	77
12	कुपोषण : भारत की सामाजिक समस्या **आशुतोष भण्डारी**	82
13	नयी कविता और कुँवरनारायण **रेणु सक्सेना** **शुभा मिश्रा**	87
14	मध्य हिमालय में कृषि पद्धति, कृषि तकनीकी एवं कृषि उपकरणों के विकास का ऐतिहासिक अध्ययन **देवेश सिंह गर्ब्याल** **सत्येन्द्र धर्म्वाण**	91

15	विवेकानन्द का नव्य वेदांत: एक समावेशी चिंतन **वीणा रानी**	108
16	राष्ट्रकवि गिरिजाकुमार माथुर के साहित्य में राष्ट्र-प्रेम **रंजन शर्मा**	114
17	बदलते वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारत की विदेश नीति: एक विश्लेषणात्मक अध्ययन **सुधा गुप्ता**	120
18	गॉधी दर्शन में नैतिक अनुशासन : एक विवेचन **वीणा रानी**	129
19	समकालीन हिन्दी कथा साहित्य में नारी अस्मिता के स्वर **जानेश्वरी सिन्हा** **कृष्णा चटर्जी**	136
20	वृद्धा अवस्था एक समाजशास्त्रीय अध्ययन **दयाशंकर सिंह यादव**	142
21	भारत में जैविक खेती की संभावनायें **मंजरी अवस्थी**	148
22	दलित महिलाओं में सामाजिक गतिशीलता **गजानन मिश्र**	154
23	पूर्व मध्य कालीन आर्थिक जीवन में सिक्कों की भूमिका **वेद प्रकाश**	160
24	सारण जिले के प्रमुख खाद्यान्न फसलों का उत्पादन एवं विकास की संभावनाएं : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन **शैलेन्द्र मालाकार**	165
25	अहिच्छत्रा का मूर्ति शिल्प **बृजेश स्वरूप कटियार**	170

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125 (IIFS) ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

अपराध नियंत्रण में पुलिस के कर्तव्य, भूमिका एवं महत्व

• अखिलेश शुक्ल

सारांश- आज मानव समाज *21* वीं शताब्दी की दहलीज पर पॉव रखते हुये जिन समस्याओं का सामना कर रहा है, उनमें अपराध नियंत्रण भी एक हैं। आम धारणा यह है कि अपराध नियंत्रण केवल पुलिस का कार्य है, किन्तु यह कार्य पुलिस जनसहयोग से ही अधिक अच्छी तरह कर सकती है। पुलिस अधिनियम की धारा *39* में उल्लिखित पुलिस के कर्तव्यों में संघर्ष विवादों व अपराधों की रोकथाम एवं कानून-व्यवस्था तथा आपसी सौहार्द बनाये रखना प्रमुख है। विवादों के समाधान या उनसे अपराध या अव्यवस्था होने की संभावना कम करना, पुलिस कार्य का एक अविभाज्य अंग है।अपराध की रोकथाम अपराध नियंत्रण कानून और व्यवस्था बनाए रखना समाज में सामाजिक सौहार्द व शांति स्थापित करना आदि पुलिस के मूल कर्तव्य है। पुलिस के मूल्यों में देश भक्ति जनसेवा, कटिबद्धता, ईमानदारी, सत्य निष्ठा, निष्पक्षता, पारदर्शिता, संवेदनशीलता, सदव्यवहार, अनुशासन, अन्योन्याश्रित कार्य संस्कृति आदि प्रमुख है। पुलिस की प्राथमिकताओं का यदि विश्लेषण किया जाए तो आम नागरिक के प्रति जवाबदेही, कानूनों का निष्पक्ष क्रियान्वयन व अनुपालन, समाज के कमजोर वर्ग महिलाओं, बालक और बालिकाओं का विशेष संरक्षण, आम जनता के साथ मैत्रीपूर्ण व्यवहार एवं पारस्परिक सहयोग, कानून के अंतर्गत संस्थाओं के प्राधिकारो की सुरक्षा, धर्मनिरपेक्ष मूल्यों की सुरक्षा, संविधान में निहित मौलिक अधिकारों के माध्यम से भयमुक्त वातावरण का निर्माण करना, लोगों के मानव अधिकार की रक्षा करना आदि प्रमुख है। पुलिस की कार्यपद्धति संविधान में निहित प्रावधानों के अंतर्गत नागरिकों की रक्षा करना ही है।

मुख्य शब्द - अपराध नियंत्रण, कानून एवं व्यवस्था, सौहार्द, शांति, कर्तव्य, संरक्षण

भारत पहली सदी से 17वीं सदी तक एक समृद्ध राष्ट्र रहा है। विश्व पटल पर तब इसका स्थान हमेशा एक से तीन में रहा था। इसके बाद इसके स्थिति में गिरावट आई। अब के वक्त में हमारा देश विकासशील से विकसित होने की ओर अग्रसर हैं। शिक्षित-सुसंस्कृत वर्ग विकसित देश की तरह सोचता है और दूसरा बड़े वर्ग की सोच अभी विकसित नहीं हो पाई है। इसलिए समाज में उथल-पुथल है। ऐसे में पुलिस का काम काफी महत्वपूर्ण हो गया है। नई बन रही परिस्थितियों में पुलिस-पब्लिक के बीच बेहतर समन्वय जरूरी है।

प्रस्तावना - भारत में पुलिस व्यवस्था ब्रिटिश शासन की विरासत है। ब्रिटिश शासनकाल में 1860 के पुलिस आयोग की सिफारिशों के आधार पर 1861 के पुलिस एक्ट को लागू किया गया, जो आज भी भारतीय पुलिस संगठन एवं प्रशासन की रीढ़-स्तंभ है।[1] इस अधिनियम में यह प्रावधान किया गया था कि सिविल पुलिस का गठन प्रादेशिक स्तर पर किया जाय और एक पुलिस महानिरीक्षक उस प्रदेश की पुलिस का प्रमुख अधिकारी

• प्राध्यापक, समाजशास्त्र,शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, (रीवा म.प्र.)

बनाया जाय। पुलिस महानिरीक्षक की जिम्मेदारी होगी कि वह शांति कायम रखें, अपराधों की रोकथाम करें और गांव की पुलिस की देखभाल करे। इस प्रकार प्रदेशों में पुलिस बल का गठन इस एक्ट के अंतर्गत किया गया, जिसके अंतर्गत जिला स्तर पर पुलिस बल का प्रशासन जिला मजिस्ट्रेट के सामान्य नियंत्रण तथा निर्देशानुसार पुलिस अधीक्षक के हाथ में रखा गया। पुलिस संगठन का ढांचा उसी स्वरूप में आजाद भारत में भी विद्यमान है। वर्तमान समय में प्रादेशिक पुलिस का सर्वोच्च पदाधिकारी पुलिस महानिदेशक होता है।[2]

अपराध नियंत्रण पुलिस का प्राथमिकता दायित्व है। इस दायित्व का निर्वहन भारतीय पुलिस अपने प्रारंभिक काल से ही करती चली आ रही है। ब्रिटिश शासनकाल में कानून और व्यवस्था बनाये रखना सरकार का मुख्य कार्य माना जाता था। इसीलिये उस समय सरकार के प्रशासनिक और न्यायिक कार्य एक ही अधिकारी द्वारा किए जाते थे। इसलिए जो अधिकारी जिले की शांति और सुरक्षा के लिए उत्तरदायी होते थे, उन्हीं को झगड़ों के निपटारे का भी अधिकार दिया गया था। ब्रिटिशकाल में जिलाध्यक्ष को न्यायिक और प्रशासनिक दोनों अधिकार प्राप्त थे। जिला पुलिस अधीक्षक प्रशासन के संबंध में जिलाध्यक्ष के नेतृत्व निर्देशन में कार्य करते थे। अपराध नियंत्रण तथा शांति व व्यवस्था बनाए रखने हेतु प्रशासन के प्रत्येक स्तर पर इस प्रकार सामंजस्य की व्यवस्था बनाई गई थी।[3] आजाद भारत में भी यह व्यवस्था कायम रखी गई है। अपराध नियंत्रण हेतु पुलिस अधिनियम 1861 तथा मध्यप्रदेश पुलिस विनियम (रेग्यूलेशन) में किए गए प्रावधानों की विवेचना से यह स्पष्ट हो जाएगा कि अपराध की रोकथाम पुलिस अधिकारियों का मुख्य और महत्वपूर्ण कर्त्तव्य है।

पुलिस अधिकारियों के कर्तव्य- पुलिस अधिनियम धारा 23 में प्रत्येक पुलिस अधिकारी का प्राथमिक कर्तव्य "अपराध नियंत्रण" निर्धारित किया गया है। इस धारा के अन्तर्गत प्रत्येक पुलिस अधिकारी के निम्न कर्तव्य निरूपित किये गये हैं-

1. सक्षम अधिकारियों के सभी आदेशों का पालन करना,
2. अपने क्षेत्र में शान्ति और व्यवस्था हेतु निगरानी रखना,
3. शान्ति और व्यवस्था को प्रभावित करने वाली गुप्त वार्ताओं या गुप्त गतिविधियों की जानकारी प्राप्त करना एवं उच्च अधिकारियों को सूचित करना,
4. अपराधों की जाँच करना और प्रकरण न्यायालय में प्रस्तुत करने हेतु तैयार करना,
5. अपराधियों का पता लगाना और न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करना, तथा
6. मदिरालय, जुँआ घर या भ्रष्ट और आपराधिक व्यक्तियों के उठने-बैठने के स्थानों की निगरानी रखना।

इस तरह आरक्षक सहित सभी पुलिस अधिकारियों का प्राथमिक दायित्व अपराध नियंत्रण है। उन्हें अपने वरिष्ठ एवं सक्षम अधिकारियों के वैध आदेशों का पालन करते हुये अपराधी स्थलों की निरंतर निगरानी रखनी चाहिये। संदिग्ध व्यक्तियों से पूछतांछ करनी चाहिये। पुलिस अधिकारी को यह अधिकार है कि वह लोकशान्ति, अपराधों की रोकथाम और लोकन्याय के लिये बिना वारण्ट के मदिरालयों, जुँआघरों या ऐसे ही किसी अनैतिक लोगों के समागम स्थल में प्रवेश कर सकता हैं। लोकशान्ति हेतु वह दोषी व्यक्तियों को दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अन्तर्गत बन्दी बना सकता है। ऐसे व्यक्तियों को पुलिस

अभिरक्षा में रखने का अधिकार प्रत्येक पुलिस अधिकारी को पुलिस अधिनियम की धारा 23 प्रदान करती है।[4] अपराध नियंत्रण में प्रारंभ से ही बीट प्रणाली अत्यंत कारगर सिद्ध हुई है।

अपराधों की रोकथाम एवं सुरागरसी और प्रशासनिक सुविधा एवं व्यवस्था के लिये प्रत्येक थानों को कुछ भागों में बॉट दिया जाता है। थाने में इस बटे हुये क्षेत्र को "बीट" कहते हैं। शहरों में बीट स्थानीय होती है। ऐसी बीट में शहरों की कुछ सड़कें, गलियां अथवा भवन शामिल होते है और देहाती थानों में कुछ गाँवों को मिलाकर एक बीट बनायी जाती है। इनके अलावा किन्हीं विशेष स्थानों जैसे रेलवे स्टेशन, नॉवघाट आदि क्षेत्र को भी विशेष बीट बनाया जाता है। शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों की बीटों की संख्या एवं उनके क्षेत्र का निर्धारण तत्कालीन आवश्यकता और उपलब्ध पुलिस बल के आधार पर किया जाता है। इनका प्रभारी उपनिरीक्षक, सहायक उपनिरीक्षक या प्रधान आरक्षक होता है और इनकी सहायता के लिए बीट व्यवस्था हेतु आरक्षक नामजद किए जाते हैं। इस तरह ग्रामीण एवं शहरी बीटों का गठन पुलिस रेग्यूलेशन के पैरा 449, 604 और 606 को ध्यान में रखते हुये किया जाता है। सार रूप में हम यह कह सकते हैं कि बीट एक ऐसा ग्रामीण या नगरीय क्षेत्र है जहां पुलिस अधिकारी नियमित रूप से गश्त (पेट्रोलिंग) करते हैं।[5]

उद्देश्य- प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य रीवा जिले की पुलिस की अपराध नियंत्रण में क्या भूमिका और कर्तव्य है इस तथ्य का अध्ययन करना है

अध्ययन क्षेत्र- भारत के मध्य में स्थिति रीवा जिला स्वतंत्रता पूर्व रीवा रियासत का मुख्य भाग था, जहाँ राज्य की राजधानी थी। स्वतंत्रता के बाद नवगठित विंध्य प्रदेश में भी इस जिले की यही स्थिति रही।[2] नवम्बर 1956 से मध्यप्रदेश का संभागीय मुख्यालय है। मध्यप्रदेश के उत्तर पूर्वी भाग में स्थित रीवा जिला 23.11से 24.18 उत्तरी अक्षांस एवं 81.03 से 82.10 डिग्री पूर्व देशान्तर में स्थित है। रीवा जिला मध्यप्रदेश के उत्तर-पूर्वी कोने में स्थित है। इसके उत्तर में बाँदा और इलाहाबाद जिले, पूर्व तथा उत्तर प्रदेश का ही मिर्जापुर जिला, दक्षिण में मध्यप्रदेश का सीधी जिला और दक्षिण-पश्चिम में सतना जिला है। रीवा जिले का कुल क्षेत्र 6314 वर्ग कि.मी. है। 2011 की जनगणना के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ प्रतिवर्ग कि.मी. 374 लोग निवास करते हैं, वहीं नगरीय क्षेत्र में प्रतिवर्ग कि.मी. 316 लोग रह रहे हैं। नगर निगम रीवा क्षेत्र में तुलनात्मक रूप से यह सघनता और भी बढ़ गई है। यहां प्रतिवर्ग कि.मी. 3119 लोग निवास कर रहे हैं। 2011 की जनगणना के अनुसार रीवा जिले में प्रतिवर्ग कि.मी. 374 लोग निवास करते हैं। 2011 में सम्पन्न जनगणना के प्रावधिक आँकड़ों के अनुसार रीवा जिले में 2363744 लोग रहते हैं। 2001-2011 के बीच यहाँ की जनगणना में 19.79 प्रतिशत की वृद्धि हुई। जिले की साक्षरता दर 73.42 प्रतिशत है। रीवा जिला में पुरुष साक्षरता दर 83.67 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 62.49 है। जिले में प्रति हजार पुरुष की तुलना में महिलाओं की संख्या 930 है। 2011 की जनगणना के अनुसार रीवा जिले की कुल जनसंख्या 2263744 है, जिसमें पुरुष 1224918 तथा महिला 1138826 हैं। सन् 2011 में रीवा जिले में स्त्री-पुरुष अनुपात 930 पाया गया है।

रीवा जिला में 31 पुलिस थाने हैं। कोतवाली, सिविल लाइन, विश्वविद्यालय, अमहिया, समान, बिछिया, महिला थाना, गोविंदगढ़, गुढ, सगरा, रायपुर कर्चुलियान, यातायात, सिरमौर, सिमरिया, बैकुंठपुर, जवा, डभौरा, पनवार, अतरैला, सोहागी,

चाकघाट, जनेह, मऊगंज, नईगढ़ी, हनुमना, शाहपुर, मनगवां, गढ़, लौर, अनुसूचित जनजाति। इनके अलावा रीवा जिले में 21 पुलिस आउट पोस्ट भी है।

अध्ययन विधि- गूगल फार्म के माध्यम से ऑनलाइन 150 उत्तरदाताओं से संपर्क किया गया गूगल फार्म की लिंक **https://forms-gle/wDTJ6Kcdw8HZjTeq7** यह थी। गूगल फार्म के माध्यम से प्राध्यापक, अधिवक्ता, चिकित्सक,पत्रकार,शोध छात्र, जनप्रतिनिधि, व्यवसायी तथा कर्मचारी वर्ग के 100 लोगों से संपर्क कर उत्तर प्राप्त किया गया। गूगल फार्म का इस्तेमाल मूलतः ऑनलाइन अनुसंधान, सर्वे, डाटा कलेक्शन इत्यादि के लिए किया जाता है। इसकी मदद से हम घर बैठे ऑनलाइन उत्तरदाताओं से संपर्क कर प्रश्नावली के माध्यम से प्रश्नों के उत्तर जानकर तथ्यों का विश्लेषण कर सकते हैं। ऑनलाइन तथ्य इकट्ठा करने का यह बहुत ही अच्छा और सरल टूल है, इस फार्म को ईमेल, व्हाट्सएप, फोन मैसेज, सोशल मीडिया आदि के द्वारा शेयर किया जा सकता है और बदले मे फार्म में दिये गए सवालो के प्रतिउत्तर में जवाब प्राप्त किया जा सकता है। इस शोध पत्र को तैयार करने के लिए उपकल्पनाओं के माध्यम से कुछ प्रश्न तैयार किए गए और उन प्रश्नों को एक श्रंखला में तैयार कर गूगल फार्म में व्यवस्थित किया गया। गूगल फार्म बनाने के बाद इसके साथ Response Google Sheet इसमें अपने आप जुड़ जाती है। गूगल शीट की मदद से जो भी उत्तरदाताओं से जवाब मिलते है वो प्रश्नवार तरीके से गूगल शीट मे save होते जाते है और आप चाहे तो Response गूगल शीट को ऑनलाइन कहीं भी किसी भी डिवाइस में देख सकते है और download कर के MS Excel में भी रख सकते है। प्रस्तुत शोध पत्र में इस शोध अध्ययन में समाज के विभिन्न वर्गों के 100 लोगों का साक्षात्कार लिया गया है, जिनका विवरण इस प्रकार है।

अध्ययन की चयनित इकाईयाँ (सामान्य जन)

वर्ग	चयनित इकाईयों की संख्या
अध्यापक	10
अधिवक्ता	10
चिकित्सक	10
पत्रकार	10
छात्र	10
जनप्रतिनिधि	10
व्यवसायी	10
कृषक	10
कर्मचारी	10
श्रमिक	10
योग	**100**

उक्त चयनित प्रदर्शों में समाज के सभी वर्गों – अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अन्य पिछड़े वर्गों, सामान्य तथा व्यावसायिक दृष्टि से अध्यापकों, अधिवक्ता, चिकित्सक, पत्रकार, छात्र, जनप्रतिनिधियों, व्यवसाईयों, कृषकों, पंचायत कर्मियों तथा श्रमिकों के प्रतिनिधित्व को ध्यान में रखा गया है। इस तरह यह अध्ययन समाजशास्त्र की वैज्ञानिक शोध पद्धति के अन्तर्गत किया गया है, जिसमें अवलोकन, साक्षात्कार विधि का प्रयोग करते हुये अनुसूची के माध्यम से तथ्यों का संग्रहण किया गया है।

उपकल्पना- अनुसन्धान या अध्ययन के क्षेत्र में पूर्व कल्पना या उपकल्पना का

महत्वपूर्ण स्थान होता है। इसका निर्माण और प्रयोग वैज्ञानिक अध्ययन पद्धति का एक महत्वपूर्ण चरण होता है। सरल शब्दों में उपकल्पना का अर्थ होता है, एक ऐसा विचार या सिद्धांत जिसे शोधकर्ता अध्ययन के लक्ष्य के रूप में रखता है, उसकी जांच करता है और प्रमाणित करता है। इस शोध पत्र की कुछ उपकल्पनायें इस प्रकार है–

1. पुलिस अधिकारियों की भूमिका अपराधों की रोकथाम पर प्रभावकारी रही है।
2. यातायात पर नियंत्रण के कार्य में पुलिसकर्मी सजग और क्रियाशील रहे हैं।
3. पुलिस का अन्य विभागों से तालमेल अच्छा रहा है।
4. पुलिस कर्मियों का जनता के साथ संबंध अच्छा रहा है।

अध्ययन का महत्व- प्रस्तुत शोध पत्र के आधार पर अपराध नियंत्रण में पुलिस की वास्तविक स्थिति एवं भूमिका को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है जो अत्यंत महत्वपूर्ण है।

तथ्यों का सारणीयन एवं विश्लेषण- उत्तरदाता पुलिसकर्मियों से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

अपराधों की रोकथाम - अपराध की रोकथाम के लिए हर संभव प्रयास करना प्रत्येक पुलिस अधिकारी का प्राथमिक कर्तव्य है। दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 42 एवं 149, 150, 151 व 152 में प्रत्येक पुलिस अधिकारी को सभी प्रकार के अपराधों चाहे वे हस्तक्षेपीय हों या अहस्तक्षेपीय, साधिकार रोक–टोक का अधिकार है। यदि आपत्तिजनक व्यवहार, कार्य या आचरण को वर्जित या प्रतिषिद्ध करना कारगर नहीं होता तो, ऐसी स्थिति में गिरफ्तारी भी की जा सकती है। उपलब्ध संसाधनों के दृष्टिगत इस हेतु स्थानीय नागरिकों के परामर्श से प्राथमिकताओं का निर्धारण आवश्यक है ताकि इन सीमित संसाधनों को उन अपराधों पर संकेन्द्रित किया जा सके जिनसे स्थानीय जनता विशेष रूप से क्षुब्ध, पीड़ित या परेशान है। मध्यप्रदेश पुलिस रेग्यूलेशनके पैरा 322 में पुलिस अधिकारियों के कार्य, शक्ति एवं कर्तव्य का निर्धारण करते हुये अपराधों की रोकथाम पर जोर दिया गया है। अपराध नियंत्रण हेतु यह आवश्यक है कि आरक्षक सहित सभी पुलिस अधिकारी सामान्य रूप से नगर या कार्यस्थल, थाना या बीट, जहाँ भी अपने कर्तव्य के निर्वहन हेतु उपस्थित हो, निरंतर दिन व रात में नियमित रूप से गश्त करें। इससे संदिग्ध व्यक्तियों और अपराधियों पर सतर्क निगरानी बनी रहती है और लोकशान्ति को प्रभावित करने वाले कार्यों की जानकारी प्राप्त होती है। पैरा 321 में पुलिस अधिकारियों के सामान्य कर्तव्य के अन्तर्गत अपराध का अन्वेषण एवं अपराध नियंत्रण प्रमुख है। पैरा 323 में अपराध नियंत्रण में आरक्षक से लेकर ऊपर के सभी पुलिस अधिकारियों को सजग रहते हुये अपने व्यावहारिक अनुभव का प्रयोग करना चाहिये। पैरा 324 में अपने कर्तव्य स्थल में दिन और रात घूमते रहना पुलिसजनों का कर्तव्य है। निश्चित ही अपराध नियंत्रण में उनकी यह सक्रियता प्रभावशाली सिद्ध होती है। पैरा 325 में प्रत्येक पुलिस अधिकारी को मजिस्ट्रेट द्वारा जारी की गयी सभी विधि संगत आज्ञाओं का शीघ्र पालन करना चाहिये। क्या पुलिस अपराधों की रोकथाम निष्पक्ष कार्यवाही करती है? उत्तरदाताओं से जब यह प्रश्न किया गया कि क्या पुलिस अपराधों की रोकथाम में निष्पक्ष कार्यवाही करती है तो 57 प्रतिशत उत्तरदाता ने हां कहां और 43 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने ना

कहा। उत्तरदाताओं से प्राप्त तथ्यों को नीचे डायग्राम में प्रस्तुत किया जा रहा है–

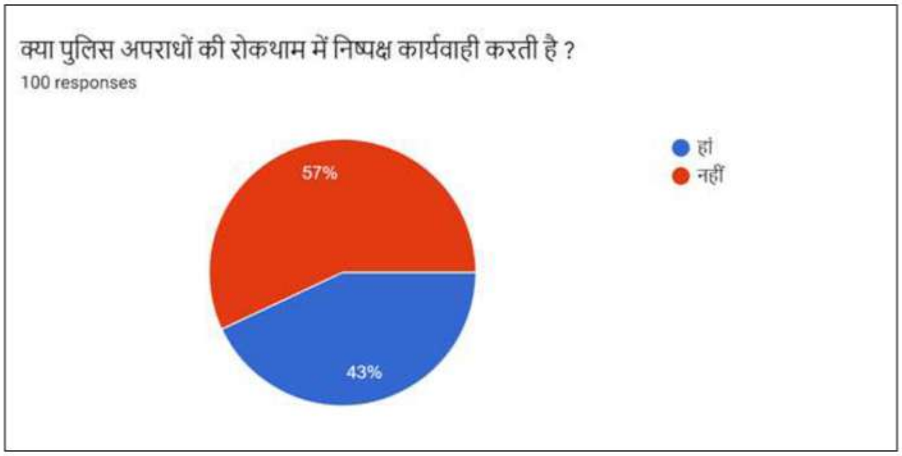

शान्ति भंग को रोकना – पुलिस व्यवस्था का उद्देश्य होता है, क्षेत्र में शांति व्यवस्था बनाकर कानून का राज सुनिश्चित करना। इसके लिए वह उन तत्वों और स्थानों पर नजर रखती है, जिनके द्वारा शांति भंग होने की आशंका रहती है। आसपास के माहौल को ध्यान में रखते हुए वह धारा 144 का प्रयोग कर शांति और व्यवस्था लागू करती है तथा जरूरत पड़ने पर असामाजिक तत्वों को शांति भंग होने की आशंका में हिरासत में भी लेती है। पैरा 326 में शान्ति भंग को रोकने हेतु पुलिस कर्मियों को महत्वपूर्ण धार्मिक त्यौहारों तथा सार्वजनिक सम्मेलनों के अवसरों पर विभिन्न सम्प्रदायों के बीच किसी भी संघर्ष को रोकने के लिये उचित व्यवस्था करनी चाहिये। इसी तरह जब किसी भूमि या अन्य सम्पत्ति के विवाद के कारण उपद्रव की आशंका हों तो उसे रोकने हेतु पुलिस को हस्तक्षेप व जाँच करनी चाहिये। पुलिस की इस भूमिका के संबंध में उत्तरदाताओं से प्रश्न पूछा गया तो 69 प्रतिशत उत्तरदाता ने हां कहां और 31 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने ना कहा। उक्त विश्लेषण से प्रथम उपकल्पना, 'पुलिस अधिकारियों की भूमिका अपराधों की रोकथाम पर प्रभावकारी रही है' सत्य सिद्ध होती है। उत्तरदाताओं से प्राप्त तथ्यों को नीचे डायग्राम में प्रस्तुत किया जा रहा है–

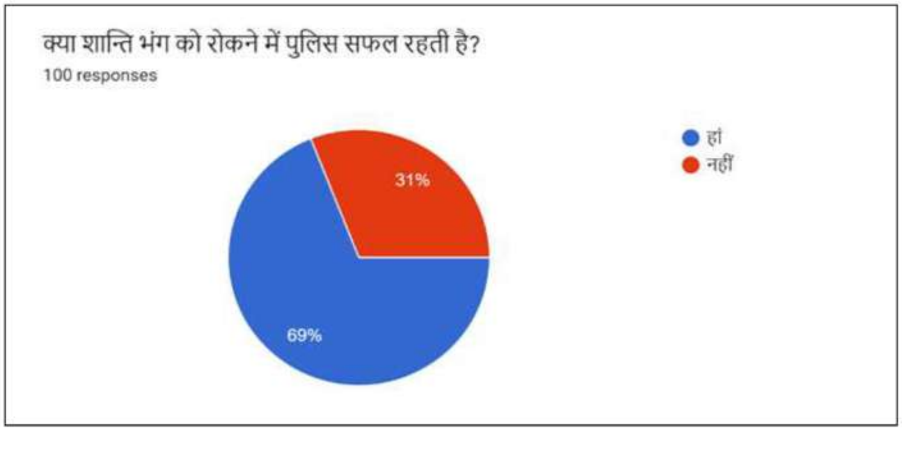

यातायात पर नियंत्रण - व्यवस्थित यातायात व्यवस्था का प्रबंधन करना पुलिस का प्रमुख दायित्व है यातायात व्यवस्था से सभी नागरिक प्रभावित होते हैं इसलिए सार्वजनिक रास्तों में सुचारू ट्रैफिक व्यवस्था तथा शान्ति-व्यवस्था स्थापित हों सके यह देखना भी पुलिस का प्राथमिक दायित्व है सार्वजनिक रास्तों को बाधा-रहित रखने व उनसे अवरोध हटवाने के लिये प्रभावित स्थलों को चिन्हित किया जाना चाहिये धारा 133 दं.प्र.सं या धारा 290/291 भारतीय दण्ड विधान (भा.द.वि.) के अंतर्गत कार्यवाही की चेतावनी देते हुये संबंधित से अवरोधों को हटाने के निर्देश दिये जाने चाहिये। निर्देशों का पालन न होंने पर कानूनी कार्यवाही की जा सकती है। वाहनों की पार्किंग तथा सार्वजनिक मार्गों के किनारे सामान की लोडिंग/अनलोडिंग के लिये समय व स्थान का हलकावार निर्धारण तथा इस हेतु यथासंभव प्रभावित नागरिकों से परामर्श लिया जाना चाहिये। दुर्घटनाओं की रोकथाम के लिये तेज गति, लापरवाही, या नशे में ड्राइविंग पर विशेष नियंत्रण आवश्यक है। नागरिकों को ऐसे वाहनों की सूचना पुलिस को देने व यदि संभव हों तो उनकी दृश्य-श्रव्य सामग्री उपलब्ध कराने के लिये प्रेरित किया जाना चाहिए। इस हेतु इंटरनेट व सोशल मीडिया का प्रयोग अत्यंत उपयोगी हों सकता है। ट्रैफिक नियमों के उल्लंघन के दोषी पाये व्यक्तियों व वाहनों का डेटा-बेस ऐसा हों कि वाहन व चालक के पूर्व ट्रैफिक अपराधों व उनकी स्थिति का पता चल सके और तदनुसार निरोधात्मक कार्यवाही की जा सके। मध्य प्रदेश पुलिस रेगुलेशन के पैरा 327 में यातायात का नियंत्रण पुलिस व्यवस्था में निहित है अतः पुलिस का यह कर्तव्य है कि वह लोकशान्ति हेतु यातायात के नियमों का समुचित पालन कराये। यातायात व्यवस्था ट्रैफिक पुलिस संभालती है। देश में सड़को पर चलने वाला आम नागरिक कानून का पालन करे, यह सुनिश्चित करने का काम ट्रैफिक पुलिस का होता है। देश में कई तरह की हड़ताल एवं विरोध-प्रदर्शनों के दौरान सार्वजनिक संपत्ति की रक्षा भी पुलिस ही करती है। यातायात पुलिस शहर के प्रमुख चौराहों, तिराहों और अधिक भीड़ वाले चेकिंग प्वाइंट्स पर वाहनों के जाम पर नियंत्रण का ही मुख्य कार्य देखती है। इसके अलावा वीआईपी दौरों के समय यातायात व्यवस्था संभालने के लिए कर्मचारियों को लगा दिया जाता है। ऐसे में वाहनों की चेकिंग का कार्य सिविल पुलिस कर रही थी ऐसी स्थिति में पुलिस के ऊपर कार्य का दबाव बढ़ जाता है।

यातायात नियंत्रण पर प्रभावी भूमिका ना होने के कारणों का विश्लेषण किया गया तो यह बात सामने आई कि यातायात पुलिस के पास संसाधनों की कमी है, ना तो उनके पास पर्याप्त गाड़ियां हैं और ना ही पर्याप्त मात्रा में वाहनों को खींचने के लिए क्रेन है। अधिकांश शहरों में जेब्रा क्रासिग और व्यवस्थित ट्रैफिक सिग्नल की भी कमी है। किसी-किसी शहर में होमगार्ड आदि के जवान भी यातायात नियंत्रण के कार्य में लगाए जाते हैं, जिनमें प्रशिक्षण की कमी परिलक्षित होती है। यातायात नियंत्रण की प्रभावी भूमिका को कारगर करने के लिए यातायात पुलिस को पर्याप्त बजट देने की भी आवश्यकता है और यातायात में संलग्न पुलिसकर्मियों और अधिकारियों को संवेदनशील होते हुए अपने कर्तव्य को और बेहतर तरीके से निभाने की भी आवश्यकता महसूस की गई है। उत्तरदाताओं से प्राप्त तथ्यों को नीचे डायग्राम में प्रस्तुत किया जा रहा है-

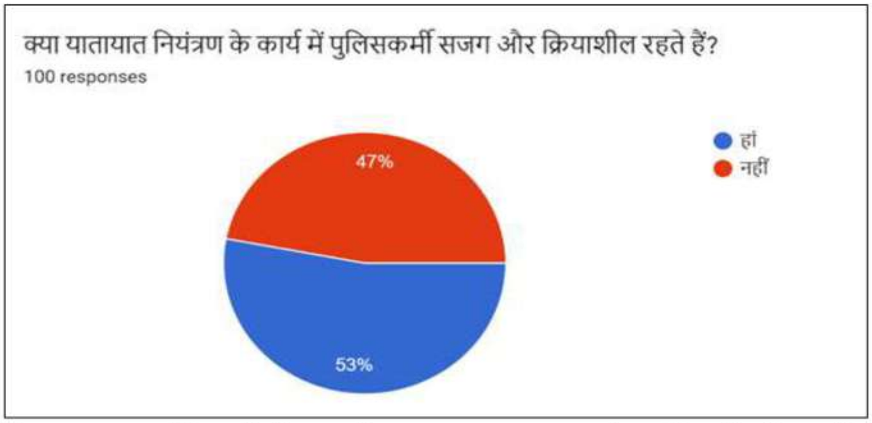

पुलिस का अन्य विभागों से तालमेल समन्वय- मध्य प्रदेश पुलिस रेगुलेशन के पैरा 328 में यह प्रावधान किया गया है कि पुलिस को संगठित अपराधों को रोकने के लिये वन, आबकारी या अन्य विभागों को पर्याप्त साधन सदैव उपलब्ध कराना चाहिये। शासकीय विभागों में नियुक्त होने वाले व्यक्तियों के चरित्र की जाँच करना, सम्पत्ति तथा भवनों की रक्षा करना, कोषालय व डाकघरों में शासकीय धन प्रेषण के लिये मार्गरक्षक प्रदान करना भी पुलिस का दायित्व है। बन्दियों को एक जेल से दूसरे जेल में ले जाते समय प्रहरी व मार्गरक्षक प्रदान कराया जाना भी पुलिस का दायित्व है। इस तरह अपराध नियंत्रण और लोकशान्ति हेतु पुलिस को अन्य विभागों से सहयोग करना चाहिये। सामाजिक नियंत्रण की व्यवस्था में पुलिस के अतिरिक्त अन्य अनेक सरकारी और गैरसरकारी एजेन्सियों का योगदान रहता है। निजी सुरक्षा एजेन्सियों के अतिरिक्त अन्य इकाइयां भी अपनी-अपनी तरह से सुरक्षा एवं अपराध व अव्यवस्था के नियंत्रण के कार्य में संलग्न रहती हैं, जैसे विद्यालयों में शिक्षक, छात्रावासों के वार्डन, आवासीय कालोनियों की कल्याण समितियां, सरकारी या निजी संस्थानों के प्रबंधन आदि। स्वयं नागरिक भी अपने घर एवं परिवार की सुरक्षा एवं उपयुक्त व्यवहार के लिए उत्तरदायी होते हैं व आवश्यक सुरक्षा प्रबंध करते हैं। पुलिस को ऐसे प्रयासों को प्रोत्साहित करते हुये उनको आवश्यक सहयोग प्रदान करना चाहिये एवं उनसे आपसी समन्वय बनाये रखना चाहिये ताकि इनके संसाधनों का महत्तम उपयोग सर्वांगीर्ण सुरक्षा व्यवस्था के लिए किया जा सके। पुलिस सम्बन्धी अन्य समस्याओं के समाधान हेतु भी इस नेटवर्क का प्रयोग किया जा सकता है। इसी प्रकार अन्य सरकारी प्रवर्तन एजेन्सियों से समन्वय अपराधिक कानून के अतिरिक्त नियामक (Regulatory) नियम व कानूनों के प्रयोग को पुलिस व्यवस्था हेतु संभव बनाता है, जैसे दुकानों, स्कूलों, पार्को के खुलने व बन्द होंने के समय,मॉल, गेस्ट हाउस, बार आदि के लाइसेंस की शर्ते, आदि जिनके उल्लंघन पर जुर्माना या कारोबार बन्द कराने या परिसर खाली कराने की कार्यवाही कराई जा सकती हों। सिविल नियामक व्यवस्थाओं के माध्यम से अनेक ऐसी समस्याओं को कम किया जा सकता है जिनसे नागरिकों में परेशानी या असुरक्षा की भावना पैदा हो रही हों। गैर सरकारी संगठन व संस्थायें, विशेषकर जो समाज कल्याण, मानवाधिकार या अन्य जन कल्याण संबंधी कार्यों में संलग्न हैं, से पुलिस को उन समस्याओं की पूर्व जानकारी हो सकती है, जो आगे चलकर अपराध या अव्यवस्था को जन्म दे सकती है। नागरिकों से पुलिस को वांछित सहयोग दिलाने में भी धरातल पर

कार्यरत संस्थाओं का काफी योगदान हों सकता है। अन्य एजेन्सियों का सहयोग पुलिस की पारदर्शिता, परस्पर सहयोग की प्रवृत्ति एवं सद्भावना पर निर्भर करता है। उन्हे यह विश्वास दिलाना चाहिये कि उनके उद्देश्यों की पूर्ति हेतु या उनके संगठन या उसके सदस्यों के किसी अपराधिक या शांति-व्यवस्था संबंधी मामले में अंतर्ग्रस्त होने की दशा में पुलिस भी पूर्ण तत्परता से सहयोग एवं कार्यवाही करेगी। अपराधियों, विशेषकर संगठित या बार-बार अपराध करने वाले व्यक्तियों पर दबाब बनाने के लिए अनेक बार अन्य नियामक व्यवस्थाओं का सहांरा आवश्यक हो जाता है। नगरीय भूमि, आय व व्यापार कर, कारोबार के लाइसेंस या परमिट संबंधी कानूनों के प्रवर्तन द्वारा अपराध या अव्यवस्था में लिप्त व्यक्तियों के विरूद्व कार्यवाही अनेक बार संभव हो पाती है, जबकि अपराधिक कानून लागू करने के लिए आवश्यक साक्ष्य मौजूद नहीं रहता। ऐसे में सम्बन्धित प्रवर्तन एजेन्सियों से अच्छा तालमेल होने पर ही उनके माध्यम से ऐसा दबाव बनाया जा सकता है जिससे अपराधी को यह एहसास हो कि यदि वह अपराध या असामाजिक व्यवहार में लिप्त रहेगा तो सरकार के सभी प्रवर्तन विभाग उसकी गतिविधियों की विशेष निगरानी रखेंगे और कानून की पूरी ताकत उसके विरूद्व प्रयोग की जायेगी। लोक सेवा के कार्य में संलग्न विभिन्न राजनैतिक एवं सामाजिक संगठन, इनके जनता में सक्रिय कार्यकर्ताओं, तथा ग्राम पंचायत से लेकर विभिन्न स्तरों पर चुने गये जनप्रतिनिधियों के साथ उपयुक्त समन्वय से लोक-व्यवस्था की अनेक जटिल व विस्फोटक समस्याओं का हल निकालना संभव हो जाता है, क्योंकि स्थानीय रूप से सक्रिय होने के कारण इनकी बात का सामान्य नागरिकों पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। यह समन्वय किसी प्रकार की दलगत राजनीति से अप्रभावित रहने पर तथा परस्पर विश्वास और सहयोग से ही प्रभावकारी हो सकता है, जिसके लिये पुलिस का अपने दैनिक कार्यों में निष्पक्ष, उत्तरदायी एवं पारदर्शी होना आवश्यक है। श्रमिक, विद्यार्थी, वकील एवं व्यापारियों के संगठन व इनसे संबंधित सरकारी विभागों के साथ समन्वय औद्योगिक शांति व सार्वजनिक व्यवस्था बनाये रखने के लिए आवश्यक है। पुलिस का अन्य विभागों से संबंध या तालमेल कैसा है, जब यह प्रश्न उत्तरदाताओं से किया गया तो 16 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अच्छा, 68 प्रतिशत ने सामान्य, 07 प्रतिशत ने बुरा और 09 प्रतिशत ने यह बताया कि उन्हें इस संबंध में कोई जानकारी नहीं है। तृतीय उपकल्पना, 'पुलिस का अन्य विभागों से तालमेल अच्छा रहा है' आंशिक सिद्ध होती है। उत्तरदाताओं से प्राप्त तथ्यों को नीचे डायग्राम में प्रस्तुत किया जा रहा है-

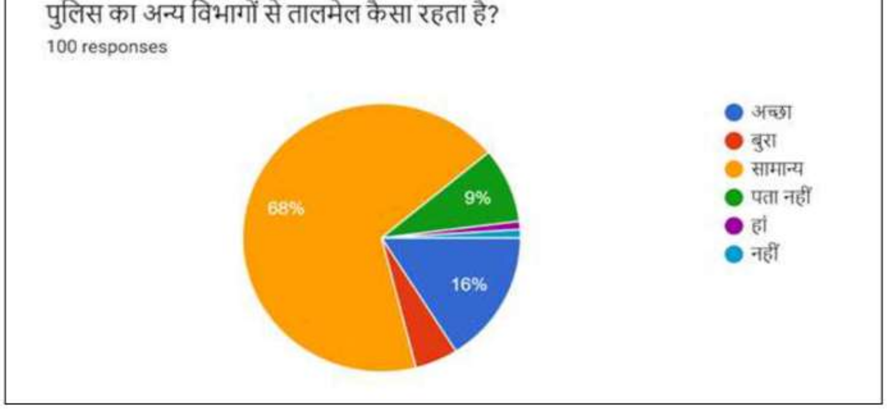

जनता के साथ पुलिस का सम्बन्ध- पुलिस का जनता के साथ संबंध हर स्थिति में सकारात्मक होना चाहिए पुलिस और जनता के बीच में कम्युनिकेशन गए गैप नहीं होना चाहिए जनता से संवाद स्थापित करने की क्षमता अधिकारियों को सफल बनाती है। संवाद से बड़ी से बड़ी चुनौतियों का सामना किया जा सकता है। जनता के साथ पुलिस का व्यवहार अत्यन्त महत्वपूर्ण है, क्योंकि पुलिस और जनता का आमना-सामना निरन्तर होता रहता है। पुलिसअधिकारियों को जनता के साथ मधुर व्यवहार करने और कानून के सही अनुपालन की भूमिका का निर्वाह करना चाहिए। पुलिस अधिकारियों को किसी भी चुनौती के दौरान भ्रम से हमेशा बचने का प्रयास करना चाहिए। पुलिस अधीक्षक स्तर के अधिकारी जन सुनवाई को प्रभावी बनाने के लिए नियमानुसार प्रतिदिन जनता से मिले। जनता उनके लिए इंटेलीजेन्स का प्रभावी स्रोत बन सकती है। मध्य प्रदेश के पुलिस रेगुलेशन के पैरा 329 में यह व्यवस्था की गई है कि पुलिसजनों को जनता के साथ सद्व्यवहार रखना चाहिये। उन्हें अपना व्यवहार मृदु रखते हुये अपना कार्य करना चाहिये। पुलिसकर्मियों को निर्दोष व्यक्तियों के साथ हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये। पुलिस रेग्यूलेशन के पैरा 431 में भी यह प्रावधान किया गया है कि किसी भी पुलिस अधिकारी को ऐसे किसी व्यक्ति से हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है, जिसने किसी विधि का उल्लंघन नहीं किया हो या किसी विधि के उल्लंघन का प्रयास नहीं किया हो। पुलिस का जनता के साथ संबंध कैसा है, जब यह प्रश्न उत्तरदाताओं से किया गया तो 42.4 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अच्छा और 57.6 प्रतिशत ने बुरा बताया, अधिकांश उत्तरदाताओं का यह कहना था कि जब किसी समस्या को लेकर पुलिस थाने पर जाते हैं तो उनके साथ व्यवहार अच्छा नहीं होता है। चतुर्थ उपकल्पना, 'पुलिस कर्मियों का जनता के साथ संबंध अच्छा रहा है' आंशिक सिद्ध होती है। उत्तरदाताओं से प्राप्त तथ्यों को नीचे डायग्राम में प्रस्तुत किया जा रहा है-

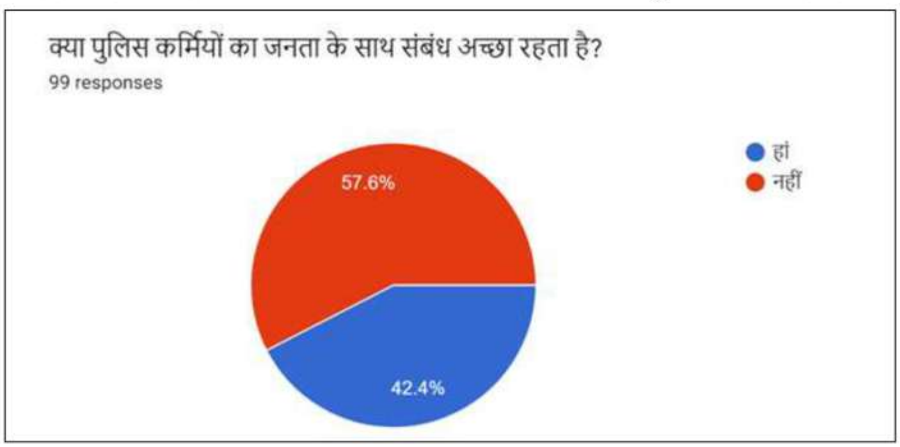

इस तरह अपराध नियंत्रण हेतु पुलिस अधिनियम तथा पुलिस रेग्यूलेशन में जो व्यवस्थायें की गयी हैं, उनका पालन करना प्रत्येक पुलिसकर्मी और अधिकारी का कर्तव्य है। ऐसा करते हुये वह अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह कर सकता है। बदलते परिवेश में मूलभूत पुलिस उद्देश्यों-जनता की जान-माल की सुरक्षा, शांति व्यवस्था की स्थापना, सभी नागरिकों के मानवाधिकारों एवं मानव गरिमा का संरक्षण को हांसिल करने के उपायों और तरीकों को बेहतर, अधिक प्रभावी तथा दक्ष बनाने के लिये सतत् प्रयत्नशील रहना

आवश्यक है। आबादियों के बदलते स्वरूप, शहरीकरण, तकनीकी विकास, तथा सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन के चलते सामाजिक नियंत्रण के विभिन्न उपायों में, जिनमें पुलिस व्यवस्था भी शामिल है, यथाआवश्यक बदलाव जरूरी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. डॉ. एस अखिलेश, (2018),पुलिस संबंध गायत्री, पब्लिकेशन, रीवा मध्य प्रदेश, पृष्ठ 88
2. ललितेश्वर, (1994), समग्र न्याय व्यवस्था में पुलिस का स्थान एवं भूमिका, बी.पी.आर. एण्ड डी., नई दिल्ली, 1994, पृष्ठ 247
3. शर्मा, राम कृष्ण दत्त एवं सविता, (2003),भारत में मानवाधिकार संरक्षण एवं पुलिस, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, नई दिल्ली, पृष्ठ 169.
4. न्यूजलेटर, मानव अधिकार, वर्ष 10, अंक 12, दिसम्बर 05, भोपाल, पृष्ठ 01.
5. ओपेन हाइम्स, इंटरनेशनल लॉ, खण्ड 1, 1992, पृष्ठ 847.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

महिला बाल विकास की समेकित योजनाओं का मूल्यांकन (रीवा नगर के विशेष संदर्भ में)

• निशा सिंह
•• के.के. शर्मा

सारांश- विकास की नवीन अवधारणा के अनुसार किसी भी देश की विकासीय स्थिति का मूल्यांकन मानव विकास सूचकों को (HDI) के आधार पर किया जाने लगा है और इसी पैमाने को संयुक्त राष्ट्रसंघ और विश्व बैंक जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने भी अपनाया है। इन सूचनाओं में शिशु मृत्यु दर (IMR), पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चों की मृत्यु दर (Under five mortality rate) मातृ मृत्यु दर (MMR) जन्म के समय जीवन प्रत्याशा (लाईफ एक्सपैक्टेन्सी एट बर्थ) साक्षरता दर और बच्चों का पोषण स्तर प्रमुख है। अनेक राष्ट्रीय स्तर के अध्ययनों एवं सर्वेक्षण से पता चलता है कि इन कसौटियों पर अन्य प्रदेशों की तुलना में हमारे प्रदेश की स्थिति कमजोर और चुनौतीपूर्ण है। यही कारण है कि प्रदेश शासन इन कसौटियों पर खरा उतरने के लिए महिलाओं और बच्चों के विकास और कल्याण को सर्वोच्च प्राथमिकता दे रहा है, जो कि देश की आबादी सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण हिस्सा है। प्रदेश में अनेक विभाग महिलाओं और बच्चों के विकास और कल्याण के लिए कार्यक्रम चला रहे हैं, किन्तु इनमें महिला एवं बाल विकास विभाग प्रमुख हैं जो कि न केवल स्वयं समेकित बाल विकास सेवा योजना जैसी विशाल योजना संचालित करता है, जिसकी पहुँच गाँव-गाँव तक है, अपितु विभिन्न विभागों के द्वारा उन वर्गो के लिए संचालित योजनाओं में पर्याप्त समन्वय भी स्थापित करता है।

मुख्य शब्द - महिला बाल विकास, साक्षरता, बच्चों का पोषण, कार्यक्रम,कल्याण, साक्षरता

प्रस्तावना - महिला एवं बाल विकास विभाग का गठन महिलाओं, बच्चों एवं किशोरी बालिकाओं के स्वास्थ्य, शिक्षा तथा सामाजिक एवं आर्थिक कल्याण के समग्र उद्देश्य को लेकर किया गया है। विभाग मानव विकास सूचकांको जैसे शिशु मृत्यु दर, मातृ मृत्यु दर, जन्म के समय जीवन प्रत्याशा, साक्षरता तथा बच्चों में कुपोषण के स्तर में सुधार हेतु निरंतर प्रयास कर रहा है। बालिकाओं हेतु लाड़ली लक्ष्मी योजना एवं 06 वर्ष के बच्चों के लिये मंगल दिवसो का कार्यक्रम तथा कुपोषण निवारण हेतु अटल बाल आरोग्य एवं पोषण मिशन इत्यादि कार्यक्रम जनमानस में लोकप्रिय हो रहे है। महिला एवं बाल विकास की योजनाओं की धुरी आंगनवाड़ी केन्द्र होती है एवं समस्त योजनाएँ एवं सेवाओं का क्रियान्वयन आंगनवाड़ी केन्द्र पर नियुक्त मानसेवी आंगनवाड़ी कार्यकर्ता एवं सहायिका

• जनभागीदारी शिक्षक, समाजशास्त्र विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा
•• विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

के द्वारा किया जाता है। विभाग द्वारा आंगनवाड़ी केन्द्रो के माध्यम से छः सेवायें दी जाती है। जो निम्नानुसार है –

1. पूरक पोषण आहार- 06 वर्ष से कम उम्र के गरीब बच्चों, गर्भवती व दूध पिलाने वाली माताओं तथा किशोरियों की पहचान हेतु समुदाय के सभी परिवारों का सर्वेक्षण किया जाता है तथा साल में कम से कम तीन सौ दिन पूरक पोषण आहार दिया जाता है। वर्तमान में 06 माह से 06 वर्ष तक के बच्चों को 4 रूपये प्रति बच्चा प्रतिदिन के मान से 12-15 ग्राम प्रोटीन एवं 500 कैलोरी युक्त पोषण आहार दिये जाने का प्रावधान है। गंभीर कुपोषित बच्चों को 6 रूपये प्रति बच्चा प्रतिदिन के मान से 20-25 ग्राम प्रोटीन एवं 800 कैलोरी युक्त पोषण आहार तथा गर्भवती/धात्री माताओं एवं किशोरी बालिकाओं को 5 रूपये प्रति हितग्राही प्रतिदिन के मान से 18-20 ग्राम प्रोटीन एवं 600 कैलोरी युक्त पोषण आहार दिये जाने का प्रावधान है।

2. स्वास्थ्य जाँच- प्रत्येक आंगनवाड़ी केन्द्र में प्रत्येक माह में किसी एक मंगलवार या शुक्रवार के दिन ए.एन.एम. तथा स्वास्थ्य कार्यकर्ता द्वारा महिलाओं तथा बच्चों की स्वास्थ्य जाँच की जाती है। स्वास्थ्य जाँच के आधार पर स्वास्थ्य में सुधार हेतु आवश्यक सलाह हितग्राहियों को दी जाती है।

3. संदर्भ सेवाएँ- स्वास्थ्य जाँच के आधार पर आवश्यक होने पर महिलाओं एवं बच्चों को खण्ड चिकित्सा अधिकारी अथवा विकासखण्ड/जिला स्तरीय चिकित्सालयों में रेफर किया जाता है।

4. टीकाकरण- प्रति आंगनवाड़ी प्रतिमाह किसी एक सप्ताह के कोई एक दिन टीकाकरण के लिये निर्धारित रहता है। उक्त दिवस में ए.एन.एम. द्वारा आंगगवाड़ी केन्द्र पर बच्चे, गर्भवती, महिलाओं का टीकाकरण किया जाता है।

5. पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा- आंगनवाड़ी कार्यकर्ता एवं ए.एन.एम. द्वारा उनके कार्यक्षेत्र में गृह भेट करने का प्रावधान है। गृह भेट के दौरान महिलाओं को प्राथमिक स्वास्थ्य की देखभाल तथा संतुलित भोजन के बारे में सलाह दी जाती है।

6. स्कूल पूर्व अनौपचारिक शिक्षा- आंगनवाड़ी केन्द्रों का मुख्य उद्‌देश्य बच्चों का मानसिक विकास करना भी है, जिससे वह प्राथमिक स्कूल में और बेहतर तरीके से शिक्षा प्राप्त कर सके। इसके लिए आंगनवाड़ी कार्यकर्ता द्वारा 3 से 6 वर्ष तक के बच्चों को खेल-खेल में शिक्षा दी जाती है। बच्चों को प्राकृतिक संसाधनों जेसे- जल, जंगल, जानवर इत्यादि के बारे में प्रारंभिक ज्ञान कराया जाता है। प्रत्येक आंगनवाड़ी केन्द्र में निर्धारित समय सारणी के अनुसार आंगनवाड़ी केन्द्रों को संचालन किये जाने के निर्देश दिये गये है।

विभाग द्वारा चलाई जा रही योजनाओं गतिविधियों व कार्यक्रमों को अधिक प्रभावशाली बनाने, आंगनवाड़ी केन्द्रों और जनसमुदाय के बीच आत्मीय संबंध बढ़ाने के लिए मंगल दिवस योजना प्रारंभ की गई है। मंगल दिवस में आंगनवाड़ी केन्द्रों पर माह के प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय तथा चतुर्थ मंगलवार को क्रमशः निम्नलिखित कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है-

1. गोद भराई कार्यक्रम- यह कार्यक्रम माह के प्रथम मंगलवार को आयोजित किया जाता है। इस कार्यालय में गाँव की गर्भवती महिलाओं को आंगनवाड़ी केन्द्र में आमंत्रित

कर आयरन, फौलिक एसिड की 100 गोलियाँ, शिशु एवं मातृ सुरक्षा कार्ड तथा गोद भराई कार्यक्रम में सम्मिलित गर्भवती महिला को मांगलिक सामग्री जैसे- श्रीफल, सिंदूर, चूड़ी, बिन्दी इत्यादि प्रतीक स्वरूप दी जाती है। साथ ही उन्हें गर्भावस्था में उचित आहार और देखभाल से संबंधित जानकारी दी जाती है।

2. अन्नप्राशन कार्यक्रम- अन्नप्राशन कार्यक्रम में आंगनवाड़ी कार्यकर्ता माह के द्वितीय मंगलवार को गांव की सभी गर्भवती/धात्री माताओं को आंगनवाड़ी केन्द्र पर आमंत्रित करती है तथा आंगनवाड़ी केन्द्र पर 06 माह पूर्ण करने वाले बच्चों को प्रथम बार ऊपरी आहार देती है। इस कार्यक्रम के आयोजन पर पात्र बच्चे को कटोरी - चम्मच प्रतीक स्वरूप दी जाती है। इस आयोजन में कितनी बार ऊपरी आहार दिया जाना है तथा यह किस प्रकार होना चाहिये इन महत्वपूर्ण मुद्दों पर माँ के साथ-साथ परिवार के अन्य सदस्यों को परामर्श भी दिया जाता है।

3. जन्म दिवस कार्यक्रम- जन्म दिवस कार्यक्रम माह के तीसरे मंगलवार को आयोजित किया जाता है। इस कार्यक्रम में माह विशेष में पड़ने वाले सभी बच्चों का आंगनवाड़ी स्तर पर सामूहिक जन्मदिन मनाया जाता है। कार्यक्रम के दौरान आंगनवाड़ी कार्यकर्ता सभी बच्चों का वजन लेकर रजिस्टर में दर्ज करती है। आयोजन के दौरान बच्चों को गिफ्ट के रूप में पेन्सिल, रबर, पानी की बॉटल इत्यादि प्रतीक स्वरूप दी जाती है।

4. किशोरी बालिका दिवस कार्यक्रम- किशोरी बालिका दिवस कार्यक्रम प्रत्येक माह के चौथे मंगलवार को मनाया जाता है। इस दिन आंगनवाड़ी केन्द्र पर दर्ज किशोरी बालिकाओं को संतुलित आहार, प्राथमिक स्वास्थ्य की देखभाल तथा आर्थिक गतिविधियों से संबंधित प्रशिक्षण दिया जाता है।

मध्यप्रदेश में पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चों में कुपोषण एक गम्भीर समस्या है। अपने प्रदेश का हर दूसरा बच्चा कुपोषित है। कुपोषण का सर्वाधिक असर माँ एवं बच्चों के सेहत पर होने से यह राज्य के विकास सूचकांकों को भी प्रभावित करता है। प्रदेश शासन ने कुपोषण को दूर करने हेतु इसे संकल्प के रूप में लिया है। राज्य से कुपोषण समाप्त करने हेतु दिनांक 14 मई 2010 को राज्य विधानसभा द्वारा अटल बाल आरोग्य एवं पोषण मिशन की स्थापना का संकल्प पारित किया गया व मिशन के क्रियान्वयन हेतु महिला एवं बाल विकास विभाग को नोडल विभाग घोषित किया गया है।

शोध का उद्देश्य- प्रदेश में महिला एवं बच्चों के स्वास्थ्य एवं पोषण की स्थिति में सुधार लाने हेतु आंगनवाड़ी केन्द्रों का जन भागीदारी के माध्यम से प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित करना। योजना अन्तर्गत जन सहयोग से बहुत सारी गतिविधियाँ अपेक्षित है। मुख्य रूप से बच्चों हेतु संचालित आंगनवाड़ी केन्द्रों का आकर्षक एवं सर्व सुविधा युक्त बनाने हेतु वर्तमान में संचालित आंगनवाड़ी केन्द्रों को संसाधनों से सुसज्जित करने की आवश्यकता है। इनके अन्तर्गत आंगनवाड़ी केन्द्रों के भवन की मरम्मत, बाउन्ड्रीवाल का निर्माण एवं रंगरोगन शामिल है। यही नहीं आंगनवाड़ी के बच्चों हेतु बाल सुलभ शौचालय एवं रंगबिरंगे आकर्षक खिलौने द्वारा बच्चों की शत् प्रतिशत उपस्थिति सुनिश्चित की जा सकती है।

निदर्शन पद्धति- अध्ययन को स्वरूप देने के लिए उद्देश्यपरक निर्देशन के अन्तर्गत रीवा नगर का चयन किया गया। शोधार्थी अपने शोध कार्य पूर्ण करने हेतु 20 किशोरियों

का चुनाव दैव निदर्शन विधि द्वारा किया है।

शोध उपकरण -

प्रश्नावली - अध्ययन को स्वरूप प्रदान करने के लिए रीवा के शहरी क्षेत्रों से प्रश्नावाली के माध्यम से उनकी राय और विचारों को जानने के प्रयास किया गया है। तथ्य संकलन के लिए प्रश्नावली का उपयोग किया गया है। जिसके माध्यम से प्रतिभागियों के विचारों को भी शोध में शामिल किया गया है।

अनुसूची- कुछ प्रतिभागियों को प्रश्नावली समझने में समस्या होने के कारण, उनसे राय और विचार जानने के लिए प्रश्नावली का उपयोग यहाँ अनुसूची के रूप में भी किया गया है।

तथ्य विश्लेषण एवं आंकड़ों का प्रस्तुतीकरण- किसी भी शोध में परिशुद्ध विश्वनीय एवं वैज्ञानिक निष्कर्ष तक पहुँचने के लिये आंकड़ों का संकलन किया जाता है क्योंकि यह शोध का आधार स्तम्भ होता है। आंकड़ों के संकलन का कार्य जितनी सावधानी व तत्परता से किया जाता है। शोध का परिणाम उतना ही सार्थक निकलता है।

तालिका क्रमांक 01

विवाह की सही उम्र संबंधी विचार

क्र.	विचार	संख्या	प्रतिशत
1.	16-18 वर्ष	03	15
2.	18-20 वर्ष	05	25
3.	20-24 वर्ष	08	40
4.	उससे भी ज्यादा	04	20
योग		20	100

उपर्युक्त तालिका क्रमांक 01 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 03 उत्तरदाता विवाह की सही उम्र 16-18 को मानती है, जिनका प्रतिशत 15 है, 05 उत्तरदाता 18-20 वर्ष की उम्र को सही मानते है, जिनका प्रतिशत 25 है, 08 उत्तरदाता जो 20-24 वर्ष की उम्र को सही मानते है, जिनका प्रतिशत 40 है और 04 उत्तरदाता उससे भी ज्यादा उम्र होनी चाहिये, जिनका प्रतिशत 20 है। अर्थात् ज्यादा उत्तरदाता 20-24 के बीच विवाह की सही उम्र बताते है।

तालिका क्रमांक 02

किशोरी बालिका किसे कहा जाता है के संबंध में

क्र.	विचार	संख्या	प्रतिशत
1.	11-18 वर्ष	10	50
2.	18-20 वर्ष	08	40
3.	20-24 वर्ष	02	10
4.	अन्य	0	0
योग		20	100

उपर्युक्त तालिका क्रमांक 02 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 10 उत्तरदाताओं ने किशोरी बालिका 11-18 वर्ष की आयु तक की बालिकाओं को कहा जाता है जिनका प्रतिशत 50 है और 08 उत्तरदाताओं ने बताया कि 18-20 वर्ष की

बालिका को किशोरी बालिका कहा जाता है जिनका प्रतिशत 40 है और 02 उत्तरदाताओं ने 20–24 वर्ष की बालिकाओं को किशोरी कहा जाता है जिनका प्रतिशत 10 है। अर्थात किशोरी के संबंध में समस्त उत्तरदाताओं को जानकारी नहीं है कि उन्हें किस उम्र से किशोरी कहा जाता है। अर्थात् इस संबंध में जागरूकता का अभाव देखा गया।

तालिका क्रमांक 03
किशोरी बालिकाओं में खून की कमी के संबंध में विचार

क्र.	जानकारी	संख्या	प्रतिशत
1.	हॉ	08	40
2.	नहीं	12	60
योग		20	100

उपर्युक्त तालिका क्रमांक 03 के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कि किशोरी बालिकाओं में खून की कमी पाया गया कि 08 लाभार्थियों को इसकी जानकारी है जिनका 40 है और 12 लाभार्थियों को यह जानकारी नहीं है कि खून की कमी क्यों हो जाती हैं जिनका प्रतिशत 60 है, अर्थात् किशोरियों में जागरूकता का अभाव पाया गया है।

तालिका क्रमांक 04
खून की कमी के पूर्ति के संबंध में जानकारी संबंधी विचार

क्र.	जानकारी	संख्या	प्रतिशत
1.	हॉ	06	30
2.	नहीं	14	70
योग		20	100

उपर्युक्त तालिका विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि उत्तरदाताओं को खून की कमी की पूर्ति कैसे की जा सकती है के संबंध में विचार जाना गया तो 06 उत्तरदाताओं को जानकारी है जिनका प्रतिशत 30 है और 14 उत्तरदाताओं को इसकी पूर्ति के संबंध में कोई जानकारी नहीं है। अर्थात् किशोरियों को इसकी जानकारी नहीं है कि उनमें खून की कमी को कैसे दूर किया जा सकता है।

तालिका क्रमांक 05
आंगनवाड़ी केन्द्र के माध्यम से प्रशिक्षण संबंधी विचार

क्र.	जानकारी	संख्या	प्रतिशत
1.	हॉ	05	25
2.	नहीं	15	75
योग		20	100

उपर्युक्त तालिका विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि आंगनबाड़ी में प्रशिक्षण प्राप्त संबंधी विचार जाना गया तो 05 उत्तरदाताओं ने विचार चक्र दिया कि प्रशिक्षण कराया जाता है लेकिन 15 उत्तरदाताओं ने बताया कि कोई प्रशिक्षण प्राप्त नहीं कराया जाता है, जिनका प्रतिशत 75 प्रतिशत है। अर्थात् आंगनबाड़ी केन्द्रों में अब भी प्रशिक्षण संबंधी व्यवस्था की कमी है।

निष्कर्ष- शोधार्थी अपने शोध कार्य पूर्ण करने हेतु 20 किशोरियों का चुनाव दैव निदर्शन विधि द्वारा किया है और उनसे विवाह की सही उम्र के संबंध में जाना गया तो सर्वाधिक 20-24 वर्ष के बीच के समय को उपयुक्त मानती है। जिनका प्रतिशत 40 है जबकि अपने विषय की स्पष्टता हेतु उत्तरदाताओं से पूँछा गया कि किशोरी बालिका किस उम्र - समूह की बालिकाओं को किशोरी कहा जाता है तो 11-18 वर्ष की बालिकाओं हेतु 50 प्रतिशत उत्तरदाताओं बालिकाओं को इसका ज्ञान नहीं है, कि वास्तव में किशोरी बालिका किस उम्र समूह की बालिकाओं को कहा जाता है तथा किशोरियों को खून की कमी हो जाती है के संबंध में जाना गया तो 60 प्रतिशत उत्तरदाताओं को इसकी जानकारी नहीं है। मात्र 40 प्रतिशत उत्तरदाताओं को इसकी जानकारी है। किन्तु खून की कमी पूर्ति के संबंध में जानकारी प्राप्त है कि नही के संबंध में जाना गया तो मात्र 30 प्रतिशत उत्तरदाताओं को जानकारी और 70 प्रतिशत को इसकी कोई जानकारी नही है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

- पाण्डे तेजस्कर, पाण्डेय ओजस्कर (2009) समाज कार्य भारत बुक सेंटर 17, अशोक मार्ग, लखनऊ
- गुप्ता एम.एल, शर्मा डी.डी. (1998) समाजशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा
- शक्ति महिला एवं बाल विकास विभाग, मध्यप्रदेश शासन द्वारा प्रकाशित सं. क्रं. 1865/23 जुलाई 2019
- भारतीय महिला स्वास्थ एवं पोषण - महिला एवं बाल विकास मध्यप्रदेश शासन द्वारा प्रकाशित सं. क्रं. 1865/23 जुलाई 2018
- स्वस्थ्य बच्चे भारत का भविष्य - महिला बाल विकास विभाग, मध्यप्रदेश शासन द्वारा प्रकाशित सं. क्र. 1865/23 जुलाई 2019
- जागृति - महिला बाल विकास विभाग, मध्यप्रदेश शासन द्वारा प्रकाशित स. क्र. 1865/23 जुलाई 2016
- समाचार पत्र - दैनिक भास्कर
- दैनिक जागरण

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

असंगठित क्षेत्र के फुटकर/पथ विक्रेताओं की स्थिति एवं शासकीय प्रयास एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

•अखिल यदु

सारांश- फुटकर/पथ विक्रेता दैनिक आय प्राप्तकर्ता की श्रेणी में आते हैं तथा सरकार के प्राथमिकता के तत्वों में रोजगार को भी सम्मिलित किया गया हैं। अधिकांशः देखा गया हैं, कि फुटकर विक्रेताओं के व्यावसायिक गतिविधियों हेतु महानगरों में कुछ विशेष नियम का प्रावधान किया गया हैं, परन्तु छत्तीसगढ़ जैसे विकासशील राज्यों में ऐसे नियमों एवं विनियमों का अभाव देखा गया है। फुटकर विक्रेता हमारे देश के महत्वपूर्ण मानव संसाधन हैं, भले ही वे असंगठित क्षेत्र में आते क्यो न हो। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिए उनका योगदान अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। इसके अतिरिक्त यह एक व्यापक रूप से सहमत तथ्य हैं कि फुटकर व्यवसाय केवल वंचितों को स्वरोजगार का साधन नही बल्कि जनसमुदाय के लिए सस्ती एवं उपयुक्त सुविधाओं के प्रावधान को भी शामिल करता हैं। कम कौशल तथा कम साक्षरता दर के साथ फुटकर विक्रेता अपने जीवन में शहरी आर्थिक मांगों के बड़े हिस्से को पूरा करने के लिए लम्बे संघर्ष में स्वयं को संलग्न करते हैं। फुटकर विक्रेताओं के सम्बन्ध में सकारात्मक गतिविधियां प्रत्यक्ष रूप से सामने नही आती, अपितु उनके विरूद्ध नकारात्मक गतिविधियां जैसे मानसिक शोषण, अवैध वसूली, व्यावसायिक स्थलों से उनको निकाला जाना, अथवा उन्हे व्यवसाय करने ही नही दिया जाना इत्यादि प्रत्यक्ष रूप में दिखाई देती हैं। सार्वजनिक नीतियां, शासकीय कानून एवं बेहतर ऋण सुविधाओं तक पहुंच निश्चित रूप से फुटकर विक्रेताओं की स्थिति में सुधार कर सकती हैं।

मुख्य शब्द - फुटकर पथ विक्रेता, असंगठित क्षेत्र, शासकीय प्रयास, व्यावसायिक गतिविधि

प्रस्तावना - फुटकर व्यवसाय भारत में प्राचीन काल से मौजूद हैं। आज भारत ही नही, बल्कि पूरे विश्व में सभी शहरों में फुटकर व्यवसाय एक आम घटना हैं। सड़क पर व्यवसाय करने का अभ्यास शायद सदियों पहले शुरू हो गया था। उन शुरूआती दिनों में, दैनिक घरेलू आवश्यकता के विभिन्न समानों को घर-घर अथवा शहरों के एक इलाकों से दूसरे इलाकों में सामान का विक्रयकिया जाता था। आधुनिक विशिष्टीकरण प्रधान अर्थव्यवस्था में विपणन के क्षेत्र में फुटकर विक्रेता का विशेष महत्व हैं, फुटकर विक्रेता विपणन पंक्ति की वह कड़ी हैं, जो विपणन के अन्तिम बिन्दु अर्थात उपभोक्ता से इसे जोड़ती है, फुटकर विक्रेता उपभोक्ताओं के सबसे अधिक समीप होने के कारण उपभोक्ताओं की मांगों, रूचियों, व क्रय शक्ति के विषय में सबसे अधिक जानकारी रखते हैं तथा इसके आधार पर निर्माताओं को वस्तु के उत्पादन के बारे में बहुमूल्य सुझाव प्रदान कर सकते हैं।

• शोधार्थी, शासकीय जे. योगानन्दम छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

भारत में 1.25 करोड़ फुटकर व्यवसायिक इकाईयॉ हैं, फुटकर व्यवसाय के क्षेत्र में वर्तमान में कुल 22.5 लाख करोड़ रूपयों का वार्षिक कारोबार होता हैं।[1] इसमें लगभग 3 प्रतिशत अंश वृहद स्तरीय फुटकर व्यापार श्रृंखलाओं का हैं। अन्यथा फुटकर व्यापार के क्षेत्र में शेष लगभग 96 से 97 प्रतिशत कारोबार लघु स्तरीय फुटकर विक्रेताओं के द्वारा सम्पादित किया जाता हैं।[2] फुटकर विक्रेता, भारतीय शहरों का एक महत्वपूर्ण खण्ड बनाते हैं, क्योंकि वे बेहतर लागत एवं सुविधाजनक स्थानों पर सामान तथा सेवाएं प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त फुटकर व्यवसाय शहरों में रोजगार के बहुत सारे अवसर प्रदान कर रहे हैं। राष्ट्रीय शहरी आजीविका मिशन (एनयूएलएम) के तहत भारत सरकार फुटकर विक्रेताओं की सुरक्षा एवं फुटकर अधिनियम के कार्यान्वियन के लिए 5 प्रतिशत फंड प्रदान करती हैं।[3]

असंगठित क्षेत्र- रोजगार क्षेत्र को प्रमुखतः दो भागो में विभाजित किया जाता हैं। औपचारिक या संगठित क्षेत्र तथा अनौपचारिक या असंगठित क्षेत्र। वे सभी उद्यम या रोजगार क्षेत्र जो सरकार द्वारा पंजीकृत तो होते हैं, इनके नियम तथा विनियम भी होते हैं, परन्तु उनका अनुपालन नही किया जाता हैं, असंगठित क्षेत्र कहलाते हैं। संचालनालय, नगर तथा ग्राम निवेश, रायपुर (छ.ग.)[4] के अनुसार रोजगार की तलाश में अथवा आर्थिक उन्नति के लिए आशान्वित बेरोजगार या सीमित रूप से रोजगार से जुड़े कर्मी असंगठित क्षेत्र का निर्माण करते हैं। यह वर्ग बहुत कम अधोसंरचना सेवा एवं नगरीय स्थल की अपेक्षा रखता हैं व नगर की आर्थिक गतिविधियों में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता हैं। आवासीय क्षेत्रों के लिए ये सेवा से संबंद्ध व्यक्ति की भांति ही कार्यरत रहते हैं। असंगठित वर्ग के लोग, प्रमुख कार्य केन्द्रो, वाणिज्यिक क्षेत्रों, शैक्षणिक एवं स्वास्थ्य संस्थाओं के परिसरों के बाहर, यातायात केन्द्रो एवं बड़े आवास समूहो के समीपस्थ योजनाबद्ध ढ़ंग से निवास करते हैं। केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन (CSO)[5] असंगठित क्षेत्र की परिभाषा में ऐसे उद्यमों को शामिल करता हैं, जिनमें यदि मशीनी बल का प्रयोग न किया जाता हो व 20 से अधिक कर्मचारी काम न करते हो तथा यदि मशीनी बल का प्रयोग हो रहा हो तो 10 कर्मचारियों से अधिक काम न करते हों। इन उद्यमों में रोजगार प्राप्त करने वाले किसी कानून के अधीन जैसे औद्योगिक विवाद कानून (1948)[6] के अधीन पंजीकृत नही होते। राष्ट्रीय लेखा प्रणाली के अनुसार इन रोजगारियों को असंगठित क्षेत्र में शामिल किया जाता हैं। असंगठित क्षेत्र में निजी व अनियमित क्षेत्र के सभी उद्यम शामिल किये जाते हैं, जिनका स्वामित्व व्यक्तियों या परिवारों में होता हैं तथा जो एक व्यक्ति स्वामित्व या साझेदारी आधार पर वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन एवं विक्रयका कार्य करते हैं तथा जिनमें 10 से कम व्यक्ति कार्यरत होते हैं।

राष्ट्रीय आयोग[7] ने असंगठित रोजगार की परिभाषा इस प्रकार की हैं, "असंगठित श्रमिकों में वे सभी शामिल किये जाते हैं जो असंगठित उद्यमों या परिवारों में कार्य करते है इनमें ऐसे व्यक्ति शामिल नही किये जाते जिन्हे सामाजिक सुरक्षा लाभ प्राप्त हो तथा इनमें ऐसे रोजगारियों को भी शामिल किये जाते हैं, जो औपचारिक क्षेत्र में रोजगार प्राप्त हैं, परन्तु नियोजकों द्वारा रोजगार अथवा सामाजिक सुरक्षा से वंचित रखे जाते हैं।" भारत में करीब 81 प्रतिशत, कार्यरत व्यक्ति असंगठित क्षेत्र में काम करके अपना जीवन यापन

करते हैं, वहीं संगठित क्षेत्र मे केवल 6.5 प्रतिशत तथा घरेलू क्षेत्र में 0.8 प्रतिशत व्यक्ति काम करते हैं। पांच दक्षिण एशियाई देशों में, भारत तथा नेपाल (90.7 प्रतिशत), बांग्लादेश (48.9प्रतिशत),श्रीलंका(60.6प्रतिशत)एवं पाकिस्तान(77.6 प्रतिशत)असंगठिकरण में सर्वोच्च हैं। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार सबसे अधिक संगठित रोजगार 13.5 प्रतिशत बांग्लादेश में हैं, परन्तु यहां सर्वोच्च घरेलू रोजगार 26.7 प्रतिशत हैं।[8] Women and Men in the informal Economy – A Statistical Picture (Third"s edition)[9] की रिपोर्ट के अनुसार लगभग 130 करोड़ लोग या एशिया प्रशांत में कार्यरत आबादी के 68.2 प्रतिशत असंगठित अर्थव्यवस्था से जुड़े हुए हैं। एशिया प्रशांत क्षेत्र में सभी कृषि रोजगार (94.7 प्रतिशत) असंगठित में आते हैं व दक्षिण एशिया में कृषि रोजगार 99.3 प्रतिशत तक असंगठित हैं। वहीं औद्योगिक क्षेत्र में, असंगठित नौकरियां 68.8 प्रतिशत हैं, जो सेवा क्षेत्र की असंगठित नौकरियों से 54.1 प्रतिशत से भी अधिक हैं। विकासशील देशों में असंगठित रोजगार ही रोजगार का मुख्य स्त्रोत हैं। भारत सरकार आर्थिक सर्वेक्षण 2018-1010 द्वारा कहा गया हैं, कि आधिकारिक अनुमानों की तुलना में अर्थव्यवस्था में संगठित क्षेत्र की नौकरियॉं कई अधिक हैं, सामाजिक सुरक्षा तथा कर कवरेज जैसे दो मापदंडो का उपयोग करते हुए सर्वेक्षण ने यह अनुमान लगाया गया हैं कि संगठित क्षेत्र की नौकरियां, गैर कृषि क्षेत्र में श्रमिक संख्या के 31 प्रतिशत व 54 प्रतिशत के मध्य हो सकती हैं। सामाजिक सुरक्षा लाभ प्राप्त करने वाले कर्मचारियों या कर शुद्ध परिप्रेक्ष्य का सर्वेक्षण करने पर ज्ञात होता हैं कि देश में अभी कुल 87 प्रतिशत व्यवसाय, कुल कारोबार के 21 प्रतिशत का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो कि विशुद्ध रूप से अनौपचारिक हैं एवं कर व सामाजिक सुरक्षा जाल दोनों से बाहर हैं।[10]

फुटकर/पथ विक्रेता- फुटकर विक्रेता वह व्यावसायिक इकाई होती हैं, जो वस्तुओं एवं सेवाओं को सीधे अंतिम उपभोक्ताओं को बेचते हैं। यह थोक विक्रेताओं से बड़ी मात्रा में माल को क्रय कर उन्हे अंतिम उपभोक्ताओं को थोड़ी-थोड़ी मात्रा में बेचते हैं। ये वस्तुओं के वितरण श्रृंखला की अंतिम कड़ी होती हैं।[11] वे निर्माणकर्ताओं/बड़े व्यापारियों से वस्तुओं को लेकर अंतिम उपभोक्ताओं अथवा उपयोगकर्ताओं को हस्तांतरित कर देते हैं। फुटकर व्यापार इस प्रकार से व्यवसाय की वह कड़ी हैं जो अंतिम उपभोक्ताओं को उनके व्यक्तिगत उपयोग एवं गैर व्यावसायिक उपयोगों या विक्रयका कार्य करती हैं। पथ विक्रेता (जीविका संरक्षण और पथ विक्रय विनियमन) अधिनियम, 2014 के अध्याय 1 खण्ड 2 (ठ)[12] के अनुसार ''पथ विक्रेता/फुटकर विक्रेता'' से ऐसे व्यक्ति अभिप्रेत हैं, जो किसी पथ, गली, पार्श्व मार्ग, पैदल पथ, सड़क की पटरी, सार्वजनिक पार्क या किसी अन्य सार्वजनिक स्थान अथवा प्राइवेट क्षेत्र में किसी अस्थायी निर्मित संरचना से या एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमकर प्रतिदिन के उपयोग की वस्तुएं, माल, सामान, खाद्य पदार्थ या सौदा बेचने अथवा जनसाधारण को सेवाएं प्रदान करने में लगा हुआ है और इसके अंतर्गत हॉकर, खोमचे वाला, बैठकर बेचने वाला और ऐसे अन्य सभी समानर्थक पद आते हैं जो किसी स्थान या क्षेत्र विशेष के आपेक्षिक हैं और ''पथ विक्रय'' शब्दों का उनके व्याकरणिक रूपभेदो और सजातीय पदों के साथ तद्नुसार अर्थ लगाया जावेगा। इस अधिनियम में पथ विक्रेता/फुटकर विक्रेता को दो अर्थो में लिया गया हैं, पथ विक्रेता

(जीविका संरक्षण और पथ विक्रय विनियमन) अधिनियम, 2014 के अध्याय 1 खण्ड 2 (घ)[13] के अनुसार "चल विक्रेता" से ऐसे पथ विक्रेता अभिप्रेत हैं जो अभिहित क्षेत्र में अपने माल और अपनी सेवाओं का विक्रयकरते हुए एक स्थान से दूसरे स्थान पर चलते-फिरते विक्रय क्रियाकलाप करते हैं। पथ विक्रेता (जीविका संरक्षण और पथ विक्रय विनियमन) अधिनियम, 2014 के अध्याय 1 खण्ड 2 (ट)[14] के अनुसार "स्थिर विक्रेता" से ऐसे पथ विक्रेता अभिप्रेत हैं, जो किसी विनिर्दिष्ट अवस्थान पर नियमित आधार पर विक्रयसंबंधी क्रियाकलाप करते हैं।

माल को बेचने की कई विधि हो सकती हैं, जैसे - व्यक्तिगत रूप से टेलीफोन पर या फिर बिक्री मशीनों के माध्यम से। उत्पादों को अलग-अलग स्थानों पर बेचा जा सकता हैं जैसे - स्टोर मे, ग्राहक के घर जाकर या फिर अन्य किसी स्थान पर। कुछ सार्वजनिक स्थान भी हैं जैसे - रोडवेज की बसो में बॉल प्वांइट पेन या फिर जादुई दवा या फिर चुटकुलों की पुस्तक की बिक्री, घर-घर जाकर प्रसाधन का सामान, कपड़े धोने का पाउडर आदि बेचना या फिर किसी छोटे किसान द्वारा सड़क किनारे सब्जी की बिक्री, लेकिन यह सब अंतिम उपभोक्ता को बेची जाती हैं, इसलिए यह भी फुटकर व्यापार में सम्मिलित हैं। अतः हम कह सकते हैं कि वस्तुओं का विक्रय कैसे किया जाता हैं या फिर कहां किया जाता हैं यह कोई अर्थ नही रखता, यदि बिक्री सीधी उपभोक्ता को की गई हैं, तो यह फुटकर विक्रय कहलाएगा। एक फुटकर विक्रेता वस्तुओं एवं सेवाओं के वितरण के कई कार्य करता हैं। वह थोक विक्रेताओं एवं अन्य लोगों से विभिन्न वस्तुएं खरीदता हैं, वस्तुओं का उचित रीति से भंडारण करता हैं, थोड़ी-थोड़ी मात्रा में माल बेचता हैं, व्यवसाय की जोखिमों को उठाता हैं, वस्तुओं का श्रेणीकरण करता हैं, बाजार से सूचनाएँ एकत्रित करता हैं, केताओं को उधार की सुविधा देता हैं, प्रदर्शन तथा विभिन्न योजनाओं में भाग लेकर या अन्य तरीका अपनाकर वस्तुओं की बिक्री को बढ़ाता हैं। मुख्यमंत्री आर्थिक कल्याण योजना[15] के अनुसार फुटकर विकेता "किन्ही वस्तुओ, माल, मिट्टी के बर्तन, खाद्य पदार्थ या प्रतिदिन उपयोग में आने वाली वाणिज्यिक वस्तुओं के पथ विक्रयमें लगा हुआ या आम जनता को किसी पथ, पार्श्वमार्ग, फुटपाथ, सार्वजनिक पार्क या किसी अन्य सार्वजनिक स्थान से या निजी क्षेत्र या अस्थायी रूप से निर्मित किसी संरचना से या एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूम-घूम कर सेवाएं देने वाला व्यक्ति सम्मिलित हैं।"

थोक मण्डी के अन्तर्गत भी फुटकर मण्डी पायी जाती हैं क्योकि बहुत से फुटकर विक्रेता थोक मण्डी की सीमा के अन्तर्गत ही व्यापार करते है। मण्डी से दूर की फुटकर दुकानों की अपेक्षा थोक मण्डी की दुकानों की वस्तुएं कुछ सस्ती प्राप्त होती हैं, क्योंकि मण्डी के फुटकर विक्रेताओं को चुंगी, परिवहन तथा कुछ अन्य मण्डी में होने वाले खर्चो को नही करना पड़ता हैं। उदाहरण के लिए छत्तीसगढ़ के रायपुर शहर से शास्त्री बाजार सब्जी मण्डी में इसी तरह के फुटकर व्यापारी व्याप्त हैं।

National Policy on Urban Street Vendor, 2004,[16] ने फुटकर विक्रेता की परिभाषा दी हैं, जिसके अनुसार " एक व्यक्ति जो स्थायी रूप से निर्मित संरचना के बिना, परंतु एक अस्थायी स्थैतिक संरचना अथवा मोबाइल स्टाल के बिना जनता को

बिक्री के लिए सामान या सेवाएं प्रदान करता हैं।'' फुटकर विक्रेता क्रय किये गये पदार्थो को प्राय: अपनी दुकानों में ही संग्रहण करते हैं तथा उपभोक्ताओं को ऐसी कीमत पर बेचने का प्रयास करते हैं। जिससे स्वयं के द्वारा लगायी गई विपणन सम्बन्धी लागतों के अलावा उसे पर्याप्त लाभ की भी प्राप्ति हो।

फुटकर विक्रेताओं के विक्रय परिक्षेत्र- फुटकर विक्रेताओं के विक्रयपरिक्षेत्र को निम्नलिखित चार वर्गों में विभाजित किया गया है–[17]

- प्रतिबंध मुक्त विक्रय परिक्षेत्र (ग्रीन जोन)– इससे आशय नगरीय निकाय द्वारा निर्धारित किए गये मुक्त विक्रय परिक्षेत्र से हैं।
- प्रतिबंधित विक्रय परिक्षेत्र (यलो जोन)– इससे आशय नगरीय निकाय द्वारा अंशकालिक रूप से निर्धारित समय सीमा में घोषित विक्रय परिक्षेत्र से है।
- विक्रय निषिद्ध परिक्षेत्र (रेड जोन)– इससे आशय नगरीय निकाय द्वारा घोषित पूर्णत: प्रतिबंधित विक्रय परिक्षेत्र से हैं।
- चलित विक्रय क्षेत्र– ऐसे क्षेत्र जहाँ पर पथ विक्रेता घूम–घूमकर व्यवसाय कर सकते हैं, परन्तु किसी भी स्थिति में खड़े होकर व्यवसाय करना निषिद्ध होगा।

फुटकर विक्रेताओं का वर्गीकरण भारत में कई प्रकार के फुटकर विक्रेता होते हैं। इनको भली भांति समझने के लिए कुछ वर्गो में विभक्त करना उपयुक्त रहेगा। विशेषज्ञों ने फुटकर विक्रेताओं को विभिन्न प्रकारों में बॉटने के लिए लिए विभिन्न वर्गीकरणों का सहारा लिया हैं।

व्यावसायिक आकार के आधार पर- बड़े, मध्यम एवं छोटे फुटकर व्यापारी।

स्वामित्व के आधार पर- एकाकी व्यापारी, साझेदारी फर्म, सहकारी स्टोर एवं कंपनी।

बिक्री की पद्धति के आधार पर- विशिष्ट दुकाने, सुपर बाजार, अथवा विभागीय भण्डार।

फुटकर विक्रेताओं के विक्रयप्रमाण पत्र जारी किए जाने की शर्तें[18]

फुटकर विक्रेताओं के लिए विक्रय प्रमाण पत्र नगर विक्रय समिति द्वारा जारी किया जाता हैं तथा नगर विक्रय समिति पथ विक्रेता (जीविका संरक्षण और पथ विक्रय विनियमन) अधिनियम, 2014 की धारा (4) के अधीन (1) इस बात का एक वचनबंध करेगा कि –

(क) वह स्वयं या अपने कुटंब के सदस्य के माध्यम से पथ विक्रयका कारोबार करेगा,

(ख) उसके पास जीविका के कोई और साधन नही हैं,

(ग) वह, किराया, विक्रय प्रमाण पत्र को या उसमें विनिर्दिष्ट स्थान को किसी भी रीति से, चाहे वह कोई भी हो, जिसके अंतर्गत किराए पर देना भी हैं किसी अन्य व्यक्ति को अन्तरित नही करेगा–

(2) जहां ऐसे किसी पथ विक्रेता की, जिसको विक्रय प्रमाण पत्र जारी किया जाता हैं, मृत्यु हो जाती है या वह किसी स्थायी नि:शक्तता से ग्रस्त हो जाता हैं या बीमार हो जाता हैं, वहां उसके कुटंब का काई एक सदस्य निम्नलिखित पूर्विकता के क्रय में उसके स्थान पर विक्रय प्रमाण पत्र की विधिमान्यता तक विक्रयकार्य कर सकेगा –

(क) पथ विक्रेता का पति या पत्नी

(ख) पथ विक्रेता का आश्रित बालक

फुटकर विक्रेताओं के अधिकार- प्रत्येक फुटकर विक्रेता को विक्रय प्रमाण पत्र में वर्णित निबंधनों एवं शर्तो के अनुसार फुटकर विक्रय क्रियाकलापों का कारोबार करने का अधिकार होगा।

पथ विक्रेता (जीविका संरक्षण और पथ विक्रय विनियमन) अधिनियम, 2014 (2) उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, जहां, यथास्थिति, किसी क्षेत्र या स्थान को विक्रयनिषेध जोन के रूप में चिन्हिांकित किया गया हैं। वहां कोई भी फुटकर विक्रेता उस जोन में विक्रय संबंधी कोई क्रियाकलाप नही करेगा।

पुनःस्थापन पर नवीन स्थल या क्षेत्र के लिए फुटकर विक्रेता का अधिकार- प्रत्येक ऐसा फुटकर विक्रेता जिसके पास विक्रय प्रमाण पत्र हैं, पथ विक्रेता (जीविका संरक्षण और पथ विक्रय विनियमन) अधिनियम, 2014 की धारा 18 के अधीन उसके पुनः स्थापन की दशा में, अपने ऐसे विक्रय क्रियाकलाप करने के लिए, यथास्थिति, नवीन स्थल या क्षेत्र का हकदार होगा, जो स्थानीय प्राधिकारी द्वारा नगर विक्रय समिति के परामर्श से अवधारित किए जाए।

फुटकर विक्रेताओं का कर्तव्य- जहां कोई फुटकर विक्रेता समय-विभाजन के आधार पर किसी स्थल का अधिभोग रखता हैं, वहां वह प्रतिदिन, उसे अनुज्ञात समय विभाजन अवधि की समाप्ति पर, अपने माल एवं समान को हटा लेगा।

सफाई एवं सार्वजनिक स्वच्छता को बनाए रखना- प्रत्येक फुटकर विक्रेता, विक्रयजोनों एवं उससे लगे हुए क्षेत्रों में सफाई एवं सार्वजनिक स्वच्छता को बनाए रखेगा।

विक्रयजोन मे नागरिक सुख-सुविधाओं को अच्छी दशा में बनाए रखना- प्रत्येक फुटकर विक्रेता, विक्रयजोन में नागरिक सुख-सुविधाओं और सार्वजनिक संपत्ति को अच्छी दशा में बनाए रखेगा तथा उसे नुकसान नही पहुंचाएगा अथवा नष्ट नही केरगा।

अनुरक्षण प्रभारों का संदाय- प्रत्येक फुटकर विक्रेता, विक्रयजोन में उपलब्ध कराई गई नागरिक सुख-सुविधाओं और सुविधाओं के लिए समय-समय पर ऐसे अनुरक्षण प्रभारों का संदाय करेगा जो स्थानीय प्राधिकारी द्वारा अवधारित किए जाएं।

फुटकर विक्रेताओं की समस्याएं- फुटकर विक्रेता अनेक समस्याओं का सामना स्वयं करते हैं, क्योंकि वे कमजोर आर्थिक पिछड़े वर्ग के लोग हैं। श्रम संघों के कानूनों एवं अधिकारों के प्रयोग से वे वंचित हैं। इसके अतिरिक्त बाजार की कीमतों की अस्थिरता, एवं बाजार के अनिश्चित स्थान पर भी संकट के कारण फुटकर विक्रेता प्रत्येक समय सघंर्षरत रहते हैं। फुटकर विक्रेताओं को अपनी दैनिक आय का 15-20 प्रतिशत स्थानीय पुलिस अथवा नगरीय निकाय अधिकारियों को देना पड़ता हैं, जो उनकी दैनिक आय में कमी के कारण हैं। फुटकर विक्रेता आमतौर पर सार्वजनिक स्थानों के उल्लंघन से जुड़े होते हैं, जो यातायात की भीड़, अपर्याप्त स्वच्छता एवं खराब अपशिष्ट निपटान का कारण बनते हैं। हालांकि सरकार द्वारा Street Vendors Bill 2013 एवं पथ विक्रेता (जीविका संरक्षण और पथ विक्रय विनियमन) अधिनियम, 2014 पारित तो कर दिए गए हैं, परन्तु इनका पालन फुटकर विक्रेताओ के पक्ष में परिलक्षित नही हो पा

रहा हैं। जो कि फुटकर विक्रेताओं की प्रमुख समस्या हैं।

छत्तीसगढ़ के फुटकर विक्रेताओं के लिए जाने वाले शासकीय एवं गैर शासकीय प्रयास

पौनी पसारी योजना- प्रदेश के सभी नगरीय क्षेत्रों के असंगठित क्षेत्र के परंपरागत व्यवसाय करने हेतु इच्छुक व्यक्तियों एवं स्व सहायता समूह की महिलाओं को कौशल उन्नयन उपरान्त सघन शहरी क्षेत्रो में व्यवसाय हेतु किफायती दैनिक शुल्क पर चबूतरा उपलब्ध कराने का प्रावधान किया गया हैं। यह योजना छत्तीसगढ़ की प्राचीन परंपरा के अंतर्गत ''पौनी-पसारी'' व्यवसाय को नवजीवन प्रदान करने में सहायक होगी, जिससे स्थानीय परंपरागत व्यवसायों जैसे - लोहे से संबंधित कार्य, मिट्टी के बर्तन, कपड़े धुलाई, जूते चप्पल तैयार करना, लकड़ी से संबंधित कार्य, पशुओं के लिए चारा, सब्जी-भाजी उत्पादन, कपड़ों की धुलाई, सिलाई, कंबल, मूर्तियां बनाना, फूलों का व्यवसाय, पूजन सामग्री, बांस का टोकना, सूपा, केशकर्तन, दोना-पत्तल, चटाई तैयार करना तथा आभूषण एवं सौंदर्य सामग्री इत्यादि का व्यवसाय, ''पौनी-पसारी'' व्यवसाय के रूप में रोजगार उपलब्ध कराया जाता हैं। योजनांतगर्त प्रति नग राशि रू. 30.00 लाख की पात्रता निर्धारित हैं। नगरीय निकायों को शत् प्रतिशत अनुदान दिया जाता हैं। वित्तीय वर्ष 2019-20 में कुल 08 निकायों में 16 नग पौनी-पसारी बाजार निर्माण हेतु राशि रू. 409.55 लाख की स्वीकृति प्रदान की गई हैं। वित्तीय वर्ष 2020-21 में अद्यतन 150 परियोजनाओं हेतु राशि रू. 4,454.96 लाख की स्वीकृति प्रदान की गई हैं, जो कि प्रगतिस्त हैं।[21]

राजीव गांधी स्वावलम्बन योजना- असंगठित रूप से गुमटी - ठेले, फेरी अथवा अस्थाई दुकान लगाकर जीविकापार्जन करने वाले परिवारों की आर्थिक उत्थान की योजना हैं। योजनांतर्गत अब-तक 3714 असंगठित क्षेत्र हेतु राशि रू. 642.30 लाख की स्वीकृति प्रदान की गई हैं। प्रति गुमटी रू. 0.30 लाख कव प्रावधान इस योजना के अंतर्गत किया जाता हैं।[22]

हाट बाजार समृद्धि का आधार योजना- असंगठित रूप से गुमटी - ठेले, फेरी अथवा अस्थाई दुकान लगाकर जीविकापार्जन करने वाले परिवारों की आर्थिक उत्थान की योजना हैं। नगर निगमों को राशि रू. 100.00 लाख, नगर पालिका परिषद् को राशि रू. 70.00 लाख, तथा नगर पंचायत को राशि 40.00 लाख का प्रावधान इस योजना के अतंर्गत किया गया हैं। वित्तीय वर्ष 2019-20 में परियोजनाओं हेतु राशि रू. 74.15 लाख की स्वीकृती इस योजना हेतु किया गया हैं। तथा वर्तमान में 108 परियोजनाएं पूर्ण की जा चुकी हैं।[23]

DAY- NULM – कार्यक्रम के तहत शहरी पथ विक्रेताओं को सहायता दी जाती हैं। इस घटक में पथ विक्रेताओं का उन्हें सामाजिक सुरक्षा, कौशल उन्नयन, कार्यशाला, बैंक लिंकेज एवं ऋण सुविधा, पहचान पत्र, विक्रेता हेतु सुनिश्चित स्थान आदि सुविधाओं से लाभान्वित किया जाता हैं। तथा निकायों में नॉन वेंडिंग जोन, वेंडिंग जोन, एवं प्रतिबन्धित जोन की पहचान एवं जोनों के वर्गीकरण के आधार पर शहरी पथ विक्रेताओं को व्यवसाय किये जाने हेतु वेंडिंग प्लान निर्माण एवं बाजार विकास किया जाता हैं।[24]

क्र.	छत्तीसगढ़ राज्य में अनुमानित पथ विक्रेताओं की संख्या	ऑनलाईन आवेदनों की संख्या	बैंकों द्वारा स्वीकृत आवेदन	बैंको द्वारा वितरित आवेदन
1	91462	50760	23039	15160

National Association of Street Vendors of India (NASVI)[25] यह फुटकर विक्रेता संगठनों का राष्ट्रीय संघ हैं। जो पूरे भारत में फुटकर विक्रेताओं के आजीविका अधिकारों की सुरक्षा के लिए काम रहा हैं। यह ट्रेड यूनियनों, सामुदायिक आधारित संगठनों (सीबीओ), गैर सरकारी संगठनो (एनजीओ) और पेशेवरों का गठबंधन हैं। NASVI नवंबर 2003, में 1860 के सोसायटी पंजीकरण अधिनियम के तहत पंजीकृत हैं। इसका प्रमुख लक्ष्य फुटकर विक्रेताओं को संगठित कर सामूहिक स्तर पर अपने अधिकरो के लिए संघर्ष करने हेतु मंच प्रदान करना हैं। जिससे फुटकर विक्रेताओं की आजीविका को सुनिश्चित किया जा सके। इसके अतिरिक्त फुटकर विक्रेतओं की ओर नीति निर्माताओं, योजनाकारों एवं प्रशासको का ध्यान आकर्षित करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय सम्मेलनों को व्यवस्थित करना हैं। NASVI, पथ विक्रेता (जीविका संरक्षण और पथ विक्रयविनियमन) अधिनियम, 2014 को सम्पूर्ण भारत में लागू करने के पक्ष में समर्थन करती हैं। जो कि वास्तव में पूर्ण रूप से सम्पूर्ण भारत में इस अधिनियम का पालन नही किया जाता हैं। जो की प्रशासनिक कर्त्वयहीनता की ओर दृष्टिगोचर हैं।[25]

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. Bhagwati Paraksh Sharma (2012). फुटकर व्यापार में विदेशी पूंजी : समग्र आर्थिक क्षेत्र के लिए गंभीर चुनौती. Pp. 1. Retrieved from http://www.researchgate.net/publication/32415191pdf
2. NSSO Report 2017-18. Retrieved from http://www.mospi.gov.in/sites/default/files/publication_reports/Annual%report%2c%20PLFS%202017 18_31052019.pdf
3. DAY-NULM Master Plan 2018_19. Retrieved from http://nulm.gov.in/PDF/NULM_Mission/NULM-SMID_Guidelines.pdf
4. रायपुर विकास योजना पुनर्विलोकित 2021. छत्तीसगढ़ नगर तथा ग्राम निवेश अधिनियम 1973 के प्रावधानान्तर्गत प्रकाशित, संचालनालय, नगर तथा ग्राम निवेश, छत्तीसगढ़. Retrieved from http://tcp.cg.gov.in/pdf
5. Central Statistics Office, Delhi, India Annual Report (Implementation) 2018-19. Retrieved from http://www.mospi.gov.in/central-statistics-office-cso-1.pdf
6. औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947- Retrieved from http://legislative.gov.in/sites/default/files/H194714.pdf
7. Article Economic Time 19 Jan 2020. Retrieved from http://m.economictime.com/news/economy/indicators/national-database-of-worker-in-informal-sector-in-the-works/amp_articalshow/73394732.cms.pdf
8. ATM Nural Amin (2002). The Informal Sector in Asia from the

Decent Work Perspective. Working Paper on the Informal Economy. Employment Sector International Labour Office, Geneva. Pp.14-15. Retrieved from http://www.researchgate.net/publication/312146617.pdf

9. ILO Report 3rd edition. Women and Men in the Informal Econom: A Statistical Picture. Rtrieved from http://www.ilo.org/global/publications/books/WCMS_626831/lang--en/index.html
10. Economic Surver of India. Report 2018-19. Retrieved from http://www.indiabudget.gov.in/economicsurvey/pdf
11. Yunusa, M.B. (1988). Reconnaissance Study of Socio-Economic Base of Street Trading in Samaru. Socio-Econ Plann. Science Vol.22(No. 2), Pp 103-108.
12. पथ विक्रेता (जीविका संरक्षण और पथ विक्रयविनियमन) अधिनियम, 2014 के अध्याय 1 खण्ड 2 (ठ), Pp. 2. Retrieved from http://legislative.gov.in/sites/default/files/H201407.pdf
13. et. al अध्याय 1 खण्ड 2 (घ), Pp. 1. Retrieved from http://legislative.gov.in/sites/default/files/H201407.pdf
14. et. al अध्याय 1 खण्ड 2 (ट), Pp. 2. Retrieved from http://legislative.gov.in/sites/default/files/H201407.pdf
15. मुख्यमंत्री आर्थिक कल्याण योजना - पथ पर विक्रयकरने वालो (स्ट्रीट वेंडर) के लिए कल्याण योजना -2014. नगरीय विकास एवं पर्यावरण विभाग. खण्ड 3. (3.1) Pp. 1. Retrieved from http://shrmik.samagra.gov.in/Document/pathparvikramkarrnewale.pdf
16. National Policy on Urban Street Vendors (2004). Department of Urban Employment & Poverty Alleviation Ministry of Urban Development & Poverty Alleviation, Government of India. Pp. 3. Retrieved from http://nidan.in/nidanwp/wp-content/uplods/2014/07/National-Policy-on-Urban-Street-Vendors-2004.pdf
17. मुख्यमंत्री आर्थिक कल्याण योजना - पथ पर विक्रयकरने वालो (स्ट्रीट वेंडर) के लिए कल्याण योजना -2014. नगरीय विकास एवं पर्यावरण विभाग. खण्ड 3. (3.3) Pp. 2. Retrieved from http://shrmik.samagra.gov.in/Document/pathparvikramkarrnewale.pdf
18. पथ विक्रेता (जीविका संरक्षण और पथ विक्रयविनियमन) अधिनियम, 2014 के अध्याय 2. खण्ड. 5- Pp. 3. Retrieved from http://legislative.gov.in/sites/default/files/H201407.pdf
19. et. al. अध्याय 3. Pp. 4. Retrieved from http://legislative.gov.in/sites/default/files/H201407.pdf
20ण प्रशासकीय प्रतिवेदन, 2019-20, नगरीय प्रशासन एवं विकास विभाग, नवा रायपुर,

अटल नगर, छ.ग., Pp. 15. Retrieved from http://uad.cg.in/pdf/Annual%20Report%202020.pdf

21. et.al. Retrieved from http://uad.cg.in/pdf/Annual%20Report%202020.pdf
22. et.al. Pp. 18. Retrieved from http://uad.cg.in/pdf/Annual%20Report%202020.pdf
23. et.al. Pp. 19-20. Retrieved from ीजजचरूध्धनंकण्बहण्पदध्चकिध।ददनंसः20त्मचवतजः202020ण्चकि
24. DAY-NULM Master Plan 2018_19. Retrieved from http://nulm.gov.in/PDF/NULM_Mission/NULM SMID_Guidelines.pdf
25. NASVI (National Association of Street Vendors of India). Retrieved from http://www.streetnet.org.za/docs/affiliates/NASVI-National-Association-of-street-Vendors-of-India.pdf

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

ऑनलाइन (वेव आधारित) शिक्षा का समग्र प्रभाव 21वीं सदी इंटरनेट की सदी है : एक कदम ज्ञान की ओर

• महानन्द द्विवेदी
••एस. राठौर

सारांश- आज इंटरनेट में कार्य व्यवहार के प्रत्येक आयाम को अपने जद में ले लिया है। प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मनुष्य की हर गतिविधि सकारात्मक या नकारात्मक रूप से इंटरनेट के जरिये प्रभावित हो रही है। इसी कड़ी में वर्तमान समय में शिक्षा व्यवस्था भी है, जिसका स्वरूप पूरी दुनिया में ऑनलाइन होता जा रहा है। शिक्षा के ऑनलाइन माध्यम का तात्पर्य : वेव आधार के माध्यम से बिना स्कूल कॉलेज या विश्वविद्यालय में भौतिक रूप से गये छात्र या अध्येता आभासी रूप से कक्षाओं और अध्यापकों का लाभ उठा सकेंगे। कोरोना जैसी महामारी ने मात्रात्मक और गुणात्मक दोनों में परिवर्तन किया है। कई महीने देश में तालाबंदी जैसे हालात रहे, इस दौरान शिक्षण संस्थान भी बंद रहे, लेकिन इस कारण बच्चों की पढ़ाई को बहुत दिनों तक रोका नहीं जा सकता इसलिए शिक्षण संस्थानों ने प्राथमिक स्तर से लेकर उच्चस्तर तक ऑनलाइन माध्यम से शिक्षण कार्य को प्रारंभ किया।

मुख्य शब्द - आनलॉइन, शिक्षा, प्रभाव, इंटरनेट, ज्ञान

प्रस्तावना - आधुनिक तकनीक ने सारा जीवन परिदृश्य बदल दिया है तकनीक ने चुपके से हमें बदल दिया, पता ही नहीं चला मौका मिलते ही नये माडल और पैकेज की बात करने लगते हैं व्हाट्सप, फेसबुक, ट्यूटर, इन्स्ट्राग्राम तो जीवन की जरूरतों में शामिल हो गये है। मोबाइल के बिना जीवन ही अधूरा हो गया है। आज सूचनाएँ- कारोबार, बिजनेस, मनोरंजन, खरीददारी सभी प्रकार के भुगतान, बिल, रिजर्वेसन, अध्ययन-अध्यापन सभी क्षेत्र में तकनीक ऑनलाइन ने प्रवेश कर लिया है। स्मार्ट फोन पर भारतीय रोजाना पाँच घंटा व्यतीय करता है। वीडियो देखने का चलन डाटा ट्रेफिक में 60 गुना से अधिक वृद्धि हुई है। 2020 से घर से काम करने का चलन बढ़ा है। डाटा उपयोग के मामले में भारत बड़े बाजार में सामिल हो गया है। 55 प्रतिशत डाटा अल्पावधि का वीडियो देखने में खर्च किया जा रहा, लोगों को ऐसा वीडियो देखना चाहिए जिससे ज्ञानवर्धन हो, वेहतर लाइफ बने। एक सर्वे के अनुसार भारत में 70 करोड़ के लगभग इंटरनेट यूजर्स 2020 में थे। शहरी ग्रामीण यूजर्स में बड़ी खाई अंतर है। महिला-पुरुष, बूढ़े जवानों में भी इंटरनेट यूजर्स में बड़ा अंतर है। सबसे वड़ी समस्या कलेक्टविटी की है, कालड्राफ की है, इंटरनेट की स्पीड की है। पढ़ाई से लेकर हर कार्य इंटरनेट के माध्यम से होना है तो जाहिर है सबसे लिये तेज गति का इंटरनेट चाहिए। निर्वाध full speed में लोकप्रियता व कोरोना में 2020 में शिक्षा से जुड़े

• विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, शासकीय शहीद केदारनाथ महाविद्यालय, मऊगंज, जिला-रीवा
•• अतिथि विद्वान, समाजशास्त्र, शहीद केदारनाथ महाविद्यालय, मऊगंज, जिला-रीवा (म.प्र.)

Aap के इस्तेमाल (प्रयोग) में 30 से 40 प्रतिशत की वृद्धि देखी गई है।

अथर्ववेद के अनुसार-मानव मस्तिस्क एक "हिरण्य कोष है" है- अर्थात् स्वर्ण से भरा हुआ कोष है। हिरण्य कोष का अर्थ यह नहीं है कि मस्तिष्क रूपया बनाने का एक यंत्र या मशीन नहीं है-इसका व्यापक अर्थ-मानव मस्तिष्क ईश्वर प्रदत्त महान सम्पदा है। 'मस्तिष्क' कम्प्यूटर का CPU मोबाइल का सिम/चिप है। मस्तिष्क ही हमें पशु श्रेणी से मानवता की श्रेणी में अग्रसर करता है। मस्तिष्क स्थूल शरीर में कपाल के भीतर सुरक्षित छोटा सा चेतना यंत्र है। जो सम्पूर्ण शरीर के चेतना चक्र से युक्त होकर इद्रियों को चेतना देता है और विषय का ज्ञान कराता है। चेतन में नही ज्ञान और विचार का स्रोत होता है।यही कल्पना करता है, मनन करता है, चिंतन और विवेचन करता है। किसी विषय का विवेचन और विवेकपूर्ण हल ही हमारी उन्नति का द्योतक होता है। आज समाज में महान आविष्कारों से बनी वस्तुओं के उपभोग सुखोपलब्धि की है- अच्छा घर, अच्छा भोजन, अच्छा कपड़ा, अच्छा दिखना, अच्छी गाड़ी, अच्छा मोबाइल, अच्छा दूरसंचार का साधन के साथ आवश्यक है आंतरिक रूप से भी अच्छा बने, तभी व्यक्ति के व्यक्तित्व के पूर्ण विकास की सार्थकता सिद्ध होगी।

यह तभी संभव है- जब व्यक्ति के व्यक्तित्व का समग्र विकास होगा। स्वभाव, गुण, चरित्र, वाणी माधुर्य, गंभीरता, अलौकिक, स्वावलम्बन एवं जीवन विकास की धारा में जुड़ने हेतु मनुष्य को हम सबको नये युग की नई आधुनिक तकनीक के साथ चलना पड़ेगा अन्यथा उसका ज्ञान बासी हो जायेगा। ऑनलाइन कक्षाओं का संचालन स्कूल, कॉलेज Work From home का संचालन बढ़ा है। कोविड-19 वैश्विक महामारी के चलते अध्ययन/अध्यापन भी Online हुआ, निश्चित ही ऑनलाइल शिक्षण से कई समस्याओं से मुक्ति मिली है, निजात मिला है। आने-जाने में छुटकारा, समय की बचत, पाठ्यक्रमों की पेशकश की स्वायत्तता और लचीलापन, ऑनलाइन शिक्षा से इंटर्नशिप, परिवार की देखभाल, विभिन्न पाठ्यक्रम चयन की स्वतंत्र दक्षता (ऑनलाइन शिक्षण में वीडियो, पीडीएफ, पाउकास्ट जैसे कई उपकरण है। शिक्षक इन सभी उपकारणों का उपयोग पाठ्क्रमों योजनाओं में कर सकता है।

समय और स्थान की पहुँच, अफोर्डेविलिटी, पेपर लेस शिक्षण वातावरण, बेहतर उपस्थिति, छात्रों की लर्निंग स्टाइल्स की विविधता की उपलब्धता आदि। परन्तु हर विषय के दो पहलू सुखन्दुः/लाभ-हानि/ जय पराजय /दिन-रात/गुण-दोष होते है। जहाँ वेव आधारित शिक्षा से लाभ या हानि भी स्वाभाविक है। व्यक्तित्व विकास केवल एक विद्या (Events) मात्र परम्परागत "आत्मविकास एक प्राकृतिक धर्म है" कोरोना ने शिक्षा के चरित्र को पूरी तरह बदल दिया है, ऑनलाइन/वर्चुअल कक्षाओं ने इंटरनेट को एक अहम कड़ी बना दिया है। किन्तु हमें यह भी याद रखना चाहिए कि हमारे देश में एक बड़े तबके के पास न तो स्मार्ट फोन है न ही एण्ड्राय फोन न कम्प्यूटर, लैपटाप और न ही इंटरनेट की सुविधा उपलब्ध है। जहाँ मूलभूत सुविधाएँ : बिजली,पानी, स्वास्थ्य, सड़क-परिवहन आदि की अनुपलब्धता हो, वहाँ इंटरनेट आभासी वर्चुअल कक्षाओं की परिकल्पना वेबुनियाद है।

एक और विकट समस्या- दूरस्थ अंचल में स्थित संस्थाएँ जहाँ बिजली तक

नहीं पहुँची है। One line education संभव नहीं है। Teachers को भी किसी प्रशिक्षण के New verson में Online कक्षा लने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। आज हर समस्या के समाधान के लिये google.com पर निर्भर हो गये है। मोबाइल ने हमारी याददास्त को कम किया है। अपना स्वयं तक का नंम्बर याद नहीं रहता, जोड़ने- घटाने के लिए भी मोबाइल पर निर्भरता बढ़ी है। आधुनिक तकनीकि ने हमें दुनिया से इतना जोड़ दिया है है कि अब हम भी इन बदलावों से प्रभावित हुए नहीं रह सकते, हमें समाज के साथ चलना होगा, अन्यथा हमारा कार्य समाज की मुख्य धारा से विलगाव की स्थिति उत्पन्न करेगा। भारत में सोसल मीडिया aap platfrom अनियंत्रित होता जा रहा है, फेक न्यूज की बाढ़ आ गई है, हिंसक घटनाओं व राष्ट्र विरोधी अफवाहें इंटरनेट के माध्यम से फैलायी जाती है। इसलिए सरकार ने सोसल मीडिया के लिये गाइडलांइस जारी किया (26 Feb 2021) सोसल मीडिया मैसेज का स्त्रोत सोशल मीडिया बताना पड़ेगा। OTT

U	U/A	U/A7+	U/A13+	U/A16+	A श्रेणी के लिए आयु निर्धारण का मैकेनिज्म बनाना
इसे सभी लोग देख सकते हैं	इसके कुछ सीन्स बच्चों के लिए सही नहीं	हिंसा के सीन्स सिर्फ कामेडी के रूप में ही दिखाए जा सकते है	हिंसा की स्थिलिस्टिक लेकिन बीभत्स तरीके से नहीं दिखा सकते, पेरेंटल लोक जरूरी	हिंसक ग्राफिक्स और शारीरिक शोषण के छोटे सीन दिखाए जा सकते है।	एडल्ट कैटेगरी में क्रिमिनल लॉ के अन्तर्गत सक्त भाषा नगनता, हिसंक ग्राफिक्स का इस्तेमाल किया जा सकता है।

पर भी सेंसर लगया गया या उम्र के हिसाब से श्रेणियाँ बनी -

स्त्रोत-पत्रिका शुक्रवार 26 फरवरी 2021

OTT: जैसे :- अमेजन - व्हाटस्टार और मेटफ्लिक्स आदि

भारत में सोसल मीडिया यूजर्स	**संख्या (करोड़ में)**
बाट्सएप यूजर्स	53 करोड़
यूट्यूब	44.8 करोड़
फेसबुक	41 करोड़
इन्ट्राग्राम	27 करोड़
टिवट्र	1.75 करोड़

भारत सरकार की नई गाइडलाइन्स -

स्त्रोत : News – 24

सर्वेक्षण में 90 प्रतिशत से ज्यादा छात्रों ने कक्षाओं में जाकर लेक्चर में उपस्थित होने पर अपनी सहमति जाहिर की। स्पीड टेस्ट ग्लोवल इण्डेक्स के अनुसार 141 देशों में भारत 130 स्थान पर है। इंटरनेट स्पीड का वैश्विक औसत 30 MBPS है जबकि भारत की स्पीड 10MBPS है। ऐसे में ऑनलाइन कक्षाएं शिक्षा जारी रखने के साथ साथ कोरोना से निपटने और जागरूकता फैलाने में बेहतर माध्यम हो सकती है। ऑनलाइन शिक्षा माध्यम को "आपात कालीन रिमोट टीचिंग" प्रणाली का नाम दिया जा सकता है। अब भारत में ऑफलाइन शिक्षा के साथ साथ ऑनलाइन शिक्षा व्यवस्था को भी स्थायी तौर पर अपनाने

के प्रयास जारी रखने होंगे। यह प्रणाली भारत को भविष्य के प्रति तैयार करेगा।

प्रमुख उद्देश्य- भारतीय शिक्षा प्रणाली में समय-समय पर आवश्यकतानुसार संरचनात्मक एवं प्रकार्यात्मक परिवर्तन हुए, इसी क्रम में 21 वीं सदी में ऑनलाइन वेव आधारित शिक्षा ने अपने आप को स्थापित किया, परंतु कोविड संकट ने इसमें तीव्रता प्रदान की, क्योंकि कोविड संकट के दौरान प्रत्यक्ष संपर्क वाधित रहे। अत: शिक्षा व्यवस्था में ऑनलाइन/बेव शिक्षा एकमात्र वैकल्पिक व्यवस्था रहीं।

इस शोध पत्र के ऑनलाइन शिक्षण से छात्रों पर क्या प्रभाव पड़ा कितना, कैसा और किस रूप में लाभान्वित हुए। बेव आधारित शिक्षा से अभिवावकों पर क्या प्रभाव पड़ा खास तौर पर नेटवर्क उपलब्धता, स्वास्थ्य की चिंता, डाटा की उपलब्धता से संबंधित विषय का विवेचन इस शोध पत्र में किया गया है।

ऑनलाइन अध्यापक की वर्तमान प्रसंगिकता- महामारी कोविड-19 को ध्यान में रखते हुए लॉकडाउन के समय अधिकतम सदुपयोग।

बेव आधारित शिक्षा की सार्थकता- कहाँ तक, कितना, किस स्तर तक शिक्षक और छात्र सामंजस्य स्थापित हुआ,बेव अधारित शिक्षा एवं व्यक्तित्व विकास का सहसंबंध। बेव आधारित शिक्षा से साइबर सुरक्षा चिंतनीय है - हैकिंग, खाता सुरक्षा, नकारात्मक विज्ञापन आदि। ऑन-लाइन शिक्षण समय एवं स्थान की अनिवार्यता को सीमित किया।

पाठ्येत्तर गतिविधयों में सहभागिता दोस्त बनाना, स्वयं निर्णय लेने की क्षमता का विकास, अनुशासन, कुछ नया करने की आजादी, आत्मविश्वास में वृद्धि, गीत-संगीत व्याख्यान, युवा उत्सव NCC/NSS में सक्रिय सहभागिता आदि को लक्ष्य रखकर राष्ट्रीय वेबीनार समाजशास्त्र विभाग में रखा गया है। जिसमें गहन विचार-विमर्श एवं मनन के साथ ऑनलाइन शिक्षा के समग्र प्रभाव का विश्लेषण छात्रों के उज्जवल भविष्य एवं उन्नति का मार्ग प्रशस्त कर सकें एवं राष्ट्र की मुख्य धारा में जुड़ सकें।

शोध प्रविधि- शोध पत्र को तैयार करने में सर्वे तकनीक के साथ महाविद्यालय में आने वाले छात्र/छात्राओं से उनकी अभिमति लेकर प्रश्नावली के माध्यम से अभिभावकों की राय को जानने का प्रयास किया गया है। ऑनलाइन शिक्षा के बारे में किस प्रकार की जानकारी कहाँ तक और किस रूप में है, का संकलन सारणी के माध्यम से किया गया है।

तालिका क्र. 01

ऑनलाइन शिक्षा का छात्र/छात्राओं पर प्रभाव

मत	संख्या	प्रतिशत
बहुत अच्छा	15	30
अच्छा	20	40
सामान्य	10	20
नहीं पता	05	10

स्रोत-स्वयं का सर्वेक्षण

उपरोक्त तालिका के विश्लेषण से पता चला कि वेब आधारित शिक्षा का छात्र/छात्राओं पर समग्र प्रभाव कैसा रहा। पूछने पर 30 प्रतिशत विद्यार्थियों ने बताया कि

बहुत अच्छा रहा, ज्ञान के साथ आने-जाने एवं समय की बचत हुई। 40 प्रतिशत ने अपना मत व्यक्त किया कि अच्छा रहा, 20 प्रतिशत का कहना था कि सामान्य प्रभाव रहा, भौतिक कक्षाओं के समान समग्र बातों का विस्तृत रूप से जानकारी प्राप्त नहीं होती अध्ययन में 5 प्रतिशत ऐसे भी विद्यार्थी थे जिन्हें ऑनलाइन शिक्षा के संबंध में जानकारी ही नहीं थी।

तालिका क्र. 02

ऑनलाइन शिक्षा का कैसा प्रभाव रहा

मत	संख्या	प्रतिशत
बहुत अच्छा	30	60
अच्छा	10	20
सामान्य	08	16
अच्छा नहीं	02	04

स्रोत-स्वयं का सर्वेक्षण

ऑनलाइन शिक्षा का किस रूप में प्रभाव पड़ा छात्र/छात्राओं में विश्लेषण करने पर 60 प्रतिशत का कहना है कि बहुत अच्छा, 20 प्रतिशत का मत अच्छा, 16 प्रतिशत का विचार सामान्य, 02 प्रतिशत का कहना है कि ऑनलाइन अच्छा नहीं है।

तालिका क्र.03

एन्ड्रायड फोन की उपलब्धता

मत	संख्या	प्रतिशत
कठिन	10	20
सामान्य	25	50
परेशानी नहीं	15	30

स्रोत-स्वयं का सर्वेक्षण

उपरोक्त सारणी के माध्यम से अध्ययनरत छात्र-छात्राओं से एन्ड्रायड फोन की उपलब्धता हेतु जानकारी चाही गयी है। सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 20 प्रतिशत छात्र-छात्राओं को एन्ड्रायड फोन की उपलब्धता में कठिनाई होती है, 50 प्रतिशत इसे सामान्य मानते हैं तथा 30 प्रतिशत छात्र-छात्राओं को कोई परेशानी नहीं होती है।

तालिका क्र.04

नेटवर्क की उपलब्धता

मत	संख्या	प्रतिशत
पूर्ण	20	40
अपूर्ण	15	30
कभी मिलता कभी नहीं	15	30

स्रोत-स्वयं का सर्वेक्षण

उपरोक्त सारणी के माध्यम से अध्ययनरत छात्र-छात्राओं से नेटवर्क की उपलब्धता हेतु जानकारी चाही गयी है। सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 40.00 प्रतिशत छात्र-छात्राओं को पूरे समय पूर्ण नेटवर्क प्राप्त होता है जबकि 30-30 प्रतिशत अध्ययनरत छात्र-छात्राओं को अपूर्ण एवं कभी-कभी नेटवर्क प्राप्त होता है।

तालिका क्र.05

स्वास्थ्य की चिंता

मत	संख्या	प्रतिशत
सहमत	35	70
असहमत	15	30

स्रोत-स्वयं का सर्वेक्षण

उपरोक्त सारणी के माध्यम से अध्ययनरत छात्र-छात्राओं से स्वास्थ्य की चिंता हेतु जानकारी चाही गयी है। सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 70.00 प्रतिशत छात्र-छात्राएँ अपने स्वास्थ्य को लेकर चिंतित है, जबकि 30.00 प्रतिशत छात्र-छात्राएँ यह नहीं मानते कि एन्ड्रायड फोन के कारण स्वाथ्य की चिंता नहीं होती है।

तालिका क्र.06

वेव आधारित शिक्षा की सार्थकता-कहाँ तक किस प्रकार रही

मत	संख्या	प्रतिशत
पूर्ण सार्थक	40	80
सामान्य	08	16
सार्थक नहीं	02	04

स्रोत-स्वयं का सर्वेक्षण

उपरोक्त सारणी के माध्यम से अध्ययन उत्तरदाताओं से वेव आधारित शिक्षा की सार्थकता-कहाँ तक किस प्रकार रही सम्बन्धी जानकारी चाही गयी है। सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 80.00 प्रतिशत बेव आधारित शिक्षा को पूर्ण सार्थक मानते हैं, 16.00 प्रतिशत उत्तरदाता सामान्य तथा 04.00 प्रतिशत इसे सार्थक नहीं मानते हैं।

तालिका क्र.08

छात्र-शिक्षक सामन्जस्य

मत	संख्या	प्रतिशत
रहा	45	90
नहीं रहा	05	10

स्रोत-स्वयं का सर्वेक्षण

उपरोक्त सारणी के माध्यम से अध्ययन उत्तरदाताओं से वेव आधारित शिक्षा में शिक्षक-छात्र सामन्जस्य को जानने की कोशिश की गयी है। सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 90.00 प्रतिशत बेव आधारित शिक्षा में छात्र-शिक्षक के बीच सामन्जस्य को स्वीकार करते हैं, जबकि 10.00 प्रतिशत उत्तरदाता सामन्जस्य को स्वीकार नहीं करते हैं।

तालिका क्र.09

ऑनलाइन शिक्षा का व्यक्तित्व विकास पर प्रभाव

मत	संख्या	प्रतिशत
बहुत अच्छा प्रभाव	48	96
सामान्य	02	04

स्रोत-स्वयं का सर्वेक्षण

उपरोक्त सारणी के माध्यम से अध्ययन उत्तरदाताओं से ऑनलाइन शिक्षा का व्यक्तित्व विकास पर प्रभाव सम्बन्धी जानकारी चाही गयी है। सारणी के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 96.00 प्रतिशत ऑनलाइन शिक्षा से व्यक्तित्व विकास को प्रभावी मानते हैं जबकि 4.00 प्रतिशत इसे सामान्य मानते हैं।

तालिका क्र.10

ऑनलाइन शिक्षा से साइबर सुरक्षा

विषय विवरण	सर्वेक्षण संख्या	प्रतिशत
चिन्तनीय	30	60:
सामान्य	15	30:
पता नहीं	05	10:
कुल	50	100:

स्रोत–स्वयं का सर्वेक्षण

उपरोक्त तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि 60 प्रतिशत साइबर सुरक्षा को लेकर चिंतत है, 30 प्रतिशत सामान्य एवं 10 प्रतिशत को पता ही नहीं कि साइबर सुरक्षा क्या होती है।

तालिका क्र.11

ऑनलाइन शिक्षा में पाठ्येतर गतिविधियाँ

विषय	संख्या	प्रतिशत
बिल्कुल नहीं हुई	45	90
कुछ नहीं	05	10

स्रोत–स्वयं का सर्वेक्षण

तालिका के विश्लेषण से पता चला कि पाठ्येत्तर गतिविधियाँ 90 प्रतिशत लोगों ने (विद्यार्थी/अभिभावक) बताया बिल्कुल नहीं हुई। 10 प्रतिशत का कहना था कि स्वयं की जिम्मेदारी एवं रिस्क पर ऑनलाइन कार्य न होने पर भौतिक रूप से कॉलेजों में जाना पड़ा।

तालिका क्र.12

वेव आधारित अध्यापन की प्रासंगिकता

प्रासंगिक/अप्रांसागिक	सर्वेक्षण संख्या	प्रतिशत
सहमत	40	80
असहमत	10	20

स्रोत–स्वयं का सर्वेक्षण

उपरोक्त तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट है कि कोविड–19 की भयावहता को देखते हुए 80 प्रतिशत लोग सहमत एवं 20 प्रतिशत लोग (छात्र/छात्राएं एवं अभिभावक) असहमत है क्योंकि व्यक्तित्व विकास, दोस्त बनाना, स्वयं निर्णय, अनुशासन आदि की भौतिक कमियां रही।

अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष- आज इंटरनेट में कार्य व्यवहार के प्रत्येक आयाम को अपने जद में ले लिया है। प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मनुष्य की हर गतिविधि सकारात्मक या नकारात्मक रूप से इंटरनेट के जरिये प्रभावित हो रही है। इसी कड़ी में वर्तमान समय में शिक्षा व्यवस्था भी है, जिसक स्वरूप पूरी दुनिया में ऑनलाइन होता जा रहा है। शिक्षा के

ऑनलाइन माध्यम का तात्पर्य : वेव आधार के माध्यम से बिना स्कूल कॉलेज या विश्वविद्यालय में भौतिक रूप से गये छात्र या अध्येता आभासी रूप से कक्षाओं और अध्यापकों का लाभ उठा सकेंगे। अध्ययनरत 30 प्रतिशत विद्यार्थियों ने बताया कि बहुत अच्छा रहा, ज्ञान के साथ आने- जाने एवं समय की बचत हुई। 40 प्रतिशत ने अपना मत व्यक्त किया कि अच्छा रहा 20, प्रतिशत का कहना था कि सामान्य प्रभाव रहा, भौतिक कक्षाओं के समान समग्र बातों का विस्तृत रूप से जानकारी प्राप्त नहीं होती, अध्ययन में 5 प्रतिशत ऐसे भी विद्यार्थी थे जिन्हें ऑनलाइन शिक्षा के संबंध में जानकारी ही नहीं थी। 60 प्रतिशत का कहना है कि बहुत अच्छा, 20 प्रतिशत का मत अच्छा, 16 प्रतिशत का विचार सामान्य, 2 प्रतिशत का कहना है कि ऑनलाइन अच्छा नहीं है। 20.00 प्रतिशत छात्र-छात्राओं को एन्ड्रायड फोन की उपलब्धता में कठिनाई होती है, 50.00 प्रतिशत इसे सामान्य मानते हैं तथा 30.00 प्रतिशत छात्र-छात्राओं को कोई परेशानी नहीं होती है।

40.00 प्रतिशत छात्र-छात्राओं को पूरे समय पूर्ण नेटवर्क प्राप्त होता है जबकि 30-30 प्रतिशत अध्ययनरत छात्र-छात्राओं को अपूर्ण एवं कभी-कभी नेटवर्क प्राप्त होता है। 70.00 प्रतिशत छात्र-छात्राएँ अपने स्वास्थ्य को लेकर चिंतित है जबकि 30.00 प्रतिशत छात्र-छात्राएँ यह नहीं मानते कि एन्ड्रायड फोन के कारण स्वाथ्य की चिंता नहीं होती है। 80.00 प्रतिशत बेव आधारित शिक्षा को पूर्ण सार्थक मानते हैं, 16.00 प्रतिशत उत्तरदाता सामान्य तथा 04.00 प्रतिशत इसे सार्थक नहीं मानते हैं। 90.00 प्रतिशत बेव आधारित शिक्षा में छात्र-शिक्षक के बीच सामन्जस्य को स्वीकार करते हैं, जबकि 10.00 प्रतिशत उत्तरदाता सामन्जस्य को स्वीकार नहीं करते हैं। 96.00 प्रतिशत ऑनलाइन शिक्षा से व्यक्तित्व विकास को प्रभावी मानते हैं जबकि 4.00 प्रतिशत इसे सामान्य मानते हैं।

60 प्रतिशत उत्तरदाता साइबर सुरक्षा को लेकर चिंतत है, 30 प्रतिशत सामान्य एवं 10 प्रतिशत को पता ही नहीं कि साइबर सुरक्षा क्या होती है। 10 प्रतिशत का कहना था कि स्वयं की जिम्मेदारी एवं रिस्क पर ऑनलाइन कार्य न होने पर भौतिक रूप से कॉलेजों में जाना पड़ा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. गुप्ता के.एल.-शोध प्रविधि के विविध आयाम, रघुराज प्रकाशन, आगरा
2. बेव आधारित शिक्षा-एक अवलोकन, प्रकाशित शोध पत्र
3. www.onlineeducation/journal

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

गंदी बस्ती के युवाओं में नशे की प्रवृत्ति : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (छत्तीसगढ़ के रायपुर नगर के विशेष संदर्भ में)

•जवाहर लाल तिवारी
••चेतानंद जांगड़े

सारांश- औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप नगरों की जनसंख्या में तीव्र वृद्धि हुई हैं, परन्तु जिस गति से जनसंख्या में वृद्धि हुई हैं उस गति से मिलने वाली सुविधाओं में वृद्धि नही हुई। जिसके परिणामस्वरूप गंदी बस्ती की उत्पत्ति हुई। गंदी बस्ती में विशेष रूप से आपराधिक गतिविधियां होती रहती हैं, जिसका मुख्य कारण नशे की प्रवृत्ति को माना जाता हैं। वहां की आवासीय एवं क्षेत्रीय असुविधाओं के कारण प्रत्येक वर्ग एवं आयु के व्यक्ति नशे जैसे कार्यो में संलग्न होते हैं। विशेषतः अध्ययनरत् या 14 वर्ष से अधिक आयु के युवक, जिनमें नशे की प्रवृत्ति अधिक पायी जाती हैं।

मुख्य शब्द - सामाजिक जीवन, गंदी बस्ती, युवा, नशा

प्रस्तावना - गंदी बस्तियों में स्वस्थ्य सामाजिक जीवन का विकास नही हो पाता हैं, अतः इसे 'विघटन का केन्द्र' कहा जा सकता हैं। गंदी बस्ती में निवासरत ऐसे युवा जो अशिक्षित या मात्र साक्षर होते हैं, वे अपने जैसे समूहों में विचरण करते हैं एवं नशे के साथ-साथ आपराधिक गतिविधियों में भी पाये जाते हैं। गंदी बस्ती को परिभाषित करते हुए यह कहा जा सकता हैं कि गंदी बस्ती वे स्थान हैं, जहां जीवन से संबंधित सुविधाओं का पूर्णतः अभाव पाया जाता हैं, जिनमें गरीब या निम्न स्तर के लोग निवास करते हैं तथा जिनका विकास अव्यवस्थित होता हैं। जनगणना 2011 के अनुसार गंदी बस्ती को तीन प्रकार से विभाजित किया गया हैं -

1. **अधिसूचित गंदी बस्ती-** गंदी बस्ती एक्ट के अंतर्गत किसी भी कस्बे या शहर में सभी अधिसूचित क्षेत्रों में किसी भी अधिनियम के तहत प्रशासन या स्थानीय सरकार ने गंदी बस्ती के रूप में अधिसूचित क्षेत्र किया गया हो।
2. **मान्यता प्राप्त गंदी बस्ती-** वे सभी क्षेत्र जहां प्रशासन या स्थानीय सरकार या हाउसिंग बोर्ड औपचारिक रूप से किसी भी कार्य के तहत गंदी बस्ती के रूप में अधिसूचित नही किया गया हो उन क्षेत्रों को गंदी बस्ती की मान्यता दी गई हो।
3. **चिन्हांकित गंदी बस्ती-** कम से कम 60 से 70 घर या 300 की आबादी का एक ऐसा क्षेत्र, जहां आमतौर पर अपर्याप्त बुनियादी सुविधाओं का अभाव व उचित पेयजल तथा स्वच्छता में कमी, अस्वस्थ, वातावरण प्रशासन या राज्य सरकार द्वारा

• सह, प्राध्यापक, सेवानिवृत्त, पं.रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)
•• शोधार्थी, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर(छ.ग.)

चिन्हांकित गंदी बस्ती के रूप में की गई।

जनगणना 2011 के आंकड़ों के अनुसार भारत में कुल अधिसूचित गंदी बस्ती की संख्या 37072 हैं एवं मान्यता प्राप्त गंदी बस्ती की संख्या 30846 व चिन्हांकित गंदी बस्ती की संख्या 40309 हैं। इस प्रकार भारत में कुल 108227 गंदी बस्तियां हैं। गंदी बस्ती में जहां विभिन्न प्रकार की असुविधाओं का प्रभाव होता हैं, वहां नशाखोरी, मद्यपान, जुआं, बेरोजगारी, वेश्यावृत्ति जैसे गंभीर घटनायें घटित होती रहती हैं। शराबखोरी, मद्यपान ने जहां पारिवारिक विघटन, पारिवारिक समस्याये उत्पन्न की हैं तथा युवा विभिन्न प्रकार की नशा करने से अपना भविष्य ही दांव पर लगा रहे हैं। चूंकि भारत युवाओं का देश हैं एवं भारत के जनसंख्या में 60 प्रतिशत हिस्सा युवाओं का है। इसमें 28 से 35 वर्ष की आयु के हैं और यदि वे ही नशे में चूर रहेंगे तो भारत का विकास कहां हो पायेगा, अतः यह चिंतनीय विषय हैं। नशे में व्यक्ति सामान्य व्यक्ति से भिन्न प्रकार का व्यवहार करता हैं एवं सामान्य ना होने के कारण ही आवेश में कुकृत्य घटनायें कर बैठता हैं, जो अपराध की श्रेणी में आते है। नशा करने वाले केवल शराब पीकर ही नशा नही करते, नशाखोरी के अन्य साधन हो सकते हैं जैसे चरस, गांजा, भांग, अफीम, कोकीन, मरफीन, पैथोडीन, एस्पिरीन इत्यादि।

अध्ययन विषय का समाजशास्त्रीय महत्व- समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से गंदी बस्ती में युवाओं में नशे की प्रवृत्ति का अध्ययन महत्वपूर्ण है। गंदी बस्ती में युवाओं के अध्ययन से यहां के निवासियों का जीवन-स्तर, रहन-सहन का ढंग, विचार एवं मनोदशा, तथा लोगो की समस्याओं को जानने व समझने में सहायता प्राप्त होगी। अध्ययन के द्वारा वहां की वास्तविक स्थिति एवं गतिविधियों के संबंध में गहनता से जानकारी एकत्रित की जा सकती हैं। गंदी बस्ती में युवाओं में नशे की प्रवृत्ति के कारण व स्थिति से संबंधित जानकारी प्राप्त की जा सकती हैं।

शोध साहित्य का पुनरावलोकन- सीमा सहाय (2016) दुर्ग जिले की गंदी बस्ती में रहने वाली महिलाओं का अध्ययन किया तथा यह ज्ञात हुआ कि उनमें शिक्षा का स्तर निम्न था। महिलाये एकल परिवार से संबंधित थी। अधिकतर महिलाये प्रौढ़ शिक्षा से संबंधित हैं, तथा उनकी आय का मुख्य स्त्रोत मजदूरी हैं। गंदी बस्ती में महिलाओं को विभिन्न प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं तथा परिवार एवं कार्यस्थल पर सामंजस्य बनाये रखने संबंधी समस्या विशेष रूप से होती हैं।

राम गुलाम, कोमल वर्मा, पंकज शर्मा (2016) इंदौर जिले के प्रकाश चंद्र सेठी नगर में गंदी बस्ती का अध्ययन किया गया तथा अध्ययन में पाया कि गंदी बस्ती में मादक द्रव्यों एवं पदार्थो के सेवन से वहां सामाजिक एवं आर्थिक समस्यायें व्याप्त हैं। मादक द्रव्यों एवं पदार्थो से संबंधित नशा करने वालो में 53.9 प्रतिशत गुटका या पान मसाला का प्रयोग करते हैं। शराब से नशा करने वालो में 46.5 प्रतिशत, भांग से नशा करने में 8.9 प्रतिशत एवं 0.1 प्रतिशत में 4.9 प्रतिशत कृत्रिम निद्रावस्था का प्रयोग नशे के लिये करते है।

मृदुला शर्मा एवं मोनी चौधरी (2016) मेरठ जिले के झुग्गी बस्ती में रहने वाले 12 से 16 वर्ष की आयु के किशोरों का चयन अध्ययन के लिये किया गया, परिणामों से स्पष्ट हुआ कि 46.36 प्रतिशत किशोर गुटका का प्रयोग नशा करने के लिये करते हैं तथा

तम्बाकू, धूम्रपान, शराब, अफीम का प्रयोग 54.88 प्रतिशत करते हैं। किशोरों से प्राप्त जानकारी के अनुसार 25.53 प्रतिशत ने स्वीकार किया कि वे एक बार ही नशा का प्रयोग करते हैं, 30 प्रतिशत ने स्वीकार किया कि वे कभी-कभी ही नशा का प्रयोग करते हैं एवं 35 प्रतिशत ने स्वीकार किया कि वे अक्सर नशे का प्रयोग करते हैं। नशे के रूप में सबसे सामान्य गुटका का प्रयोग करते है जो 33.36 प्रतिशत हैं, तंबाकू 12.20 प्रतिशत, धूमपान 40 प्रतिशत एवं शराब का प्रयोग 15.40 प्रतिशत हैं।

श्रीबास गोस्वामी एवं समीता मन्ना (2013) अध्ययन से यह ज्ञात हुआ कि गंदी बस्ती का प्रार्दुभाव शहरीकरण की प्रक्रिया के प्रतिफल के रूप में देखा जा सकता हैं। सामाजिक-आर्थिक विकास और आधुनिकीकरण के फलस्वरूप रायपुर शहर की आबादी विशेष रूप से शहरी गरीबों में जनसंख्या के कारण समस्याओं का दबाव, भौतिक पर्यावरण और जीवन गुणवत्ता में गिरावट दर्ज की गई। शहरी आबादी का तेजी से विकास एवं बुनियादी सुविधाओं के लिये समस्याये व्याप्त हैं। गंदी बस्तियों में अनेकों समस्याये है तथा यह समस्या कोई नई समस्या नही हैं। इन समस्याओं को दूर करने का प्रयास किया जा रहा हैं, जिनमें पानी, बिजली, स्वास्थ्य समस्यायें इत्यादि सम्मिलित हैं।

महेन्द्र जैन (2012) उज्जैन जिले की नागदा नगर में अध्ययन किया गया। नागदा नगर में कुल गंदी बस्ती की संख्या 15 हैं तथा वहां लगभग 6000 परिवार निवास करते हैं, जिनमें 400 परिवारों को अध्ययन के लिए चुना तथा निष्कर्ष में यह पाया कि गंदी बस्ती में रहने वाले लोग बहुत ही कठिन परिस्थितियों में जीवन यापन करते हैं। नागदा नगर में गंदी बस्ती की जनसंख्या वृद्धि का मुख्य कारण आद्योगिक विकास हैं। व्यवस्थापन पर ध्यान नही दिये जाने के कारण गंदी बस्ती का निर्माण हुआ पांच गंदी बस्ती में से 3 बस्ती ऐसी है, जिनमें अशिक्षित या निरक्षर अधिक है एवं जिन्हे किसी भी प्रकार की योजनाओं का ज्ञान नही हैं।

दिवाकर सिंह राजपूत (2011) ने मधुकर शाह वार्ड (हरिजन बस्ती) में 67 परिवारों का अध्ययन किया जहां 316 लोग निवास करते हैं तथा महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक स्थिति को ज्ञात करने का प्रयास किया गया। गंदी बस्ती में महिलाओं की स्थिति अच्छी नही हैं एवं अधिक संख्या में अशिक्षित हैं तथा विभिन्न प्रकार की विषमताये विद्यमान है।

मनीष (2011) उत्तरप्रदेश फिरोजाबाद जिले के शिकोहाबाद तहसील को प्रमुख रूप से अध्ययन के लिये चुना गया तथा अध्ययन से ज्ञात हुआ कि सभी धर्मो एवं जाति के लोगो मे नशे की लत पाई गई हैं। नशे की लत से ग्रसित सभी निरक्षर तथा साक्षर शामिल है नशे की लत का कारण जिज्ञासा, प्रयोग करना, हम उम्र के लोगों का दबाव, विषम परिस्थितियां, कुसंगति व पारिवारिक कारण को माना गया हैं। नशे के आगोश में 16 वर्ष से 35 वर्ष की आयु वाले अधिक हैं, कम आय वाले लोगों में नशे की लत जिसमें बेरोजगार श्रमिक एवं विद्यार्थी वर्ग के हैं।

प्रकाश रंजन, नमिता, आर.एम.चतुर्वेदी (2010) अध्ययन क्षेत्र के रूप में मुंबई के मालवासी गंदी बस्ती के 15 वर्ष की आयु के किशोरो का चयन किया गया। साक्षात्कार द्वारा नशीली दवाओ से संबंधित प्रश्न किया गया तथा परिणाम के रूप में यह ज्ञात हुआ कि

49.7 प्रतिशत एक या इससे अधिक प्रकार की नशीली दवाओं का प्रयोग करते हैं। 15 से 34 वर्ष की आयु समूह में 59.8 प्रतिशत नशीली दवाओं का प्रयोग किया जाता हैं। नशेड़ी वर्ग जिनमें 72.1 प्रतिशत या तो अनपढ़ थे या प्राथमिक, माध्यमिक शिक्षित थे। मादक पदार्थों के सेवन प्रारंभ करने के लिये 81 प्रतिशत का मानना हैं कि वे साथी के दबाव में आकर यह कार्य किया, नशीली दवाओं के प्रयोग के कारण के रूप में शहरी गंदी बस्ती एवं कम शिक्षा या अशिक्षा का होना हैं।

अभिजीत भौमिक एवं आभा त्रिपाठी (2007) किशोरों में मादक द्रव्य व्यसन की समस्या का अध्ययन बिलासपुर जिले में किया गया तथा यह ज्ञात हुआ कि नशे की लत में किशोर वर्ग सभी जाति व धर्म से है। किशोरों में इसका मुख्य कारण के रूप में आसामन्य निवास स्थान हैं और बाजारों में सहजता से नशे की सामग्री की उपलब्धता का होना हैं, गांजा तथा शराब किशोरों के नशा की सामान्य वस्तु हैं, जो मित्रों, रिश्तेदारो व दलालों के माध्यम से प्राप्त हो जाते हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

1. नशे की प्रवृत्ति के कारणों का अध्ययन करना
2. नशे से संबंधित परिणामी प्रभावों का ज्ञात करना

अध्ययन पद्धति- अध्ययन हेतु रायपुर नगर के 6 गंदी बस्ती (अटारी, गीता नगर, संजय नगर, सारथी पारा, त्रिमूर्ति नगर तथा तरूण नगर) का चयन किया गया तथा 14-35 वर्ग की आयु के 120 उत्तरदाता (युवक) का चयन दैव निदर्शन के लॉटरी पद्धति का प्रयोग कर किया गया।

उत्तरदाताओं की पृष्ठभूमि-

तालिका क्रमांक 01
उत्तरदाताओं की आयु

क्र.	आयु	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	10-20 वर्ष तक	68	56.6
2.	20-30 वर्ष तक	27	22.6
3.	30 वर्ष से अधिक	25	20.8
	योग	**120**	**100**

तालिका क्रमांक 02
उत्तरदाताओं की शैक्षणिक स्तर

क्र .	शैक्षणिक स्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
1	निरक्षर	15	12.5
2	मात्र साक्षर	10	8.3
3	प्राथमिक	14	11.7
4	माध्यमिक	23	19.1
5	हाई स्कूल	22	18.4
6	हायर सेकेण्ड्री	19	10
7	स्नातक	12	8.3
8	स्नातकोत्तर	05	4.2
	योग	**120**	**100**

तालिका क्रमांक 03
उत्तरदाताओं की वैवाहिक स्थिति

क्र.	वैवाहिक स्थिति	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	अविवाहित	78	65
2.	विवाहित	34	28.3
3.	तलाकशुदा	05	4.2
4.	विधुर	03	2.5
	योग	**120**	**100**

उपरोक्त सारणी से ज्ञात होता हैं कि नशे की प्रवृत्त अधिकांश युवक 20 वर्ष की आयु से कम हैं, तथा नशे से ग्रसित अधिकांश युवक निम्न शिक्षित स्तर के हैं, जो सर्वाधिक अविवाहित हैं।

नशे की प्रवृत्ति का कारण - वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व ही नशे की समस्या से जूझ रहा हैं, क्योंकि इसका सबसे अधिक प्रभाव युवा वर्ग पर पड़ रहा हैं, क्योंकि युवा वर्ग ही सबसे अधिक इसका प्रयोग करते हैं। नशे की प्रवृत्ति के पीछे मूलभूत कारणों में यदि देखा जाये तो प्रारंभ में वे किसी करीबी व्यक्ति के साथ ही इसका सेवन प्रारंभ करता हैं। करीबी व्यक्ति के रूप में सबसे अधिक प्रभाव मित्र का होता हैं क्योंकि वे ही उसे नशा करने हेतु प्रोत्साहित एवं दबाव बनाते हैं।

आर.अल्फ्रेड, लिंडस्मीथ (1947) कुछ पश्चिमी समाजशास्त्रियों ने अपने क्षेत्रों में नशे का अध्ययन किया हैं, परंतु उनके द्वारा दिये गये दृष्टिकोणों पर राम अहूजा ने प्रश्न किया हैं। दिन प्रकाश रंजन (2010) ने अपने अध्ययन द्वारा यह बतलाने का प्रयास किया हैं कि नशा और मद्यपान प्रत्येक देश के लिये प्रमुख समस्या हैं, जिसमें विकासशील एवं विकसित राष्ट्र सम्मिलित है। डी.मोहन, ए.अरोरा (1976) ने अपने अध्ययन दिल्ली विश्वविद्यालय के छात्रों का नमूना सर्वेक्षण द्वारा नशीली दवाओं के सेवन की दर को ज्ञात करने का प्रयास किया जिसमें 30.1 प्रतिशत छात्रों द्वारा शराब और तम्बाकू का प्रयोग किया जाना बतलाया गया हैं।

तालिका क्रमांक 04
नशे की प्रवृत्ति

क्र.	प्रवृत्ति	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	प्रतिदिन	57	47.5
2.	सप्ताह में	48	40
3.	कभी-कभी	15	12.5
	योग	**120**	**100**

सारणी से ज्ञात होता हैं, कि अधिकांशतः प्रतिदिन नशे करने के आदी हो चुके हैं।

तालिका क्रमांक 05

नशे का स्वरूप

क्र.	स्वरूप	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	गुटका एवं सिगरेट	33	27.6
2.	शराब एवं सिगरेट	28	23.3
3.	केवल गुटका	14	11.6
4.	केवल शराब	12	10
5.	केवल सिगरेट	10	8.3
6.	उपर्युक्त सभी	10	8.3
7.	केवल तम्बाकू	08	6.7
8.	केवल गांजा	05	4.2
	योग	**120**	**100**

नशे के पश्चात व्यवहार- लेंडिस (1959) ने अपने अध्ययन में मद्यपान के दौरान मद्यपानकर्ता के व्यवहार का अध्ययन किया हैं, जिसमें नशा पश्चात् किये जाने वाले व्यवहार में परिवर्तन को निश्चित रूप से प्रदर्शित किया हैं।

क्र.	नशे के पश्चात व्यवहार	आवृत्ति	प्रतिशत
1.	उग्र	48	40
2.	अक्रामक	37	30.9
3.	सामान्य	35	29.1
	योग	**120**	**100**

सारणी से ज्ञात होता हैं कि नशा करने के पश्चात् व्यक्ति का अपने मानसिक स्थिरता का अभाव पाया जाता हैं अधिकतर में अक्रामक व उग्र प्रवृत्ति को प्रदर्शित करते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

- Sahay, Seema. http://www.shodhganga.infibnet.ac.in
- Gulam,R., Verma, Komal, Sharma, P. (2016). Indian Journal of Psychiatry, Vol.58, pp. 83-86.
- Sharma, M., Choudhary, M. (2016). The International Journal of Indian Psychology ISSN 2348-5396, Issue 4, No. 58. http://www.ijip.in.
- Goswami, Shribas (2013), Global Journal of Human Social Science Sociology and Culture, Vol.13, Issue. 4
- Jain, Mahendra (2013). National Quarterly Research Paper, No. 81-82, pp. 40-45. RNI No. 58709/91
- Rajput, D.S. (2011). National Quarterly Research Paper No.44, pp.26-30.
- Manish (2011). National Quarterly Research Paper No.44,
- Ranjan, P. Namita, Chaturvedi, R.M. (2010). Indian Journal Pre. Soc. Med. Vol. 41, No. 1&2.
- Bhowmik, A. Tripathi, A., (2007). National Quarterly Research Paper, pp. 62-63.
- Alfred, R. Lindesmith (1947). Opiate Addication Principia Press,

Blooming See also his A Sociological Theory of Drug Addication, Americian Journal of Sociology, Vol. 43, pp. 593-613.

- Ranjan, D. Prakash (2010), Indian Journal Prev. Soc. Med. Vol. 41.
- Mohan, D. nad Arora, A./ (1976) Prevalence and Parrern of Drug Abuse among Delhi University of College Student, Journal of Indian Medical Association. Vol. 66, pp.28.
- Landis, P (1959). Social Problems, J.B. Lippuncott Co. Chicago. pp.214.

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

छत्तीसगढ़ में हस्तशिल्प कला का विकास एक ऐतिहासिक अध्ययन

•महेन्द्र कुमार सार्वा

सारांश- संस्कृति के गर्भ में पलती हैं, व्यक्तित्व की आकृति, जिसका सर्वोत्तम रूप है छत्तीसगढ़ की आदिवासी हस्तशिल्प। मेकल, सिहावा और रामगिड़ी पर्वत श्रृंखलाओं से घिरा तथा महानदी, शिवनाथ, इन्द्रावती, हसदो और खारून के कलकल निनाद करती पावन जलधारा से अभिसिंचित छत्तीसगढ़ की एक अपनी प्राचीन सांस्कृतिक विरासत है। सिंहनपुर और कबरा पर्वतों में स्थित शिलाचित्र (राक पेंटिंग) से समकालीन चित्रकारों को प्रेरणा मिल रही है, हस्तशिल्प इन वस्तुओं को तैयार करने वाले परम्परावादी कारीगरों की सांस्कृतिक पहचान का दर्पण है। हस्तशिल्प के प्रमाण मोहन जोदड़ो व हडप्पा संस्कृति के समय से ही प्राप्त है। हस्तकला ऐसे कलात्मक कार्य को कहते हैं, जो मुख्यतः हाथ से बनाया जाता है। ऐसी कलाओं का धार्मिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व होता है। भारतीय अर्थव्यवस्था में धातु शिल्प की मुख्य भूमिका है, यह कुटीर उद्योग लाखों लोगों को रोजगार उपलब्ध कराता है तथा भारतीय कला संस्कृति और विरासत को भी अभिव्यक्त करता है। आदिवासी समुदाय प्रतिभाशाली और रचनात्मक होते हैं और उनकी यह विशेषता उनके पारंपरिक हस्तशिल्प में झलकती है। छत्तीसगढ़ अंचल भारतवर्ष में हस्तकला धातुकला के रूप में प्रसिद्ध हैं। यहाँ के शिल्पी अपनी अनुपम कलाकृति के कारण विदेशों में भारत का प्रतिनिधित्व भी कर चुके हैं। छत्तीसगढ़ की आदिवासी क्षेत्रों में विशेष कर बस्तर आर्ट पूरे भारत वर्ष में प्रसिद्ध हैं। छत्तीसगढ़ में काष्ठ कला तथा धातुकला दोनों का निर्माण यहाँ के शिल्पियों द्वारा किया जाता हैं। इस पारम्परिक कला को आज भी आदिवासी समाज जीवित रखे हैं। लकड़ी पर नक्काशी का कार्य, बांस की बनी वस्तुएं/फर्नीचर, कांसा धातु से बने शिल्प, मृदुभांड की मूर्त्तियां, जनजाति लोगों के आभूषण, पेंटिंग और मिट्टी से बनी वस्तुएं आदिवासी हस्तशिल्प की कुछ विशेषताएं है। धोकरा से मुख्य आशय, कांस्य धातु या पीतल को ढ़ाले जाने से हैं। छत्तीसगढ़ का गढ़वा समुदाय इस शिल्प-कला से जुड़ा हुआ है। गढ़वा का अर्थ होता है, आकार गढ़ना या सृजन करना। छत्तीसगढ़ की लौह धातु की बनी शिल्प कृतियों और आकृतियों का गहरा रंग उसके अपने ही लोगों की छाप का एहसास कराता है। मिट्टी की मूर्त्ति बनाने की कला छत्तीसगढ़ की कलात्मक अभिव्यक्ति का बखान करते हैं। पक्की मिट्टी की शिल्प तियां तैयार करने के लिए जरूरी विशेषज्ञता और निपुणता कुम्हार समुदाय की एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में पहुंचती रही है। घोटुल के आनन्ददायक वातावरण के अनुरूप उसके दरवाजों और खंभों पर आलिंगनबद्ध जोड़ियों की प्रेममयी आकृतियां खुदी होती है।

मुख्य शब्द - संस्कृति, आदिवासी हस्तशिल्प, शिलाचित्र, कुटीर उद्योग, हस्तकला

छठी सदी से लेकर 12वीं सदी के मध्य तक सर्वपूर्णिमा, सोमवंशी, पांडुवंशी, कालचुरी और नागवंशी शासकों का इस क्षेत्र पर आधिपत्य रहा। वस्तुत: विभिन्न दस्तावेज, ताम्रपत्र,

• सहायक प्राध्यापक- इतिहास शासकीय डी.बी. गर्ल्स पी.जी. ऑटोनोमज कॉलेज रायपुर

सिक्के और पुरातात्त्विक वस्तुओं से हमें उस काल की सांस्कृतिक विरासत और राजनीतिक विकास की जानकारी मिलती है। यह क्षेत्र वर्ष 1732 से लेकर 1818 तक मराठों के शासन के अधीन भी रहा तथा बाद में उसे अंग्रेजों द्वारा नागपुर प्रेसीडेंसी के अधीन ले आया गया था।[1]

भारत की भव्य सांस्कृतिक विरासत और सदियों से क्रमिक रूप से विकास कर रही इस परम्परा की झलक देश भर में निर्मित हस्तशिल्प की विविध रूपो में दिखाई पड़ती है। हसशिल्इन वस्तुओं को तैयार करने वाले परम्परागत कारीगरों की सांस्कृतिक पहचान का दर्पण है। अतीत से ही भारत की कलायें और हस्तशिल्प इसकी सांस्कृतिक और परंपरागत प्रभाव को अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम रहे हैं। भारत के हर प्रदेश में कला की अपनी एक विशेष शैली लोककला के नाम से जाना जाता है। हस्तशिल्प के प्रमाण मोहन जोदड़ो व हडप्पा संस्कृति के समय से ही प्राप्त है, ये इस बात का साक्ष्य है कि हस्शल्प का प्रारंभ व महत्व कई युगों से है।[2] हस्तकला ऐसे कलात्मक कार्य को कहते हैं जो उपयोगी होने के साथ–साथ सजाने के काम आता है तथा जिसे मुख्यत: हाथ से या सरल औजारों की सहायता से ही बनाया जाता है। ऐसी कलाओं का धार्मिक एवं सांस्कृतिक महत्त्व होता है। भारतीय अर्थव्यवस्था में धातु शिल्प की मुख्य भूमिका है यह कुटीर उद्योग लाखों लोगों को रोजगार उपलब्ध कराता है तथा भारतीय कला संस्कृति और विरासत को भी अभिव्यक्त करता है।[3]

भारत के हृदय स्थल पर स्थित छत्तीसगढ़ राज्य प्राकृतिक सुंदरता से सराबोर है और यहां शहरी और ग्रामीण जीवन का अद्‌भुत मिश्रण है। छत्तीसगढ़ राज्य की अपनी वैविध्यपूर्ण संस्कृति है, यहां धर्म कला व इतिहास की त्रिवेणी अविरल रूप से प्रवाहित होती रही है। यह मध्य भारत की सांस्कृतिक भव्यता का केन्द्र है और जो यहां के लोगों की संस्कृति और त्यौहारों में झलकता है। यहां ज्यादातर लोग आदिवासी हैं, जो हिंदी और छत्तीसगढ़ी बोलते हैं। छत्तीसगढ़ के लोगों का संगीत, नृत्य और मदिरा के प्रति प्रेम ही उनकी विशिष्टता की पहचान है।[4] आदिवासी समुदाय बहुत प्रतिभाशाली और रचनात्मक होते हैं और उनकी यह विशेषता उनके पारंपरिक हस्तशिल्प में झलकती है। छत्तीसगढ़ अंचल भारतवर्ष में हस्तकला धातुकला के रूप में प्रसिद्ध हैं। यहाँ के शिल्पी अपनी अनुपम कलाकृति के कारण विदेशों में भारत का प्रतिनिधित्व भी कर चुके हैं। छत्तीसगढ़ की आदिवासी क्षेत्रों में विशेष कर बस्तर आर्ट पूरे भारत वर्ष में प्रसिद्ध हैं। छत्तीसगढ़ में काष्ठ कला तथा धातुकला दोनों का निर्माण यहाँ के शिल्पियों द्वारा किया जाता हैं। इस पारम्परिक कला को आज भी आदिवासी समाज जीवित रखे हैं।[5] छत्तीसगढ़ की हस्तकला एवं शिल्पकला पूरे राज्य को गौरवान्वित करती हैं। देव प्रतिमाओं से लेकर वन्य पशुओं तक, वृक्षों से लेकर फूल–पत्तियों तक इनके विषय रहे हैं। है। पूरे वर्ष भर छत्तीसगढ़ में विभिन्न त्योहारों और मेला, जैसे कि पोला, नवाखाई, दशहरा, दीपावली, होली और गोवर्धन पूजा की धूम–धाम और उल्लास की गुंज सुनाई पड़ती रहती है।[6]

छत्तीसगढ़ की परम्परागत् हस्तशिल्प ने अपनी समृद्ध संस्कृति के दर्शन कराते हुए पर्यटन की संभावना बढ़ाने में उल्लेखनीय प्रगति की है। उनके अन्दर प्रकृति की मौन भव्यता की सहज वृत्ति झलकती है। लकड़ी पर नक्काशी का कार्य, बांस की बनी वस्तुएं/फर्नीचर, कांसा धातु से बने शिल्प, मृदुभांड की मूर्तियां, जनजाति लोगों के आभूषण, पेंटिंग और मिट्टी से बनी वस्तुएं आदिवासी हस्तशिल्प की कुछ विशेषताएं हैं।[7] हस्तशिल्प संस्कृति के किसी अन्य तत्व की भांति पीढ़ियों तक चलता रहता है। पर्यावरण की विपुलता ने अपनी सम्पूर्ण

सूक्ष्मता के साथ उन शिल्पकारों की कल्पनाशीलता पर अमिट छाप छोड़ी है। सभी उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों की अधिकतम क्षमता का उपयोग किया गया है, पत्थरों को तराशकर एक परिष्कृत कार्य को अंजाम दिया गया है, जो पीढ़ियों के लिए प्रेरणा का स्रोत बना हुआ है। दैनिक उपयोग की लगभग सारी वस्तुएं अपने मूल से हटकर महान सौंदर्यपरक मूल्य का एहसास कराने वाली वस्तुओं के रूप में बदल गई है। इसके परिणामस्वरूप, एक स्वदेशी प्रौद्योगिकी का विकास हुआ है जिसकी संकल्पना तो सरल है किन्तु व्यवहारिक तौर पर वे काफी परिष्कृत हैं।[8] छत्तीसगढ़ में प्रचलित हस्तशिल्प का विवरण निम्न है।

1. धोकरा शिल्प- कांस्य शिल्प धातु के ढालने की प्राचीनतम ज्ञात विधियों में से एक है। धोकरा वस्तुओं और आकृतियों से मिलते-जुलते धातु से बने टुकड़े हड़प्पा और मोहनजोदड़ो में मिले हैं जिससे इस विश्वास को बल मिलता है कि यह शिल्प- कला संभवत: प्रागैतिहासिक काल से चली आ रही है।[9] आज यह शिल्प रायगढ़, सरगुजा तथा बस्तर में व्यापक तौर पर चलन में है। धोकरा से मुख्य आशय, लॉस्ट वॉक्स तकनीक का प्रयोग करके कांस्य धातु या पीतल को ढ़ाले जाने से हैं। छत्तीसगढ़ का गढ़वा समुदाय इस शिल्प-कला से जुड़ा हुआ है। गढ़वा का अर्थ होता है 'आकार गढ़ना या सृजन करना।'[10] गढवा द्वारा स्थानीय उपयोग के लिए बहुत सारे उत्पाद तैयार किए जाते हैं, जैसे स्थानीय देवी-देवताओं की मूर्तियां, बर्तन और आभूषण। पारम्परिक लॉस्ट वॉक्स तकनीक जनजातीय पृष्ठभूमि में प्रयुक्त किए जाने की दृष्टि से सरल और आदर्श तकनीक है। शिल्पकार चिकनी मिट्टी से तैयार आकृति को मोम के पतले धागे से लपेटता है फिर दीमक की बांबी से लायी गयी चिकनी मिट्टी का मोटा घोल उसपर चढ़ाया जाता है और उसे सुखाया जाता है, इस दौरान मोम के पिघलने के लिए छोटी सी सुराख छोड़ दी जाती है। आकृति तथा घोल के स्तर के बीच पैदा हुए खाली स्थान को पिघले धातु से भर दिया जाता है, फिर उसे ठंडा होने तथा ठोस आकार ग्रहण करने के लिए छोड़ दिया जाता है। चिकनी मिट्टी की बाहरी परत को तोड़ दिया जाता है और इस प्रकार अंतिम रूप से सुन्दर मूर्तियां तैयार हो जाती है। यह पूरी प्रक्रिया सरल दिखती है, परन्तु इसमें अत्यधिक कुशलता और सूझ-बूझ बरतने की जरूरत होती है। छोटे-छोटे खाली स्थानों के बीच पिघले धातु को एक समान रूप में फैलना चाहिए और मोम का स्थान लेना चाहिए तथा इस दौरान कोई बुलबुला न बनने पाये या कोई स्थान छुट न जाए। धोकरा शिल्प के निर्माण में गाय का गोबर, धान की भूसी और लाल मिट्टी का भी प्रयोग किया जाता है, गढ़वा द्वारा प्रयोग किए जाने वाले सभी कच्चे मालों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान मधुमक्खी के मोम का है। शिल्पकृतियां तैयार करने के लिए आकृति बनाने के अलावा उसे सजाने में मोम के तारों और टुकड़ों का भी प्रयोग किया जाता है। इसका प्रयोग इसलिए किया जाता है क्योंकि इसमें प्लास्टिक के काफी अंश होते हैं तथा इसके अन्दर लचीलापन होता है जिससे शिल्पकार को अस्थायी किन्तु सशक्त और दुरूह प्रारूप तैयार करने में मदद मिलती है।[10]

पारंपरिक टोकरे से इस शिल्प-कला की उत्पत्ति को आधार मिला। टोकरे बनाने वाले रस्सी में घास को लपेट देते हैं, फिर रस्सी को मोड़ कर विभिन्न आकार दे दिया जाता है। वही तकनीक बाद में धातु शिल्प-कला में अपना ली गयी, क्योंकि निवासी धातु के प्रयोग करने से बहुत पहले से प्राकृतिक उत्पादों का निर्भर कर रहे थे। धातु के बने पायलों जिसमें टोकरी में दिखने वाले दाने के समान डिजाइन बने हुए होते हैं और खपची से बनी

सुन्दर-सुन्दर टोकरियां भी इस प्रकार के परिवर्तन की कहानी कहते हैं।[11]

2. लौह शिल्प- छत्तीसगढ़ की लौह धातु की बनी शिल्प कृतियों और आकृतियों का गहरा रंग उसके अपने ही लोगों की छाप का एहसास कराता है। दोनों में रूखापन लेकिन उनके अन्दर एक आडंबरहीन लालित्य और गरिमा का भाव अंतर्निहित रहता है। आदिवासी लोगों में पर्यावरण के प्रति एक सहज आदर भाव मौजूद रहता है और वह इस बात से दृष्टिगोचर होता है कि इस शिल्प के लिए प्रयुक्त कच्चे माल में प्रमुखतौर पर लोहे का छीजन होता है और चेरांगदुगड़ी का खान इसके आपूर्ति का साधन है। इस शिल्प निर्माण की विधि सरल किन्तु प्रभावशाली है।[12] भट्टियों के अन्दर धातु को पीट-पीट कर लचीला बनाया जाता है और फिर बमर और सरसी का प्रयोग करके फिर इसे सावधानी पूर्वक आकार दे दिया जाता है। इस शिल्प -कला की कारीगरी इस तथ्य से प्रभावित होती है कि उत्पादों में कहीं भी जोड़ नजर नहीं आता है। उत्पाद के तैयार हो जाने पर इसकी चमक बढ़ाने के लिए इसमें वार्निश की कोटिंग लगाई जाती है। लैम्प, मोमबत्ती स्टैंड, संगीतकारों की मूर्त्तियां, शेरों, बन्दरों और हिरण की आकृति वाले खिलौने, देवी-देवताओं की मूर्त्तियां और अन्य आकृतियां तथा झारी और लामन दीया जैसे कर्मकांड की वस्तुएं इन उत्पादों की श्रेणी में आते हैं। बस्तर के कोंडागांव, गुनागांव और उमारगांव इस शिल्प के प्रमुख केन्द्र हैं।[13]

3.माटी शिल्प- मिट्टी की मूर्ति बनाने की कला छत्तीसगढ़ की कलात्मक अभिव्यक्ति की उत्पत्ति की प्रारंभिक बिन्दु है। यहां के वनों के अन्दर विभिन्न प्रकार की लकड़ियों की भरमार होने तथा धातु अयस्कों से भरपूर होने के बावजूद मृदु मिट्टी से बनाई गई त्रिआयामी आकृतियों से मानव और पर्यावरण के बीच समन्वय प्राप्त करने की जरूरी ललक दिखाई पड़ती है। पक्की मिट्टी के बर्तन अपनी भौतिक आकृति से कहीं अधिक गहरे अर्थ में छत्तीसगढ़ के जनजाति लोगों द्वारा तैयार किए जाने वाले सभी प्रकार के हस्तशिल्पों की परम्परा का बखान करते हैं।[14] पक्की मिट्टी की शिल्पकृतियां तैयार करने के लिए जरूरी विशेषज्ञता और निपुणता कुम्हार समुदाय की एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में पहुंचती रही है। धीमी आंचों पर कई घंटे तक पकाने से इन कृतियों में मजबूती आ जाती है। अन्त में उन कृतियों पर नदी की गहराई से लायी मिट्टी का घोल चढ़ाया जाता है जिससे कृतियों में लालिमापूर्ण गेरूआ रंग चढ़ जाता है। कुम्हार सुन्दर-सुन्दर मटका, हंडिया और दीये गढ़ते हैं। हाथियों, घोड़ों, सांडों जैसे जानवरों की आकृतियाॅ इस शिल्प-कला की प्रमुख वस्तुओं में से हैं। सुराही और विक लैम्प बनाने में स्वदेशी प्रौद्योगिकी का वृहत परिष्कृत रूप और निपुणता झलकती है।[15]

4. काष्ठ शिल्प-कला- छत्तीसगढ़ में शीशम, सागौन, साल आदि के सघन वन पाए जाते हैं। प्रारंभ में, आदिवासी जंगल की लकड़ियों का उपयोग ईंधन जलाने और घर बनाने में करते थे। समय गुजरने के साथ ही उन लोगों ने लकड़ी में नक्काशी खोदने और काष्ठकला के परिष्कृत रूप को सीख लिया, जिससे उनके बीच इस शिल्प-कला में निपुण बढ़ई समुदाय का अभ्युदय हुआ। फिर बढ़ई के दो समूह एक कृषि औजार बनाने वाले तथा दूसरे सजावटी और कुल चिंहों के स्तंभ (टोटमिक पिलर) आदि बनाने वाले बन गए। उन लोगों के द्वारा लकड़ी या बांस के बने सरल औजारों का प्रयोग किया जाता है। वृक्षों से छाल उतारने तथा लकड़ी के सतह को चिकना करने के कार्य में कांस को लगाया जाता है। लकड़ी से छाल उतारने, उसकी रगड़ाई करने तथा उसे आकार देने का कार्य

सम्पन्न हो जाने के बाद पोह पिसेल और छोटे-छोटे साला पोह का इस्तेमाल किया जाता है।[16] घोटुल ऐसा स्थान है जहां बढ़ई की शिल्पकला देखने को मिलती है। मुरिया जहां युवा विश्राम करते हैं और लकड़ी के नक्काशीदार पाठ जिसे कुतुअल कहा जाता है, पर उन लोगों के द्वारा नृत्य किया जाता है तथा नृत्य के दौरान बजाये जाने वाले ड्रम भी लकड़ी के बने होते हैं।[17] आज भी लड़कों द्वारा लड़कियों को अपने प्यार के उपहार स्वरूप लकड़ी की नक्काशीदार कंघी भेंट की जाती है। घोटुल के आनन्ददायक वातावरण के अनुरूप उसके दरवाजों और खंभों पर आनन्ददायक मुद्रा में आलिंगनबद्ध जोड़ियों की प्रेममयी आकृतियां खुदी होती है। इसके साथ-साथ कंघी, सूरज और चन्द्रमा, फूलों और ज्यामिति आकार भी उन पर खुदे होते हैं। उन क्षेत्रों के छतें, दरवाजे और लेंटल विभिन्न प्रकार के लकड़ियों के बने होते हैं, जो बड़े ही सुन्दर और आकर्षक दिखते हैं। शिल्पकार विभिन्न प्रकार की सुगंधित लकड़ियों का प्रयोग करके बांसुरी, मास्क और मूर्त्तियां भी बनाते हैं।[18]

निष्कर्ष- निष्कर्षतः भारत की आदिवासी कलाओं में पारंपरिक आदिवासी बस्तर कला दुनिया भर में अनुपम है। इस कला का विकास बस्तर के आदिवासी समुदाय द्वारा किया जाता है। इस दुर्लभ कला को बस्तरवासियों ने पीड़ी दर पीड़ी संरक्षित करते रहे है लेकिन प्रचार के अभाव में यह दुर्लभ कलाकृति साप्ताहिक हाट एवं बाजारों तक ही सीमित है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. गुप्त प्यारेलाल " प्राचीन छत्तीसगढ़" पं. रविशंकर शुक्ल वि. वि. रायपुर छ. ग. 1973 पृ. 8
2. गुप्ता, मदनलाल (2003) - छत्तीसगढ़ की संस्कृति एवं लोक आयाम के विभिन्न स्वरूप, भारतेंदु साहित्य समिति बिलासपुर छ.ग. पृ. 12
3. अलंग संजय "छत्तीसगढ़ के हस्तशिल्प" अनामिका प्रकाशन इलाहाबाद 2015 पृ. 23
4. शर्मा गौरी "छत्तीसगढ़ दर्पण" पं. रविशंकर विश्वविद्यालय रायपुर छ. ग. पृ. 8
5. वैष्णव हरिहर "बस्तर की आदिवासी एवं लोक हस्तशिल्प परम्परा" राधाकृष्ण प्रकाशन 2014 पृ. 13
6. अलंग संजय "छत्तीसगढ़ के हस्तशिल्प" अनामिका प्रकाशन इलाहाबाद 2015 पृ. 25
7. वैष्णव हरिहर "बस्तर की आदिवासी एवं लोक हस्तशिल्प परम्परा" राधाकृष्ण प्रकाशन 2014 पृ. 15
8. जगदलपुरी लाला "बस्तर इतिहास संस्कृति म. प्र. हिंदी ग्रंथ अकादमी तृतीय आवृति भोपाल 2007 पृ. 11
9. नारायण राव, उदय "भारतीय कला" लोकभारती प्रकाशन 2008 पृ. 5
10. वैष्णव हरिहर "बस्तर की आदिवासी एवं लोक हस्तशिल्प परम्परा" राधाकृष्ण प्रकाशन 2014
11. शुक्ला, शांता, "छत्तीसगढ़ का सामाजिक-आर्थिक इतिहास" नेशनल पब्लिक हाऊस, नई दिल्ली, 1998 पृ. 12
12. सोनी रमाकांत, "चांपा अतीत से वर्तमान तक" अक्षर प्रकाशन 2008 पृ. 1
13. अंलग संजय छत्तीसगढ़ इतिहास एवं संस्कृति 2014 पृ. 15
14. शुक्ल हीरालाल, मिश्र रमेंद्रनाथ "समग्र छत्तीसगढ़" छ. ग. हिंदी ग्रंथ अकादमी 2013 पृ. 67
15. त्यागी अमर "लेट्स नो हेंडीक्राफ्ट ऑफ इंडिया" हिंदी बुक सेंटर न्यू देलही 2008 पृ. 1
16. माहेश्वरी मुकेश "छत्तीसगढ़ एक परिचय" मैग्रवल हिल पब्लिकेशन नई दिल्ली 2011 पृ. 11
17. शर्मा गौरी "छत्तीसगढ़ दर्पण" पं. रविशंकर विश्वविद्यालय रायपुर छ. ग. पृ. 2
18. एल्विन वेरियर "ट्राइबल आर्ट ऑफ मिडिल इंडिया" बांबे 1951 पृ. 41

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

नई शिक्षा निति की गुणवत्ता

• दिनेश कुमार

सारांश- देश को विश्व गुरु का दर्जा पुनः प्राप्त करने के लिए शिक्षा के सभी स्तरों में गुणात्मक सुधार की आवश्यकता है। शिक्षण व्यवसाय में रोजगार की प्राप्ति हेतु नहीं बल्कि राष्ट्र को उत्कृष्ट बनाने में अपना संपूर्ण जीवन तत्पर करने वाले अध्यापकों की आवश्यकता है। शिक्षक को जिज्ञासु, नैतिक एवं संवैधानिक मूल्यों का पालन करने वाला, शिक्षण बाउंड्री के इतर व स्थानीय विशेषज्ञों से मार्ग दर्शन एवं प्राचीन व नवीन ज्ञान को छात्रों के मस्तिष्क तक पहुंचाने वाला होना चाहिए। वह विद्यार्थियों को मानव मूल्यों के संस्कारों से अभिभूत कर सके। शिक्षा व्यवस्था में मौलिक गुण, व्यापकता, बहुविषयक शिक्षा एवं 21वीं सदी लक्षित कौशल प्रदान करने वाली होनी चाहिए। शिक्षा को भविष्य के लिए, व्यक्तियों को सशक्त बनाने और रचनात्मक नवाचार के लिए तैयार करना होगा। आज आवश्यकता है तार्किक चिंतन, संवाद, समस्याओं का समाधान, रचनात्मकता एवं सांस्कृतिक रूप से सक्षम, वैश्विक परिदृश्य के प्रति समझ की एवं समाज में भाईचारा, समूह में कार्य करने की क्षमता, राष्ट्रहित की भावना जागृत करने वाली शिक्षा नीति की। ये सभी गुण हमारे अंदर तभी आ सकते हैं, जब शिक्षा सस्ती व आम आदमी के बालकों एवं बालिकाओं को सुलभता से प्राप्त हो सके। समाज में समानता लाने के लिए अनुसूचित जाति के बालकों एवं बालिकाओं के लिए प्राथमिक शिक्षा से लेकर व्यावसायिक व उच्च शिक्षा निःशुल्क हो, उन्हें शिक्षा के प्रति प्रेरित करने के लिए छात्रवृत्तियां प्रदान की जाएं।शिक्षा का स्तर विश्वस्तरीय बनाने के लिए सभी विश्वविद्यालयों व महाविद्यालयों में शोध कार्य एवं उनकी की गुणवत्ता पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। विश्वविद्यालयों में हो रहे पीएच.डी शोध कार्यों के निष्कर्षों को सरकार द्वारा नीतियों में शामिल कर उनको देश व समाज के विकास हेतु उचित व श्रेष्ठ नीतियों का निर्माण करना चाहिए।

मुख्य शब्द - शिक्षा, छात्र, कौशल युक्त शिक्षा, संचार

प्रस्तावना - भारत में शिक्षा का स्तर सुधारने के लिए नई शिक्षा नीति 2020 लागू की जा रही है। भारत के शीर्ष 100 की रैंकिंग में आने वाले शिक्षण संस्थानों से समाज के गरीब और वंचित वर्गों को ऑनलाइन डिग्री देने की नई पहल भी की गई है। जिसका उद्देश्य ऐसे व्यक्तियों को पढ़ाई से जोड़ने का है जो किसी कारण वश अपनी उच्च शिक्षा पूर्ण करने में असमर्थ हैं। नई शिक्षा नीति को लेकर राज्यों से सुझाव मांगे गए थे जिसके उत्तर में विभिन्न राज्यों से दो लाख से ज्यादा सुझाव आए।

नई शिक्षा नीति आयोग की तर्ज पर राष्ट्रीय शिक्षा आयोग बनेगा, जिसके अध्यक्ष भारत के प्रधानमंत्री होंगे। नई शिक्षा नीति में स्कूलों में तीन भाषाएं पढ़ाई जाने का प्रस्ताव है। वर्ष 2025 तक 3.6 वर्ष की उम्र के सभी बच्चों को नि:शुल्क शिक्षा मुहैया कराने का

• सहायक प्राध्यापक, शिक्षाशास्त्र विद्याशाखा, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

उद्देश्य है एवं वर्ष 2030 तक 3-18 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को मुफ्त व अनिवार्य स्कूली शिक्षा मुहैया कराना, स्कूलों तक बच्चों की पहुंच सुनिश्चित कराने का उद्देश्य है। वर्ष 2022तक पाठ्यक्रम और शिक्षण के तरीके में बदलाव होंगे स्कूली शिक्षा में प्रतिभाशाली छात्रों के लिए प्रधानमंत्री इनोवेटिव लर्निंग प्रोग्राम ध्रुव नाम से नई योजना शुरू की गई है।

लिबरल आर्ट एजुकेशन- भारत की नई शिक्षा नीति को इस प्रकार तैयार किया जा रहा है कि यह देश के प्रत्येक नागरिक के जीवन को स्पर्श कर सके। यह आम आदमी के जीवन का सुधार करते हुए, विद्यार्थियों में कौशल युक्त शिक्षा के साथ उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा का संचार करेगी। प्रारंभिक शिक्षा, अनिवार्य व मुफ्त प्रदान की जाएगी एवं विद्यार्थियों में रचनात्मकता और मौलिकता की सोच को विकसित करने और उन्हें नया करने या नवीन शोधों के लिए उन्हें लिबरल आर्ट एजुकेशन में शामिल किया जाएगा।

लिबरल आर्ट शिक्षा की मजबूत बुनियाद है एवं इसमें विभिन्न स्तरों पर व्यावसायिक शिक्षा का प्रावधान है। लिबरल एजुकेशन विद्यार्थियों को भविष्य में विभिन्न रोजगार परिदृश्य के लिए अपनी राह तैयार करने, साथ ही उतने ही पैसे में दूसरी भूमिकाएं निभाने हेतु तैयार करते हैं। एक ज्ञानवान समाज के लक्ष्य को हासिल करने के लिए हमें एक उत्तरदायी शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता है। नई शिक्षा नीति के माध्यम से हमें राष्ट्र में बड़े परिवर्तन व विकास दिखाई दे रहे हैं।

शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम- भारत में शिक्षक शिक्षा में गुणवत्ता सुधार की ओर कदम बढ़ाते हुए शिक्षा को बहुअनुशासनिक महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में सीमित किया जाएगा। 2030 तक शिक्षण के लिए 4 वर्षीय लिबरल एकीकृत बी.एड. डिग्री एक न्यूनतम योग्यता होगी। 4 वर्षीय बी.एड. डिग्री कार्यक्रम के साथ 2 वर्षीय बी.एड./डी. एल.एड. पाठ्यक्रम भी संचालित किये जायेगें। प्रशिक्षण में नवाचार के साथ शिक्षण अध्ययन पर भी अधिक बल दिया जाएगा। शिक्षकों की कमी को दूर करने व स्थानीय व्यक्ति, यदि किसी विशेष क्षेत्र में विशेष योग्यता या गुण रखता है तब उनको स्पेशल इंस्ट्रक्टर के रूप में नियुक्त किया जाएगा। प्रत्येक बी.एड. कार्यक्रम को 10 से 15 स्कूलों के साथ संबद्ध कर दिया जाएगा वहां पर छात्र अध्यापक व्यावहारिक शिक्षण प्रशिक्षण प्राप्त कर सकेगें। स्कूल में एक शिक्षक द्वारा इनका निरीक्षण किया जाएगा। छात्राध्यापक शिक्षक से फीडबैक प्राप्त करके प्रशिक्षण व शिक्षण में सुधार करेगें। शिक्षक/मेंटर के मार्गदर्शक में B.Ed. के विद्यार्थी रिमेडियल कार्य और उच्च शिक्षण संबंधित कार्य भी करेंगे। लिखित परीक्षा के स्थान पर प्रोजेक्ट, ब्रिक्स, पोर्टफोलियो, कांसेप्ट मेम और माक क्लास रूम आदि प्रक्रियाएं प्रशिक्षण में शामिल होंगी तथा साथ ही मूल्यांकन कार्य भी संपन्न होता रहेगा।

शिक्षा के सम्बन्ध में विश्व नीति- भारत को विश्व में उच्च शिक्षा का पसंदीदा केंद्र बनाने के लिए स्टडी इन इंडिया प्रोग्राम को एशियाई और अफ्रीकी देशों में बढ़ावा दिया जाएगा। इन देशों में आई.एन.डी. सेट परीक्षा कराई जाएगी। इसके तहत भारत में उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिए विदेशी छात्रों को छात्रवृत्ति भी प्रदान की जाएगी। भारत सरकार ने शिक्षा को श्रेष्ठ गंतव्य स्थल के तौर पर विकसित करने की पहल 18 अप्रैल 2018 को

स्टडी इन इंडिया की शुरुआत की थी। स्टडी इन इंडिया नाम से एक वेब पोर्टल भी शुरू किया गया था। यह भारत में पढ़ने के इच्छुक छात्रों के लिए सिंगल विंडो का काम करता है। इस पोर्टल की मदद से ग्रेजुएशन, पोस्ट ग्रेजुएशन, सर्टिफिकेट कोर्स, पीएच डी. आदि पाठ्यक्रम किए जा सकते हैं।

इस योजना में छात्रों को इंजीनियरिंग, मेडिकल फार्मेसी, आर्किटेक्चर आदि राष्ट्रीय स्ट्रीम में दाखिले सहित शोध और इनोवेशन का मौका मिलेगा इसकी पहल में आईआईटी, आईआईएम समेत 160 शैक्षणिक संस्थान एवं विश्वविद्यालय शामिल किए गए हैं। आज भारतीयों की विदेशों में अनेक विभागों में बहुत अधिक मांग है,इसलिए भारत सरकार विदेशों में नौकरियों के अवसर सुलभ कराने के लिए शिक्षकों, नर्सों, चिकित्सा सहायक कर्मियों और देखभाल करने वालों के लिये मानव संसाधन और कौशल विकास मंत्रालय के साथ मिलकर ब्रिज कोर्स की शुरुआत की जाएगी।पीएम कौशल विकास योजना का आरंभ 2015 में हुआ है।

नई शिक्षा नीति व अनुसूचित जाति वर्ग की शिक्षा व रोजगार- भारत सरकार द्वारा नई शिक्षा नीति में अनुसूचित जाति के वर्गों को शिक्षक के तौर पर नियुक्ति प्रदान करने के लिए विशेष प्रावधान करेगी। उन्हें अपनी शिक्षा पूरी करने में सहयोग करने के साथ रोजगार प्रदान करने में प्राथमिकता दी जायेगी। शिक्षा के क्षेत्र में आज निजी शिक्षण संस्थाएं कुकुरमुत्ता की तरह जन्म ले रही हैं, यहां पर सिर्फ धन देकर डिग्री या डिप्लोमा खरीद रहे हैं कल जिनके पास डिग्रियाँ होंगी, वही सरकारी या उच्च पदों को प्राप्त करेंगे। इस वर्ग की ओर अभी ठीक प्रकार से ध्यान दिया जाना आवश्यक है। दलित वर्ग के लिए प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक नि:शुल्क शिक्षा का प्रावधान किया जाए एवं उच्च पदों पर उनको नियुक्त किया जाए। सभी संस्थानों का सरकारीकरण कर प्राइवेट संस्थानों को सख्ती से बंद कर अच्छे संस्थानों को मान्यता प्रदान की जाए, उनके विकास हेतु आरक्षण प्रतिशत को बढ़ाकर संसद द्वारा पुन: प्रमोशन में आरक्षण को बहाल किया जाए। धन की कालाबाजारी को कम करके प्रत्येक गरीब को शिक्षा और रोजगार अवसर प्रदान किये जाए। जिन वर्गों के पास वर्षों से कृषि भूमि है,उन्हें उस कृषि का एक बहुत बड़ा भाग उपलब्ध कराकर उनको मुख्य धारा से जोड़ा जाए तभी हम समाज और दुनिया के सामने सभ्य कहलाने के हकदार होंगे। दूसरी ओर दलित वर्ग को भी जागृत होना होगा। उनको भी उसी नीति पर चल कर अपना विकास करना होगा।

शिक्षा व एफ.डी. आई. - शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए शिक्षा क्षेत्र में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआई) को वरीयता दी जा रही है। शिक्षा के क्षेत्र में निजीकरण पर बल देते हुए उच्च शिक्षा में एफ.डी.आई. को इजाजत दी जा सकती है। ग्रामीण और दूरदराज के छात्रों को आनलाइन माध्यम से डिग्री लेवल के कोर्स कराए जाएंगे। शिक्षा क्षेत्र में बेहतर शिक्षकों और अन्य सुविधाओं के लिए बड़े स्तर पर पूंजी जुटाई जाएगी, विश्व भर के सर्वश्रेष्ठ विश्वविद्यालय भारत में अपना परिसर खोल पाएंगे। इससे विदेशी शिक्षा पाने का सपना देश में ही रहकर पूरा हो सकेगा। शिक्षा के क्षेत्र में इतना अधिक व्यय करने का उद्देश्य, देश को सभी क्षेत्रों में आगे ले जाने के लिए एक बड़ा शिक्षित वर्ग तैयार करना है। दुनिया इस समय ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था की ओर अग्रसर है। विश्व ज्ञान

अर्थव्यवस्था में शिक्षा एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है।

नई शिक्षा नीति में शिक्षा पर व्यय- भारत सरकार ने वर्ष 2020-21 में शिक्षा पर 99,311 करोड़, कौशल विकास पर 3000 करोड़, केंद्रीय विद्यालयों के लिए 5516.50 करोड़ रु. एवं नवोदय विद्यालय समिति को 3300 करोड़ रुपये शिक्षा पर व्यय करने हेतु प्रदान किए गए हैं। यूजीसी को 4693.20 करोड़ और एआईसीटीई को 5109.20 करोड़ रुपए आवंटित किए गए हैं।

नई शिक्षा नीति को लागू करने के लिए "इक्कीस" नाम में से शुरू की गई नई योजना के तहत उच्च शिक्षा के लिए 1413 करोड़ प्रदान किए गए। केंद्रीय विश्वविद्यालय को शिक्षा के विकास हेतु 8657.90 करोड़ रुपये प्रदान किए गए। स्टार्टअप इंडिया इनोवेटिव इन हायर एजुकेशन को वर्ष 2020 में 100 करोड़ प्रदान किए गए।

राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन (NRF) - शोध उच्च शिक्षा का महत्वपूर्ण भाग है उच्च शिक्षा में शोध के बिना गुणात्मक सुधार संभव नहीं है। इसलिए सभी देशों की सरकारें उच्च शिक्षा में शोध को बहुत अधिक महत्व दे रही हैं। यूजीसी, आई.सी.एस.एस.आर., मानव संसाधन विभाग, शोध संस्थान केंद्र व राज्य सरकारों के अनेक विभाग शोध कराने के लिए बड़ी से बड़ी धनराशि शोधकर्ताओं को प्रदान कर रहे हैं। उच्च शिक्षा में जूनियर फैलोशिप व सीनियर फैलोशिप भी प्रदान की जा रही है। लेकिन यदि आज शोध के संबंध में स्थिति का सही आंकलन किया जाए तो आज भी देश के अधिकांश विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में बहुत कम शोध कार्य किए जा रहे हैं । विशेष रूप से राज्य विश्वविद्यालयों में यह एक नवजात अवस्था में है। इसके अलावा अधिकांश उच्च शिक्षा संस्थानों में गुणवत्ता युक्त अनुसंधान विचारों और प्रस्तावों के लिए बहुत कम धनराशि उपलब्ध है। विश्वविद्यालयों के पास अपने संसाधन बहुत कम है, उन्हें अनुदान के लिए केंद्र व राज्य सरकार पर निर्भर रहना पड़ता है। इसलिए शोध की गुणवत्ता व गुणात्मकता का प्रभावशाली रूप दिखाई नहीं दे रहा है। नई शिक्षा नीति में सभी विषयों में उत्कृष्ट एवं रचनात्मक अनुसंधान प्रस्ताव के लिए एक राष्ट्रीय अनुसंधान फाउंडेशन (NRF) की स्थापना की जाएगी। शोधकर्ता के शोध कार्यो की समीक्षा के आधार पर अनुदान प्रदान किया जाएगा।एन.आर.एस शोधकर्ताओं, सरकार, उद्योग और मंत्रालयों के बीच संपर्क के रूप में कार्य करेगा। एन.आर.एस शोधकर्ताओं को कार्य के आधार पर पुरस्कारों, सेमीनारों के माध्यम से फंडिंग एवं उत्कृष्ट शोध उपलब्धियों को मान्यता भी प्रदान करेगा।

विश्वविद्यालयों में शिक्षा के विभागों में नवाचार और शोध को विकसित करने की बहुत अधिक आवश्यकता है। शिक्षाशास्त्र या शिक्षक शिक्षा विभाग अपनी अलग-अलग विशेषताओं के साथ पेशेवर और उन शोधकर्ताओं के लिए शिक्षा के अलग-अलग क्षेत्र जिनमें विभिन्न पाठयक्रम संबंधित क्षेत्र जैसे शिक्षा प्राप्ति अध्ययन, मूल्यांकन और आकलन, नेतृत्व और प्रबंधन नीति, अध्ययन शिक्षा में गुणात्मक सुधार व उच्च मुद्दों के साथ शोध कार्य पर भी सर्वाधिक बल दिया जायेगा। जिसमें शोध विद्यार्थियों द्वारा विभागों में रहकर ही शोध कार्य को शीघ्रता से पूर्ण कर शिक्षा के विकास व राष्ट्र की नीतियों के निर्माण में सहयोग प्रदान किया जा सकेगा।

उच्च शिक्षा व भविष्योन्मुखी दूर दृष्टि- भारत में उच्च शिक्षा के विकास हेतु 15

अगस्त 1948 को विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग का गठन किया गया था। इस आयोग द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में परिवर्तन और सुधार की प्रक्रिया आरंभ की गई। विश्वविद्यालय आयोग ने उच्च शिक्षा के तीन स्तरों स्नातक, स्नातकोत्तर और अनुसंधान में गुणात्मक सुधार की बात की तदुपरान्त शिक्षा में सुधार हेतु अनेक कमीशनों का गठन किया गया। शिक्षा में सुधार की इस दिशा में भारत में नई शिक्षा नीति वर्ष 2020 को अति शीघ्र लागू किया जाएगा, जिसका उद्देश्य, शिक्षा प्रत्येक व्यक्ति के द्वार पर उपलब्ध हो सके। आज उच्च शिक्षा अनेक माध्यमों से रेगुलर मोड, दूरस्थ शिक्षा, पत्राचार शिक्षा के माध्यम से प्रदान की जा रही है, लेकिन नई शिक्षा नीति में आनलाइन प्रक्रिया के माध्यम को सर्वाधिक बल दिया जा रहा है। आज विद्यार्थो देश के किसी भी कोने में बैठ कर किसी भी उच्च व सर्वोच्च संस्थानों में प्रवेश प्राप्त कर अपने घर से ही उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। उच्च शिक्षा की गुणवत्ता में बढ़ोत्तरी के लिए नई शिक्षा नीति में विद्यार्थियों द्वारा अपना पाठ्यक्रम अनेक विश्वविद्यालयों उच्च शिक्षा संस्थानों व विभिन्न शिक्षकों के माध्यम से अपनी शिक्षा पूर्ण कर सकेगा। एक विश्वविद्यालय के शिक्षक अन्य विश्वविद्यालयों में आकर अपने ज्ञान की धारा को प्रभावित कर विद्यार्थियों को लाभान्वित कर सकेंगे। नई शिक्षा नीति में यह भी प्रावधान किया गया है कि उच्च शिक्षा के विकास हेतु विदेशों से विशेषज्ञों व शिक्षकों को आमंत्रित कर उनके ज्ञान से भारतीय विश्वविद्यालयों में अध्यनरत विद्यार्थियों को लाभान्वित कराया जाएगा। भारतीय भी अपने ज्ञान का लोहा मनवाने व उच्च शिक्षा प्रदान करने के लिए विदेशों में जाएंगे इस प्रकार हमारी शिक्षा का स्तर विश्वस्तरीय बनाने का प्रयास नई शिक्षा नीति में किया जा रहा है। यह व्यवसायिक पाठयक्रम प्रौद्योगिकी कानून व अन्य शिक्षा में भी इस प्रक्रिया व नीति को लागू किया जाएगा।

उच्च शिक्षा के स्तर में सुधार हेतु तीन प्रकार के विश्वविद्यालयों के रूप में मोडीफिकेशन किया जाएगा। जिसमें सर्वप्रथम उच्च शिक्षा व शोध कार्य अंतरराष्ट्रीय स्तर के होंगे। दूसरे प्रकार के संस्थानों में मास्टर डिग्री कोर्सेस उच्च गुणवत्ता वाले संचालित होंगे। तीसरे प्रकार के स्नातक शिक्षा प्रदान करने वाले विश्वविद्यालय उच्च शिक्षा संस्थान होंगे। शिक्षा की गुणवत्ता अभी भी एक बड़ी चुनौती बनी हुई है, जबकि उच्च शिक्षा में जी.ई.आर. में 25 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इस नीति का उद्देश्य वर्ष 2035 तक जी.ई.आर.को 50 प्रतिशत तक पहुंचाना है। यह हमारे युवाओं की आकांक्षाओं को पूरा करने, ज्ञान विधि के साथ रोजगार को बढ़ाने वाला साबित होगा।

निष्कर्ष- नई शिक्षा नीति 2020 भारत के लिए वरदान सिद्ध होगी, इसके द्वारा प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा निश्चित रूप से भविष्य को उज्जवल बनाने व अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारतीयों को पहचान बनाने में मददगार सिद्ध होगी। नई शिक्षा नीति में सभी वर्गों के बालकों के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं ताकि वह अपने जीवन को सही दिशा देने के लिए सही शिक्षा प्राप्त कर सकें। नई शिक्षा के माध्यम से जहां कौशल शिक्षा के को बढ़ावा प्राप्त होगा वही शोध व नवाचार पर भी विशेष ध्यान दिया गया है। आज हमारी केंद्र व राज्य सरकारें सर्वाधिक शोध पर बहुत अधिक बल दे रही हैं जो आज के समय की आवश्यकता भी है। नई शिक्षा नीति में सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों को प्रोत्साहन करने

के लिए नि:शुल्क शिक्षा और छात्रवृत्तियों का प्रावधान किया गया है। देश के विकास व बदलते परिवेश को ध्यान में रखते हुए नई शिक्षा नीति 2020 भारतीय संस्कृति व आधुनिक शिक्षा के रूप में हमें दिखाई दे रही है। शिक्षा भविष्य के विकास का आधार है। नई शिक्षा नीति में सभी वर्गों के लिए समान शिक्षा की व्यवस्था की गई है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

- नई शिक्षा नीति 2020
- 26 नवम्बर 2020 अमर उजाला, हल्द्वानी, नैनीताल उत्तराखंड
- 29 नवम्बर 2020 दैनिक जागरण, हल्द्वानी, नैनीताल उत्तराखंड
- प्रतियोगिता दर्पण 2020
- इंटरनेट/वेबसाईट
- रिपोर्ट आफ हायर एजुकेशन भारत सरकार
- सारांश- नई शिक्षा नीति 2020

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

आधुनिक जीवन में कुँड़ुख बोली एवं लिपि की स्थिति का अध्ययन

• बाल किशोर राम भगत

सारांश- उराँव कुँड़ुख जनजाति छत्तीसगढ़ के उत्तरपूर्व छोटानागपुर, जशपुर, सरगुजा तथा उडिसा के पश्चिमांचल क्षेत्र में निवास करती हैं। उराँव जनजाति की एक भाषा है, जिसे उराँव लोग कुँड़ुख कत्था अभिहित करते हैं। उराँव अपनी भाषा में अपने को कुँड़ुख कहते हैं । कुँड़ुख शब्द का संबंध संस्कृत धातु कर्ष (हल चलाना) से है जो कर्षण से होकर कुषर, कुँड़ुखर, कुँड़ुख हो गया। कर्षण से कुँडखर में परिवर्तन ष से ख होना नासिकता से संबंध रखता है।

मुख्य शब्द - जनजाति, भाषा, कुँड़ुख कत्था, कर्ष

उराँव कुँड़ुख जनजाति छत्तीसगढ़ के उत्तरपूर्व छोटानागपुर, जशपुर, सरगुजा तथा उडीसा के पश्चिमांचल क्षेत्र में निवास करती है। उराँव जनजाति की एक भाषा है, जिसे उराँव लोग कुँड़ुख कत्था अभिहित करते हैं। उराँव अपनी भाषा में अपने को कुँड़ुख कहते हैं। कुँड़ुख शब्द का संबंध संस्कृत धातु 'कर्ष' (हल चलाना) से है जो कर्षण से होकर कुषर, कुँड़ुखर, कुँड़ुख हो गया। कर्षण से कुँडखर में परिवर्तन ''ष'' से ''ख'' होना नासिकता से संबंध रखता है।

19 वीं शदी में भारतीय जनता की शारीरिक रचना तथा नस्ल पहचानने के लिए हिन्दुस्तान पर प्रजाति का सिद्धांत लागू किया गया। इस अध्ययन के परिणाम स्वरूप उराँव जनजातियों को द्रविड़ रेस का माना गया। आज संपूर्ण भारत में उराँव जनजातियों की संख्या लगभग 30 लाख है, इतिहासकारों का कहना है कि द्रविड़ भाषा बोलने वालों के पूर्वज पश्चिमी एशिया से आये थे। सिंधु सभ्यता तथा समेर सभ्यता में समानता के कारण विद्वानों का मानना है कि द्रविड़ भाषा बोलने वालों के पूर्वज भू-मध्यसागरीय इलाकों से पूर्व की ओर बढ़े और ईराक-इरान पार करते हुए लगभग 3500 ई.पू. में भारत वर्ष के सिंधु घाटी में आकर बस गये और यहाँ पर अपने सुन्दर नगर और सुव्यवस्थित शासन की स्थापना की तथा अपनी भाषा संस्कृति एवं सभ्यता को विकसित किया।

1750 ई.पू. में मध्य एशिया से आये आर्य जातियों से द्रविड़ों का संघर्ष हुआ, इस लड़ाई में आर्यो की जीत हुई। द्रविड़ लोग सिंघु घाटी छोड़ कर उत्तर, दक्षिण और पूर्व दिशा में जान बचाकर पलायन किये तथा वर्तमान आंध्रप्रदेश,तमिलनाडु, केरल आदि राज्यों में बस गये और कुछ लोग बलूचिस्तान और अफगानिस्तान के पहाड़ी इलाकों में पहुचे। उराँव भाषा बोलने वाले जो हड़प्पा क्षेत्र में भारी संख्या में थे, गंगा के आस-पास

• शोधार्थी, के.एम.टी.शासकीय कन्या महाविद्यालय,रायगढ़, विश्वविद्यालय- अटल बिहारी वाजपेयी विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)

और कैमूर पहाड़ में जा पहुँचे। 800 –900 ई.पूर्व में वे गंगा–यमुना के मैदान को पार करके शाहाबाद में बस गये।

7 वीं शताब्दी ई.पू. में उरॉव लोगों का राज्य रोहतास पठार में था, उन्होंने न केवल अपना राज्य स्थापित किया बल्कि एक मजबूत गढ़ अर्थात रोहतास गढ़ का निर्माण किया, जिसके खण्डहर आज भी इसके प्रमाण देते हैं। 600 ई.पू. में चेरों तथा उरॉवों में संघर्ष हुआ जिसमें उरॉवों की पराजय हुई। इस पराजय के परिणाम स्वरूप उरॉव लोगों ने रोहतासगढ़ छोड़ दिया तथा वर्तमान छोटा नागपुर क्षेत्र छत्तीसगढ़, झारखण्ड तथा उड़ीसा में बस गये।

कुँडख एक भाषा है साथ ही जाति भी। कुँडुख लोगों के इतिहास के बारे में कहा जाता है कि कुँडुख लोग द्राविड़ मूल के हैं तथा इनकी भाषा भी द्राविड़ परिवार की है। द्राविड़ भाषा परिवार में तामिल, तेलगू, कन्नड़, मलायालम, कुँडुख आदि भाषाएं आती है। इस परिवार में कुँडुख भाषा ही अर्द्ध विकसित रह गयी है। कुँडुख भाषा का आधार और संस्कृति का धरोहर भी है। यदि भाषा और संस्कृति दोनों ही समाप्त हो जाएं तो उस समाज की पहचान ही समाप्त हो जाती है। ऐसा ही स्थिति कुँडुख समाज के साथ है। कुँडुख भले ही दूसरे आदिवासियों की तुलना में आधुनिक समाज के भौतिकवाद को अधिक अपनाया हो तथा मुख्य धारा से जुड़कर अग्रणी स्थान प्राप्त किया हो किन्तु अन्य समाज के सम्पर्क एवं बाहरी लोगों के घुस–पैठ से कुँडुख भाषा एवं संस्कृति का जितना अवमूल्यन हुआ है ,उतना किसी दूसरी भाषा संस्कृति का नहीं।

ऐतिहासिक एवं भौगोलिक पृष्ठभूमि पर गौर करने पर यह पता चलता है कि रोहतास के पतन के बाद कुँडुख लोग जहाँ–जहाँ भी अपनी जीविका के लिए गये, वहाँ–वहाँ उन्हें जमीदारों की बेगारी करनी पड़ी या फिर उनकी दासता स्वीकार करनी पड़ी। ऐसी परिस्थिति में कहीं–कहीं पर कुँडुख भाषा बोलने पर मनाही थी। कुछ राज्यों के राजाओं द्वारा कुँडुख भाषा बोलते हुए पकड़े जाने पर कोड़े की मार खानी पड़ती थी। कुँडुख बाहुल्य क्षेत्रों जैसे– राँची, लोहरदगा, गुमला, पलामू, जशपुर ,सिमडेगा, सरगुजा और रायगढ़ आदि में गैर आदिवासी जमीदारों का बोलबाला रहा है। इस प्रकार कुछ लोगों ने भयवश अपनी भाषा और संस्कृति को भूल गये और कुछ लोगों ने अन्य समाज के सम्पर्क में आकर दूसरों की भाषा और संस्कृति को नकल की और अपनी भाषा संस्कृति को छोड़ दिया। अंग्रेजों के आगमन के साथ–साथ मिशनरियों का प्रभाव कुँडुख लोगों पर बहुत अधिक पड़ा। मिशनरियों ने कुँडुख लोगों को धर्मान्तारित कर उनको जीने का तरीका सिखलाया, बाहर की दुनिया से अवगत कराया, शिक्षा देकर इनकी आँखें खोली। किन्तु बाहरी दुनिया देखने के चक्कर में इनका सांस्कृतिक पतन जरूर हुआ है।

भाषा ही एक ऐसा सशक्त माध्यम है, जिससे एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के विचारों, भावनाओं और बातों को समझ सकता है। भाषा के द्वारा ही भावों को प्रेषण किया जा सकता है। उरॉव जनजाति की मातृभाषा कुँडुख भाषा है। उरॉव समाज के लोगों के द्वारा आपसी कुँडुख भाषा में बात–चीत किया जाता है तो मातृभाषा में एक अलग तरह का अपनत्व झलकता है और बेहिचक घर चलने/आने के लिए आग्रह किया जाता है। कुँडुख मातृभाषा को ही सीखकर ही समाज की समस्त संस्कार और संस्कृति को सीख व जान सकते है और समाज के नेग दस्तूर का आनंद उठा सकते हैं। आज कल हर जगह अंग्रेजी

सीखने का चलन बन गया है। हर माँ-बाप कुँड़ुख भाषा - भाषी के होने के बावजूद कुँड़ुख भाषा में इसलिये बात-चीत नहीं करते हैं चूँकि उनके मन में यह बात घर कर गई है कि कुँड़ुख भाषा बच्चों को सीखाने से बच्चे अंग्रेजी में कमजोर हो जायेगा। नतीजा यह होता है कि न तो बच्चा अपनी मातृभाषा कुँड़ुख और न ही अंग्रेजी अच्छी तरह सीख पाता है।

शहरी क्षेत्रों में कुछ लोगों के द्वारा अक्सर ऐसा कहा जाता है कि क्या होगा,इस भाषा को सीखकर? क्या यह दाल-रोटी दिलायेगी? दूसरों के सामने इज्जत नहीं दिलायेगी तो क्या फायदा ? किन्तु ऐसा नहीं है संगीत के मर्म को तो सिर्फ संगीत प्रेमी ही समझ सकता है, ठीक उसी प्रकार मातृभाषा के जानकार व्यक्ति ही भाषा का आनंद उठा सकते हैं। भाषा में एकता है, अपनत्व है,पहचान है, भाई-चारा है, प्रेम है। सिर्फ कुँड़ुख भाषा की ही बात नहीं, पूरे विश्व में जितनी भी भाषाएं हैं सभी भाषाओं में इस प्रकार की विशेषताएं परिलक्षित होती हैं।

मातृभाषा सीखने-सिखाने में शायद बच्चों का उतना कसूर नहीं है जितना उनके माँ-बाप का। माँ-बाप अपनी मातृभाषा जानते हुए भी आपस में बहुत कम अपनी मातृभाषा में बात-चीत करते हैं। भला ऐसी हालत में बच्चे कहाँ से और कैसे अपनी मातृभाषा सीख पायेंगे। इस कार्य में माँ-बाप की जबरजस्त लापरवाही है। तमिल, बंगाली, पंजाबी, मलयाली लोग अपनी-अपनी भाषाएं बोलते हैं, चाहे कहीं भी हों। किन्तु उराँव लोग ही दूसरों की उपस्थिति में अपनी मातृभाषा बोलने में झिझकते हैं। उनको अपनी मातृभाषा बोलने में शर्म आती है। चूँकि उनको लगता है कि दूसरों के निगाह में नीच भाषा है। ऐसी ही हालत भाषा के प्रति रहा तो कुछ दिनों के बाद उराँव समाज के बच्चे गोत्र, भाषा, संस्कृति व संस्कार भी भूल जायेंगे। आज शिक्षित वर्ग के करीब 80 प्रतिशत लोग अपनी मातृभाषा से दूर भटकते जा रहे हैं। दूसरी पीढ़ी में आते-आते इनके बच्चे 100 प्रतिशत अपनी मातृभाषा खो चुके होंगे।

संस्कृति को कायम रखने के लिए भाषा को कायम रहना अनिवार्य है, क्योंकि संस्कृति के प्रत्येक अंग भाषा में पिरोये होती है। संस्कृति को गहराई से समझने के लिए भाषा को जानना जरूरी है। भाषा साहित्य इनकी अलिखित सैकड़ों कविताएं और छन्द में रचित मौसमी गानों, कहानियाँ, लघु उपन्यास, बुझवाईल और मंत्रों में निहित है। बगैर भाषा साहित्य को जाने कुँड़ुख संस्कृति को पूरी तरह से समझना और इसके महत्व को पहचान पाना संभव नहीं है।

भाषा संस्कृति ही एक ऐसा माध्यम है, जिसके द्वारा दुनिया के किसी भी कोने के लोगों की एकता के सूत्र में बाँधा जा सकता है। हर एक समुदाय के बीच कोई न कोई एक सामान्य समस्या जरूर रहती है, जिससे जूझने के लिए एकत्रित होना आवश्यक होता है। समाज के बीच इसी तरह की समस्या विद्यमान है- पहचान की समस्या, अस्तित्व व अस्मिता की समस्या, अपने पूर्वजों के धरोहरों को बचाने की समस्या, अपने स्वाभिमान की रक्षा की समस्या आदि। इन तमाम समस्याओं से जूझने का एकमात्र तरीका भाषा-संस्कृति का विकास ही है। समाज के विकास के साथ-साथ भाषा-संस्कृति का विकास होने पर पहचान, अस्तित्व, स्वाभिमान, धरोहर आदि की सभी समस्याएं स्वत: ही दूर हो जायेगी। समाज में भाषा सीखने-सिखाने की अत्यन्त आवश्यक है। भाषा सीखने के

बाद ही सांस्कृतिक एवं सामाजिक रस का रसास्वादन किया जा सकता है।

कोई भी समर्थ भाषा लिपि से पहचानी जाती है। यद्यपि कुँडुख को देवनागरी में लिखने का प्रचलन रहा है तथापि झारखण्ड सरकार द्वारा इसकी पृथक लिपि ''तोलोंग सिकि'' को भी मान्यता दी गई है। इस आधार पर इसकी लिपि की विशिष्टताओं को यहाँ सार रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

कुँडुख भाषा की पृथक पहचान हेतु नयी लिपि अविष्कृत हो गई है। इसके माध्यम से भूमंडलीकरण के दौर में भाषायी क्षरण को रोकना आसान हो गया है। इस लिपि को ''तोलोंग सिकि'' के नाम से जाना जाता है। इस लिपि को झारखंड सरकार ने पठन-पाठन हेतु 20 फरवरी 2009 को स्वीकृति दी है। यह लिपि तोलोंग अर्थात पोशाक विशेष से व्युत्पन्न है। कुँडुख लोकजीवन की गणितीय चिन्ह से भी समीकृत है। डॉ.नारायण उरॉव ''सैन्दा'' के अनुसार-लिपि के प्रारूप में मध्य भारत के मुख्य आदिवासी भाषाओं की ध्वनियों को आधार माना गया है तथा प्रत्येक मूल ध्वनि के लिए एक ध्वनि चिन्ह प्रतिस्थापित किया गया है। तोलोंग एक प्रकार का पोशाक है। इसे आदिवासी पुरूष पहना करते हैं। यह 24 हाथ लंबा तथा 1 हाथ चौड़ा कपड़ा होता है। इसे कमर से घुटने तक लपेट-लपेटकर पहना जाता है। कमर में लपेटने से जिस तरह आकृतियॉ बनती है, उन आकृतियों को लिपि चिन्ह के रूप में स्थापित किया गया है। इसके अतिरिक्त खेत में हल चलाते समय बनती-बिगड़ती आकृतियाँ तथा पूजा अनुष्ठान डण्डा कट्टा से खींची गई रेखाएं, दीवारों में बनायी जाने वाली आकृतियॉ तथा खेल-खेल में खींची जाने वाली रेखाएं लिपि चिन्ह का मुख्य आधार है। साथ ही आधुनिक तकनीक में खरा उतरने हेतु गणितीय चिन्ह जोड़, घटाव, गुणा, भाग, वृत्त, आयात, वर्ग आदि को भी आधार माना गया है। तोलोंग सिकि में कुल इक्तालिस मूल ध्वनि-चिन्ह हैं। इसमें छह स्वर और पैतीस व्यंजन-चिन्ह है।

कुँडुख भाषा की प्रकृति लोकग्राही है, इसलिए इसमें एक ओर जहॉ सामाजिक और सांस्कृतिक शब्दावलियों की प्रचुरता है,वहीं आधुनिकता को अंगीकार करने की विशिष्टता के आधार पर प्रगतिशीलता भी देखने को मिलती है। युग की मांग के अनुसार कुँडुख ने समसामयिकता को समेटा भी है। तद्नुरूप इसमें अरबी, फारसी और अंग्रेजी के शब्द प्रयोग भी मिलते हैं। देश की आजादी के बाद कुँडुख जनजीवन में शिक्षा की दृष्टि से जो परिवर्तन हुए हैं, उससे कुँडुख की पारिभाषिक शब्दावलियॉ विकसित हुई है। इस तरह अपनी मातृभाषा शिक्षा के माध्यम की भाषा और साहित्य की भाषा के रूप में इसकी विविधता के दर्शन होते हैं। कुँडुख लोकसाहित्य में अत्यधिक मात्रा में सांस्कृतिक एवं सामाजिक शब्दावलियॉ उपलब्ध है,तथापि इसका विकास, परंपरा से प्रगति की ओर उन्मुख होता हुआ शिष्ट साहित्य में भी प्रतिष्ठित हुआ है। इसके बावजूद इसकी प्रयोजनशीलता पर भाषागत कार्य होना बाकी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

- टोपनो,पौलुस ये.स.,छोटानागपुर के आदिवासी, सत्य भारती प्रकाशन, रॉची, 1984
- मिंज, दिवाकर, मुण्डा एवं उरॉव का धार्मिक इतिहास,कैथोलिक प्रेस, रॉची, 2001
- कुडुलना, जोसेफ एस.डी.बी., छोटानागपुर के आदिवासी उसकी भाषा

- भाषा एवं गोत्र, छोटानागपुर मुण्डा संगोन समिति, नचडत्रागढ़, गुमला झारखण्ड, 2002
- मिंज, फादर अलबिनुस, झारखण्ड विरासत, कैथोलिक प्रेस, राँची, 2002
- सिंह, नागेश्वर, इसाई मिशनरियों का शैक्षिक एवं साहित्यिक, अनुदान क्लासिकल पब्लिसिंग कम्पनी, नई दिल्ली, 2004
- कुजूर, ब्र.मिखाएल एस.जे., उराँव संस्कृति, कैथोलिक प्रेस, राँची, 1993
- लकड़ा, फ्रा. जोन ये.स., आदिवासी आध्यात्मिकता, कैथोलिक प्रेस, राँची, 2005
- साहू, डॉ. बिहारी लाल, कुँडुख पहेलियाँ, वैभव प्रकाशन, रायपुर, 2007
- कुजूर, विजय आशिष, कुँडुख भाषा साहित्य एक परिचय, साक्षी प्रिंटस, राँची।
- उराँव, जीतु, कुँडुख का प्राचीन इतिहास, सुदर्शन प्रेस, चर्च रोड़, राँची-2005

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

स्वच्छ भारत मिशन एवं शहरी जीर्णोद्धार

• सिद्धार्थ मिश्र

सारांश- स्वच्छ भारत मिशन के तहत न्यू इण्डिया की अवधारणा वास्तव में एक शुभ संकेत है। भारत अगले दो दशकों में शहरीकरण की सबसे बड़ी लहर का अनुभव करेगा। शहरीकरण की प्रक्रिया में सहायता पहुचाने के लिए बुनियादी ढांचे में निवेश के प्रवाह में महत्वपूर्ण बढ़ोत्तरी आवश्यक होगी। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए भारत को शहरी बुनियादी ढांचे पर लगभग 1-4 ट्रिलियन डॉलर खर्च करने की आवश्यकता है। स्वच्छ भारत मिशन का उद्देश्य 1-04 करोड़ परिवारों को लक्षित करते हुये 2-5 लाख सामुदायिक शौचालय, 2-6 लाख सार्वजनिक शौचालय और प्रत्येक शहर में एक ठोस अपशिष्ट प्रबंधन की सुविधा प्रदान करना है। जहां तक स्वच्छता का सवाल है, शहरी स्वच्छता मिशन खुले में शौच से मुक्त के लक्ष्यों की प्राप्ति की सही दिशा में आगे बढ़ रहा है। भारतीयों के जीवन को आसान बनाना भारत सरकार के बजट का प्राथमिक एवं आधारभूत लक्ष्य है, इसलिए इसे जन-जन का बजट नाम दिया गया है। बजट में भी शहरी जीर्णोद्वार को महत्व दिया गया है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि मोदी सरकार के लक्ष्य को न्यू इण्डिया के अन्तर्गत शहरी काया कल्प पर जोर दिया जा रहा है।

मुख्य शब्द - स्वच्छ भारत मिशन, न्यू इण्डिया, शहरीकरण, अपशिष्ट प्रबंधन, बजट, जीर्णोद्वार, कायाकल्प

समावेशी विकास लक्ष्य के उद्देश्यों को लेकर चलने वाला भारत आज अपने प्रधानमंत्री के मूलमंत्र सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास को आत्मसात किया है। स्वच्छ मिशन के तहत न्यू इण्डिया की अवधारणा वास्तव में एक शुभ संकेत है। माननीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी ने शहरी जीर्णोद्वार के संदर्भ में कहा था कि भारत में वर्तमान तेजी, एक ऐसी गति के साथ और इतने बड़े पैमाने पर बदल रहा है, जिसकी परिकल्पना अभी तक नहीं की गयी थी। एक न्यू इण्डिया आकार ले रहा है। भारत अगले दो दशकों में शहरीकरण की सबसे बड़ी लहर का अनुभव करेगा यह एक चुनौती भरी है, लेकिन बड़ी जिम्मेदारी और अवसर भी है बड़े पैमाने पर आवागमन, अपशिष्ट प्रबंधन, प्रदूषण नियंत्रण, स्थायी आवास और किफायती आवास हमारे लिए बहुत प्राथमिकता के कार्यक्रम है।[1]

भारत में शहरी आबादी कुल आबादी का 34 प्रतिशत है जो 2030 तक 40 प्रतिशत और 2050 तक 50 प्रतिशत होने की संभावना हैं, शहरीकरण के नई लहर से अवसर और चुनौतियां, दोनो ही पैदा होने की उम्मीद है। सकल घरेलू उत्पाद में शहरी क्षेत्र का योगदान 2030 में बढ़कर 75 प्रतिशत हो जाने का अनुमान है, जो वर्ष 2009-10 में 62-63 प्रतिशत था।[2] इसे देखते हुए भारत ने 2024-25 तक पांच ट्रिलियन (50 खरब)

• अयोध्या (उत्तर प्रदेश)

डॉलर की अर्थव्यवस्था के लक्ष्य की ओर तेजी से बढ़ना शुरू कर दिया है। शहरीकरण की प्रक्रिया में सहायता पहुंचाने के लिए बुनियादी ढांचे में निवेश के प्रवाह में महत्वपूर्ण बढ़ोत्तरी आवश्यक होगी। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, भारत को शहरी बुनियादी ढाचे पर इन वर्षों में लगभग 1.4 ट्रिलियन डॉलर खर्च करने की आवश्यकता है। शहरी केन्द्रों में महत्वपूर्ण आर्थिक विकास के बावजूद समग्र रूप से पर्याप्त बुनियादी ढांचा और बुनियादी सेवाएं नहीं है। भारत सरकार ने शहरी बुनियादी ढांचे की कमी की गंभीरता को स्वीकार करते हुए इस क्षेत्र में नई पहल करते हुए परिवर्तन पर जोर दिया है।

शहरी जीर्णोद्वार के लिए समग्र निवेश पर प्रकाश डालने से स्पष्ट है कि वर्ष 2004 से 2014 के बीच कुल 157703 करोड़ निवेश हुआ जिसमें शहरी अवसंरचना 85000 करोड़ आवास 38203 करोड़, शहरी परिवहन 34500 करोड़ सम्मिलित है। इस प्रकार वर्ष 2014-2020 तक सिर्फ 5 वर्षों में 1045576 करोड़ का निवेश, जिसमें अमृत 100000 करोड़, स्मार्ट सिटी मिशन 205018 करोड़, स्वच्छ भारत मिशन शहरी 62000 करोड़, शहरी परिवहन 181375 करोड, पी.एम.ए.वाई. (यू.) 496683 करोड़ है।[3]

मिशन का उद्‌देश्य 1.04 करोड़ परिवारों को लक्षित करते हुए 2.5 लाख सामुदायिक शौचालय 2.6 लाख सार्वजनिक शौचालय, और प्रत्येक शहर में एक ठोस अपशिष्ट प्रबंधन की सुविधा प्रदान करना है। इस कार्यक्रम के तहत आवासीय क्षेत्रों में जहां व्यक्तिगत घरेलू शौचालयों का निर्माण करना मुश्किल है वहां सामुदायिक शौचालयों का निर्माण करना। पर्यटन स्थलों, बाजारों, बस स्टेशन, रेलवे स्टेशन जैसे प्रमुख स्थानों पर भी सार्वजनिक शौचालय का निर्माण किया जाएगा। यह कार्यक्रम पांच साल अवधि में 4401 शहरों मे लागू किया जाएगा। कार्यक्रम पर खर्च किये जाने वाले 62009 करोड़ रू. में केन्द्र सरकार की तरफ से 14623 करोड़ रू. उपलब्ध कराए जाएगे। केन्द्र सरकार द्वारा प्राप्त होने वाले 14623 करोड़ रू. में से 7366 करोड़ रू. ठोस अपशिष्ट प्रबंधन पर 4165 करोड़ रू. व्यक्तिगत घरेलू शौचालय पर 1828 करोड़ रू. जनजागरूकता पर और समुदाय शौचालय बनवाये जाने पर 655 करोड़ रू. खर्च किये जायेगे। यह कार्यक्रम खुले में शौच, अस्वच्छ शौचालयों को फ्लश शौचालय में परिवर्तित करने, मैला ढोने की प्रथा का उन्मूलन करने, नगरपालिका ठोस अपशिष्ट प्रबंधन और स्वच्छं एवं स्वच्छता से जुड़ी प्रथाओं के संबंध में लोगों के व्यवहार में परिवर्तन लाना आदि शामिल है।[4]

पिछले 5 वर्षों की प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए केन्द्रीय बजट 2021-22 में आवास एवं शहरी मामले के लिए 50040 करोड़ रू. आवंटित किये गये, जो 2019-20 के बजट आवंटन 42267 करोड़ रू. से काफी अधिक है। इसके अलावा आवास के लिए अतिरिक्त बजटीय संसाधन इ.बी.आर के रूप में 10000 करोड़ रू. का प्रावधान है। शहरी जीर्णोद्वार के लिए निवेश संवर्द्धन वर्ष 2014-20 की अवधि में विभिन्न प्रमुख शहरी कार्यक्रम शुरू किये गये, जिसके तहत अभी तक 162165 करोड़ रू. की केन्द्रीय सहायता जारी की जा चुकी है। इससे इस क्षेत्र में कुल मिलाकर 1045076 करोड़ का निवेश हुआ, जिसमें राज्यों/शहरी स्थानीय निकायों, लाभार्थियों और सरकारी निजी प्रतिभागियों का योगदान शामिल है।[5]

देश के आम बजट 2021-2022 में सरकार ने बुनियादी ढांचे को मजबूत करने से लेकर स्वास्थ्य सेवाओं को सशक्त बनाने के लिए कई अहम घोषणाएं की है, जिसमें स्वच्छ भारत मिशन के तहत शहरी स्वच्छ भारत मिशन 2021-2026 से 5 वर्षों की अवधि में 141678 करोड़ रू. का कुल वित्तीय आवंटन किया जाएगा। यह योजना स्लज मैनेजमेन्ट, वेस्ट वॉटर ट्रीटमेंट, स्रोत अलगाव, शहरी निर्माण से कचरे के प्रबंधन पर ध्यान केन्द्रित करेगी और इसमें डंप साइटें भी शामिल होगी।[6]

जहां तक स्वच्छता का सवाल है, शहरी स्वच्छता मिशन खुले में शौच से मुक्त के लक्ष्यों की प्राप्ति की सही दिशा में आगे बढ़ रहा है। स्वच्छता के क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि शहरी स्वच्छ भारत मिशन को लागू करने में क्रांतिकारी बदलाव के रूप में हुई है। अब बनाये गये शौचालयों की संख्या गिनने की बजाय इस बात पर जोर दिया जा रहा है कि किस तरह शहरों और कस्बों को स्थायी रूप से खुले में शौच से मुक्त बनाए रखा जाए। इस दिशा में सरकार ने सामुदायिक और सार्वजनिक शौचालयों के संचालन और रखरखाव के लिए स्वच्छ भारत मिशन ओडीएफ प्लस और ओडीएफ प्लस-प्लस मानकों की शुरूआत की है। इसके अलावा सर्वागीण स्वच्छता के मुद्दे पर भी ध्यान दिया जा रहा है जिसमें जल-मल का प्रबंधन भी शामिल है।[7]

स्वच्छ भारत मिशन (शहरी) के तहत स्वच्छतर एवं स्वस्थ भारत के लिए बजट मे जल और स्वच्छता को प्राथमिकता दी गयी है। क्योंकि स्वच्छता पद्धतियों और मृत्युदर तथा स्वस्थ परिणामों के बीच सीधा संबंध है। अब तक इस मिशन के तहत 66 लाख से अधिक शौचालयों का निर्माण किया जा चुका है और 99 प्रतिशत से अधिक शहर खुले में शौच जाने से मुक्त हो गये है।

जून 2015 में देश भर में एक लाख से अधिक आबादी वाले 500 शहरों में अमृत कार्यक्रम शुरू किया गया, जिसमें जल आपूर्ति के सार्वभौमिक कवरेज और सीवरेज ओर सेप्टेज कवरेज को 31 प्रतिशत से बढ़ाकर 62 प्रतिशत का लक्ष्य रखा गया है। इस कार्यक्रम के तहत सभी राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों की राज्य वार्षिक कार्य योजनाओं के लिए 77640 करोड़ रू. मंजूर किये गये जिनमें से आधी राशि पानी की आपूर्ति और 42 प्रतिशत सीवरेज और सेप्टेज के लिए निर्धारित किये गये है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत 73007 करोड़ की लागत वाली परियोजनाएं कार्यान्वयन के आधीन है, जिनमें से 8725 करोड़ रू. की लागत से कई परियोजनाएं पहले ही पूरी हो चुकी है। कार्यक्रम के तहत अब तक 71 लाख पानी के नल तथा 43 लाख सीवर कनेक्शन प्रदान किये जा चुके है।[8]

स्मार्ट सिटिजन मिशन के कार्यान्वयन के पांच साल पूरे होने पर विचार करे तो हम पाते है कि 205018 करोड़ रूपये की लागत से प्रस्तावित 5151 परियोजनाओं में से 80 प्रतिशत से अधिक कार्यान्वयन के विभिन्न चरणों में है। इनमें कुछ अभिनव एवं अग्रणी परियोजनाएं शामिल है, जो भारतीय शहरों द्वारा पहली बार शुरू की गयी है। जैसे एकीकृत कमान एवं नियंत्रण केन्द्र, स्मार्ट गलियां। सड़के स्मार्ट सोलर एनर्जी, स्मार्ट पोल, स्मार्ट वाटर और एकीकृत स्मार्ट यातायात इत्यादि। आवास और शहरी कार्य मंत्रालय ने जलवायु स्मार्ट सिटीज मूल्यांकन फ्रेमवर्क तैयार करने का कार्य पहले ही शुरू कर दिया है, जो जलवायु परिवर्तन संबंधी अनुकूलन और उपशमन पद्धतियां अपनाने की दिशा में इसके

100 स्मार्ट शहरों की क्षमता निर्माण के लिए एक अग्रणी कदम है। इस प्रयास को आगे बढ़ाने के लिए मंत्रालय ने विभिन्न शहरों और समान विचार वाले संगठनों के बीच एक जलवायु स्मार्ट सिटिज एलायंस बनाने की दिशा में काम शुरू कर दिया है।

इस प्रकार हम कह सकते है कि एक नये भारत के सपनों को साकार करने के लिए भारत सरकार अपनी वचनबद्धता को मूर्त रूप प्रदान करने में सक्रियता से जुड़ी है। भारतीयों के जीवन को आसान बनाना भारत सरकार के बजट का प्राथमिक एवं आधारभूत लक्ष्य है इसलिए इसे जन-जन तक का बजट नाम दिया गया है। बजट में भी शहरी जीर्णोद्धार को महत्व दिया गया है। भारत के हर वर्गों के लोगों का ध्यान रखते हुए उनके शहरी गरिमापूर्ण जीवन जीने में आने वाली समस्त बाधाओं को दूर करने का सरकार का पूरा प्रयास युद्ध स्तर पर चल रहा है। कोविड-19 के अदृश्य दुश्मन के रूप में आने से केवल भारत का ही विकास प्रभावित नहीं हुआ है, बल्कि पूरा विश्व इसके प्रभाव से ग्रसित है। फिर भी भारत सरकार अपनी 'न्यू इण्डिया' जो राम राज्य जैसी राजव्यवस्था का एक अनुकरणीय मॉडल है, उसे साकार करने के लिए तन-मन से लगी है। हम अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेगें क्योंकि हमारी सरकार की इच्छाशक्ति मजबूत है। इस संदर्भ में हम स्वतंत्र भारत के पहले वितमंत्री आर.के. शनमुखम चेट्टी के उस बजटीय भाषण को स्मरण किया जाए तो उन्होंने महात्मा गांधी को उद्धृत करते हुए कहा था, ईश्वर हमारा मार्गदर्शन करें, अगर हम सही दिशा में कोशिश के साथ-साथ अपनी नियति और आंकाक्षाओं को लेकर सकारात्मक है, तो लक्ष्य हासिल करना मुश्किल नहीं है उपरोक्त पंक्ति की प्रासंगिकता को हम स्वच्छ भारत मिशन के तहत शहरी जीर्णोद्धार के रूप में देख सकते है।

उपरोक्त अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि मोदी सरकार के लक्ष्य को न्यू इण्डिया के अन्तर्गत शहरी कायाकल्प पर जोर दिया जा रहा है। यह सच है कि इस महा अभियान को पूर्ण करने में विभिन्न प्रकार की समस्याएं स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होगी, जिसका निराकरण तभी हो सकता है जब आम शहरी नागरिक जागरूक हो और अपने विवेकपूर्ण कर्तव्यों द्वारा इस महाअभियान में अपनी सहभागिता सुनिश्चित करें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. योजना, मार्च 2020, पृ. 19
2. एच.पी.ई.सी. 2011
3. योजना, मार्च 2020, पृ.20
4. स्वच्छ भारत अभियान-विकीपीडिया
5. केन्द्रीय बजट 2020-21, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार
6. केन्द्रीय बजट 2021-22, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार
7. योजना, नवम्बर 2018, पृ. 45
8. योजना, मार्च 2020 पृ.21
9. आर्थिक सर्वेक्षण 2016-17, 2018-19, 2019-20 भारत सरकार, नई दिल्ली

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

स्त्रीवादी चेतना का मर्दवादी विमर्श

• फिरोजा जाफर अली

सारांश- नारी विमर्श साहित्य के केन्द्र में एक ऐसा मुद्दा है जो महिला लेखन की आग को जलाए रखता है। स्त्री लेखन की रूढ़िगत सोच अथवा शास्त्रीय सोच को प्रस्तुत करने से पहले ये जान लेना आवश्यक है, स्त्री लेखन अर्मूत धारणा की अवधारणा नहीं है, बल्कि यह सांस लेती हुई जीवित स्त्री की अस्मिता की तलाश है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था के विरूद्ध लड़ती हुई स्त्री, चुनौतियों का डटकर सामना करती हुई स्त्री परिवार, जीविका में संघर्षरत स्त्री के स्त्री चिन्तन का पुरूषवादी सोच के तहत लेखन को मर्दवादी विमर्श कह सकते हैं। स्त्री मनोविज्ञान को केवल स्त्री ही समझ सकी है, यह कहना न्याय संगत नहीं होगा। विभिन्न अवधारणाओं ने यह स्पष्ट कर दिया है कि प्रत्येक मानव शरीर में स्त्री व पुरूष के भाव होते हैं, इस मनोभाव की प्रतिशतता की मात्रा उस व्यक्ति के परिवेश और मानसिक क्षमता पर निर्भर करता है। पुरूष लेखक की कलम स्त्री मनोभावों को उकेर नहीं सकती, यह कहना निरर्थक होगा। अनेक पुरूष लेखकों के द्वारा स्त्री मनोभावों का सूक्ष्म विश्लेषण किया जाना इस बात को सार्थकता प्रदान करता है।

मुख्य शब्द - नारी विमर्श, साहित्य, रूढ़िगत सोच, स्त्री चिन्तन, परिवेश, मानसिक क्षमता

स्त्री-पुरूष के एक होने की प्रक्रिया में दोनों की सम्पूरकता को सिर्फ एक मान लिया गया है विधेयक और निषेधक की भूमिका में क्रमशः स्त्री और पुरूष को साहित्य में भिन्न तो माना गया, मगर इस भिन्नता को अलग से परिभाषित नहीं किया गया। स्त्री अपनी संस्कृति, अपने इतिहास तथा जीवन परम्परा के साथ अलग धारा में बहती हुई स्त्री-शक्ति की सत्ता को तलाशते रही। पुरूष शक्ति की सत्ता के समक्ष स्त्री-शक्ति की सत्ता आकार ही नहीं ले पाई।

स्त्री को स्त्री के मापदण्ड पर ढ़ालने के लिए अनुकूलन किया गया। स्त्रीकरण करके पुरूषवादी सोच ने अपने विचार और अवधारणा को स्त्री पर लाद दिया। स्त्री देह के प्रति, स्त्री भाव के प्रति, पुरूष की चेतना आधिपत्य की रही है। स्त्री लेखन की विडम्बना है कि, पुरूष लेखकों के द्वारा स्त्री के स्वरूप का स्वयं निर्धारण किया गया। औरत के लिए औरतपन का खांचा तैयार करके अपने अनुरूप औरत तैयार करने का प्रयास किया गया। सामाजिक घटना के रूप में सामाजिक मान्यता प्राप्त पितृसत्ता एक ऐसा व्यवस्था है, जिसमें स्त्री को वस्तु, साधन, उपभोग के रूप में मान्यता दी गई। स्त्री की अधीनता सर्वविदित होने के साथ पीड़िता और शोषित की भी रही है। सदियों से शोषित स्त्री अपने ऊपर हो रहे अत्याचार को निर्यात समझ कर तमाम परिस्थितियों से अनुकूलन कर लिया। पुरूष जो सदियों से शोषक की भूमिका में रहा है, प्रत्येक काल और परिस्थितियों में अधिनायक की तरह ही व्यवहार करता आया है। स्त्री की द्वितीयक स्थिति का कारण

● सहायक प्राध्यापक, कल्याण स्नातकोत्तर महाविद्यालय,सेक्टर-7, भिलाई नगर

स्त्रीवाद और स्त्री चेतना का मध्यकाल से अब तक चली आ रही प्रतिक्रियात्मक क्रियाओं का नतीजा है। पितृसत्तात्मक परिवार और समाज दोनों बृहत वृत्तान्त के रूप में एक ही प्रकार के हैं। स्त्रीवाद इस बृहद वृत्तान्त को पितृसत्तापरकता की महावृत्तान्तीयता को तोड़ता है, ऊत्तर आधुनिकता महावृत्तान्त और अधिवृत्तान्त को तोड़ने का कार्य करता है। फलतः उत्तर आधुनिकता और स्त्रीवाद में एक महत्वपूर्ण अन्तर्संबंध स्थापित होता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि स्त्रीवाद और स्त्री चेतना मध्यकाल से अब तक चली आ रही स्त्री की द्वितीयक स्थिति का प्रतिक्रियात्मक परिणाम है।

वस्तुतः स्त्री विमर्श का व्यापक अर्थ किसी निश्चित फ्रेम वर्क में स्त्री विषयक मान्याताओं, धारणाओं के विषय में अपनी राय रखना। स्त्री विमर्श का अर्थ स्त्री को समग्रता के साथ जानने समझने और उसे बेहतर बनाने की हर संभव कोशिश है।

स्त्रीवादी लेखन, स्त्रीवाद के परिवेशजन्य परिस्थितियों का व्यापक विश्लेषण है। साहित्य के केन्द्र में स्त्रीवाद और स्त्रीवादी लेखन का पक्ष एवम विपक्ष दोनो सामान्तर चलते दिखाई पड़ते हैं। स्वतंत्रता या आजादी की बात करें तो कार्यक्षेत्र में स्त्री पुरूष के कंधे से कंधा मिलाकर कार्य कर रही है मर्दवादी विमर्श के परिप्रेक्ष्य में स्त्रीवादी विमर्श को पूर्ण स्वतंत्रता पाने के लिए अपने आसपास के माहौल के साथ अपने घर में भी स्वतंत्रता पूर्ण माहौल बनाना पड़ेगा।

कुछ स्त्रियों को यौनिक स्वतंत्रता भी प्राप्त है, परन्तु अधिकतर स्त्रियों को यौनिक स्वतंत्रता के नाम पर शोषण का शिकार होना पड़ता है। महाभारत काल से पहले तो ये स्वतंत्रता अपेक्षाकृत अधिक थी उत्तर आधुनिकता का दौर तो आज की बात है, महाभारत काल में भी इसके अंश विद्यमान थे। उत्तर आधुनिकता के स्त्रीवादी विमर्श की बात करें तो स्त्री विमर्श का सरोकार जीवन और साहित्य में स्त्री मुक्ति के प्रयासों से है, एक तरह से कहा जाए तो स्त्री जीवन के विविध आयामों की पड़ताल, उसके संघर्ष एवं पीड़ा की अभिव्यक्ति के साथ-साथ बदलते सामाजिक संदर्भों में उसकी भूमिका, नित नये उठ रहे प्रश्नों के उत्तर ढूंढ़ने के साथ साथ स्त्री मुक्ति के मूल प्रश्नों का जवाब ढूंढ़ना ही स्त्री विमर्श के मूल बिन्दु है। स्त्री जागृति के मूल बिन्दुओं के साथ स्त्री विकास के अवसरों की तलाश और अधिकाधिक अवसर तलाश करने की साहित्यिक प्रक्रिया है। वैयक्तिक, सामाजिक, शारीरिक और यौनिक स्वतंत्रता या मुक्ति की तलाश करता स्त्री विमर्श उत्तर आधुनिकता के दहलीज में आ खड़ा हुआ। सांस्कृतिक अर्थ की अनिर्धेयता और विजातीयता की निर्वचानात्मक बह्वर्थी विसंरचनात्मक पहचान ने भी स्त्रीवाद को उत्तर आधुनिकता के प्रति आकर्षित किया है। उत्तर आधुनिकता और स्त्रीवाद के इस सैद्धांतिक आधार भूमि के तीन पहलू हैं।

1. लिंग-सीमान्त की संभ्रान्ति का उत्सवीकरण,
2. पुल्लिंगी डेकार्टवादी विश्व के सख्त सीमांकन के आत्म का क्षरण, और
3. स्त्री काया की पितृसत्तात्मक वस्तु-कामुकता का पुनर्विन्यास।

स्त्रीवाद और स्त्री चेतना मध्यकाल से अब तक चली की द्वितीयक स्थिति का प्रतिक्रियात्मक परिणाम है। डेबोरो, एल.मेडसन ने इस द्वितीयकता बनाम हेयता की व्याख्या तीन बीज-पदों के द्वारा की है, वे बीज पद हैं -1. लिंग, 2. अवस्त्रीपरकता और

पितृसत्तात्मकता। स्पष्ट है कि डेबोरा द्वारा निर्दिष्ट लिंग यौन से भिन्न है, उसके विपरीत है। पुरूष की वर्चस्विता इस लिंग भेद पर आधारित है, अब स्त्रीपरकता नारी घृणा के व्यवस्थित व्यवहार को नारी के संस्थानीकृत अधीनीकरण को और सभी प्रकार के नारी विरोधी व्यवहारों को उद्घाटित करने वाली है तथा पितृसत्तात्मकता पुरूषों को अधिमानता देने वाली सांस्कृतिक व्यवस्था और पुरूषों के हाथों तक सौपने वाली राजनीतिक व्यवस्था को उजागर करती है जो स्त्री की कीमत पर पुरूष के हितों की रक्षा करती है। स्त्रीवाद इन सबका विरोध करता है।[1]

दमित नारी जाति का शक्तिपूर्ण, अतिक्रामी और आह्लादात्मक प्रत्यागमन जो निरूपित हो पाता है उसे स्त्री पाठ कहा जा सकता है, स्त्रीवादी लेखन स्त्री की जैविक हीनता को खारिज करता है स्त्री के दृष्टिकोण से साहित्य के लिखे जाने और समझे जाने के विषय में पश्चिम में प्रबल आग्रह है, फ्रांसीसी लेखिका सीमोन द बोउवार (द सेकेण्ड सेक्स, हिन्दी अनुवाद स्त्री उपेक्षिता) से लेकर जर्मन ग्रीयर (विद्रोही स्त्री) तक अनेक लेखिकाओं तथा अन्य रचनाकारों ने अपने अपने ढंग से स्त्री, स्त्रीपन तथा स्त्रीपरक समस्याओं से सामना करने का प्रयास किया है। अमेरिकी लेखिका बेट्टी फ्रीडेन की पुस्तक द फेमिनिन मिस्टीक सन् 1963 में प्रकाशित हुई। अमेरिकी महिलाओं की स्थिति पर गहरा असंतोष व्यक्त करने में बेट्टी फ्रीडेन पहली महिला के रूप में जानी जाती है। पूरे विश्व में पश्चिम की महिलाओं को आत्मनिर्भर, सबल तथा सुविधा सम्पन्न माना जाता था। द फेमिनिन मिस्टीक से पश्चिमी महिलाओं के भीतर दबी बेचैनी तथा पीड़ा खुलकर सामने आती है। ऐसा प्रारंभ से ही माना जाता रहा है कि पश्चिम में स्त्रीवाद का आन्दोलन जोर पर है साहित्य के केन्द्र में स्त्रीवाद और स्त्रीवादी लेखन का अपना महत्व है स्त्रीवादी लेखन किसी भी रूप में नारी को उपसंस्कृति के रूप में देखने का प्रबल विरोध करता है। स्त्रीवाद का तात्पर्य है किसी भी पाठ में पुरूष आलोचकों से भिन्न नारी आलोचकों द्वारा ग्रहण की जाने वाली साभिप्रायता से है।

सीमोन द बोउवार, स्त्री के विकास के लिए स्त्रीपन से मुक्त होना अनिवार्य मानती है। स्त्रीपन से मुक्ति स्त्री जीवन के बंधनों से मुक्ति है पुरूष वर्चस्व का विरोध करने की शक्ति प्रदान करता है तथा पुरूष सत्ता को चुनौती देने का माद्दा दिखाता है। सदियों पुरानी मान्यताओं का विरोध करती है, स्त्री विमर्श पर विचार करते समय पाश्चात्य विचारकों की धारणाओं का अध्ययन आवश्यक है। आधुनिक समय में हिंदी साहित्य में कहानी कविता उपन्यास तथा नाटकों को नारी जीवन से संबंधित समस्याओं को मुखरता के साथ चित्रित किया गया है सभी विधाओं में स्त्री समस्याओं से जूझते, संघर्ष करके मुक्ति का प्रयास करते दिखाई देती है।

स्त्री विमर्श के मर्दवादी सोच का अगर आकलन करें तो हिंदी साहित्य में प्रेमचंद से लेकर जान स्टूअर्ट मिल ने स्त्री अधिकारों की बात कहते हुए नारी के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक अधिकारों की बात कही। ब्रिटेन में जान स्टुअर्ट मिल की पुस्तक "आन द सबजेक्शन ऑफ वुमेन" को उदारवादी नारीवाद की श्रेष्ठ किताब माना गया।

नारी जीवन तथा नारी मुक्ति के प्रश्नों को लेकर पिछले दशक से स्त्री विमर्श साहित्य के केन्द्र में है स्त्री अन्याय, अत्याचार, स्त्री-शोषण को साहित्य में अभिव्यक्ति

मिली। नारी के विभिन्न रूपों को हिंदी साहित्य के इतिहास में स्थान मिला। भारतेंदु युग से लेकर आधुनिक कालीन साहित्यकारों के द्वारा अपनी रचनाओं में स्त्री को केन्द्र में रखकर रचनाओं का सृजन किया गया। नारी के यथार्थ जीवन तथा नारी समस्याओं को केन्द्र में रखकर रचनाएं की गई। भारतेंदु ने नारी समस्याओं का यथार्थ चित्रण अपने उपन्यासों में किया। अन्य पुरूष साहित्यकारों ने साहित्य के माध्यम से स्त्री समस्याओं को चित्रित करके, समस्याओं का समाधान करने का भी प्रयास किया इसके साथ-साथ नारी को सुदृढ़ करने तथा स्त्री मुक्ति के पुरजोर प्रयास भी किए गए। इन प्रयासों में महिला उपन्यासकारों के साथ-साथ पुरूष उपन्यासकारों का भी महत्वपूर्ण योगदान है। नारी जागृति के विभिन्न कालखण्डों में नारी को जागृत करने के प्रयास किए गए। स्त्री को स्व के प्रति जागृत करके समाज की नारी विषयक धारणा बदलने का प्रयास किया। उक्त धारणा पुरूषों के खिलाफ न होकर पुरूषों के नारी विरोधी तथा नारी विषयक मानसिकता के खिलाफ है।

ब्रिटिश काल में पाश्चात्य विचारों के प्रभाव तथा अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार से महिलाओं में जागृति लाने का प्रयास किया गया। जिससे स्त्री की स्थिति में व्यापक बदलाव आने लगे। उन्नीसवीं शताब्दी में सामाजिक बुराइयों को नष्ट करके सामाजिक सुधार का प्रमुख केन्द्र स्त्री को बनाया गया। राजाराम मोहन रॉय, देवेन्द्र नाथ टैगोर, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, दयानंद सरस्वती, केशवचन्द्र सेन, महादेव गोविंद राना डे आदि ने स्त्री विषयक समस्याओं के सुधार के लिए अनेक कार्य किए। फेमिनिज्म शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग 25 अप्रैल 1895 को अन्तेन्वय नामक पत्रिका में हुआ था, जिसका अर्थ है अपनी स्वायत्ता को स्थापित करने वाली। इसमें संदेह बिल्कुल नहीं होना चाहिए कि स्त्री पुरूष समता वाले मानवीय दर्शन से प्रेरित होकर नारीवाद का आरम्भ हुआ था, जो स्वतंत्रता संघर्षहीन पारिवारिक एवम् सामाजिक जीवन व्यवस्था की कामनाओं को पालता है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था और उसकी परिपोषक सामाजिक व्यवस्था से हाथ छुड़ाने के लिए स्त्री जाति मजबूर हो रही थी। इसी कारण पूरे संसार के समाजों में स्त्री पक्षीय आशयों का पुरजोर स्वागत हुआ। जाति मजबूर हो रही थी। इसमें स्त्री के व्यक्तिगत, अस्तित्व एवम् समस्याओं पर विशेष तरह से सोच विचार होने लगा। स्वाभाविक रूप से पितृसत्तात्मक समाज एव वर्चस्ववादी संस्कृति के परम्परागत रवैयों पर प्रश्न चिन्ह लगाए गए थे। पुरूषाधिपत्य से नियंत्रित समाज को पूर्णतया बदलने के लिए कार्यरत आंदोलन के रूप में स्त्रीवाद को राजनैतिक महत्व मिलने लगा। परवर्ती समय में नारीवादी की चर्चा में लिंग या लिंगस्तर, दैहिक राजनीति, यौनता आदि से लेकर वर्ग, वर्ण, भाषा देश प्रदेश जैसे विषयों को भी मिला दिया गया। ई. पोर्टर ने अपनी किताब "विमन एण्ड मॉरल आइडेंटिटी (1991) में नारीवाद को यौन अस्मिता के कारण स्त्रियों के साथ होने वाली समस्त प्रकार की उपेक्षा, उत्पीड़न असमानता और अन्याय से मुक्ति का रास्ता खोजने का वैचारिक दर्शन बताया"[2]

स्त्रीवादी विमर्श के मर्दवादी लेखन की कड़ी में अगर पुरूष आलोचकों की बात करें तो आलोचक स्त्री लेखन को पुरूष लेखन के साथ-साथ चलने वाली प्रक्रिया मानते हैं। डॉ. मैनेजर पाण्डेय का मानना है कि स्त्री और पुरूष में पर्याप्त अंतर होता है,

उनका मानना है कि स्त्री और पुरूष की दृष्टि में पर्याप्त अंतर होता है, उनका मानना है कि कोई पुरूष किसी स्त्री की पीड़ा का यातना का बखान करता है, चिन्ता करता है तो अधिक सहानुभूति या सह्रदयता से काम लेता है। जबकि पंकज बिस्ट लिखते हैं कि "लेखन के संदर्भ में नारी पुरूष के भेद को बनाए रखने की ऐसी साजिश के रूप में देखी जानी चाहिए जो नारी के वास्तविक सरोकारों और पीड़ाओं की अभिव्यक्ति में बाई पास का काम करेगी।"[3]

कुछ स्त्रीवादी लेखिकाओं का मानना है कि स्त्री के दर्द को यथार्थपरक पीड़ा को केवल स्त्री ही समझ सकती है, क्योंकि वह स्वयं भुक्त भोगी होती है। रेखा कस्तवार का मानना है कि, स्त्रीवादी लेखन का प्रमुख नारा है, पर्सनल इज पोलिटिकल। यह नारा स्त्री के संघर्षों व्यक्तिगत अनुभवों और सत्य का खुलासा स्त्री की जुबानी करने का पक्षधर है ताकि उसकी त्रासद स्थितियों का बोध समाज को हो सके। स्त्री लेखन जब अपने वैयक्तिक अनुभवों की अभिव्यक्ति की बात करता है, तब रचना की नायिका के साथ स्त्री रचनाकार को जोड़कर देखना पाठक के लिए आसन हो जाता है। फेक्टस और फिक्शन का भेद मिट जाता है। स्त्री जब लिखती है तब अपने निजी जीवन और निजता को दॉव पर लगा रही होती है। अपने घर परिवार और समाज का भय और प्रतिक्रिया का डर अवचेतन रूप से उसकी कलम को संचालित कर सेल्फ सेंसर का काम करता है।[4]

इस तरह उनका मानना है कि स्त्री जब स्त्री के बारे में लिखती है तो अपने लिए स्वतंत्रता, अस्मिता, समान अवसरों और अधिकारों की बात करती है। आगे वे यह भी कहती है कि आन्तरिक और बाह्य जगत के अनुभवों को दु:साहस के साथ लिखने वाली न केवल भारतीय वरन् समूचे विश्व साहित्य में महान लेखिकाओं का त्रासद जीवन शोध का विषय है।

इस प्रकार स्त्रीवादी दृष्टिकोण को व्यापक स्तर पर देखा जाए तो इसमें न केवल स्त्रियों के लेखन को बल्कि उन पुरूषों को भी शामिल किया जा सकता है,जो स्त्रीवादी मानसिकता के साथ स्त्रियों के शोषण, उत्पीड़न एवम उनकी सम्भावनाओं के उचित समाधान से सरोकार रखते हैं। आलोचक स्त्री लेखन को पुरूष लेखन के समानान्तर चलने वाली प्रक्रिया मानते हैं। भारतीय संकल्पना में अर्धनारीश्वर की अवधारणाा को भी पर्याप्त स्थान मिला है। इस तरह मर्दवाद (जेंडर) को जीववैज्ञानिक प्रवृत्ति नहीं है, बल्कि विचारधारा है। विचारधारा पीड़ित और उत्पीड़क के साथ-साथ स्वयं को भी प्रभावित करती है। इसलिए नारीचेतना के मर्दवादी विमर्श में कुछ महिलाएं भी मर्दवादी सोच रखती हो तो आश्चर्य की बात नहीं है, वस्तुतः स्त्री विमर्श की प्रमुख लड़ाई मर्दो से नहीं है, मर्दवाद की विचारधारा से है। सन् 1968 में मेरी ऐलमैन की थिंकींग एबाउट वूमन के प्रकाशन के साथ ही स्त्रीवादी सिद्धांत का आरंभ हुआ और सिमोन द ब्यूई की पुस्तक 'द सेकेण्ड सेक्स' का 1949 में प्रकाशन के साथ ही इसका दूसरा दौर भी आरंभ हुआ। स्त्रीवादी सिद्धांतों की बात करे तो स्त्री लेखिकाओं के द्वारा स्वयं के कहे गए, किए गए, सोचे गए, पढ़े गए, लिखे गए शब्दों की अभिव्यक्ति होती है और स्त्रीवादी पुरूष लेखकों के द्वारा क्या कहा, क्या किया, क्या सोचा, क्या पढ़ा, क्या लिखा भावाभिव्यक्ति की जाती है। लिंग में अन्तर होने से भावों की अभिव्यक्ति में नियामक सूत्र एक ही होते हैं। स्त्रीवादी

पुरूष लेखकों के द्वारा स्त्री जीवन के प्रति उसके यथार्थ के प्रति प्रतिबद्धता बनाई रखी जानी चाहिए। मर्दवादी विमर्श का दूसरा पहलु यह भी है कि परम्परावादी स्त्री साहित्य पाठ अपनी व्यापकता में पुरूषों द्वारा रचित थे, उनमें निरूपित स्त्रियां सामान्यत: चले आ रहे घिसे-पिटे तौर पर ही निरूपित होती थी। पुरूषवादी स्त्री बिम्बों से दो तरह के निष्कर्ष प्राप्त होते थे। पहला यह कि पुरूष लेखकों ने स्त्रियों के विषय में अयथार्थ और बुरा लिखा है दूसरा यह कि पुरूष लेखकों ने स्वयं इन स्त्री बिम्बों को स्त्रीत्व के अपने आदर्शों को उन पर लादने के नजरिए से उन्हें रचा है और उन्हें पुन: पुन: प्रस्तुत किया है, जबकि स्त्रियां स्वयं पाठ की रचना करती है और स्वयं पाठिका भी बनती है। इस तरह स्त्रीवादी साहित्य सिद्धांत कोई ऐसा एकीकृत साहित्य सिद्धांत नहीं है जिसका कोई एक कॉपर्स हो। न ही किसी स्त्रीवादी मार्क्स या स्त्रीवादी फ्रायड की भी उपस्थित नहीं है जो स्त्रीवाद को एक सिद्धांत या प्रविधि के रूप में परिभाषित कर सके। उक्त तथ्य स्त्रीवाद की शक्ति तथा निराशाजनक स्थिति दोनों को ही प्रगट करता हैं। अत: स्त्रीवादी चेतना के शब्द और संसार को पुरूषवादी लेखकों के द्वारा भी स्पष्ट: प्रदर्शित किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. शशिभूषण पाण्डेय, उत्तर आधुनिकता बहुआयामी सन्दर्भ, इलाहाबाद लोकभारती प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2010, पृष्ठ-214-215.
2. के.पी.प्रमिला, स्त्री अध्ययन की बुनियाद, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण : 2015, पृष्ठ-13.
3. यादव राजेन्द्र संपादक, हंस, नई दिल्ली, अक्षर प्रकाशन, जनवरी 1999, पंकज विष्ट (सम्पादकीय से) पृष्ठ-31.
4. कस्तवार रेखा, स्त्री चिंतन की चुनौतियां, नई दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2013, पृष्ठ-कवर पेज

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

सुपर फूड अलसी - शक्ति का अद्‌भुत खजाना

• मंजरी अवस्थी

सारांश- शरीर को चुस्त दुरूस्त और निरोगी रखना है तो नियमित रूप से अलसी का सेवन करें। इस के गुणों को देखते हुये विश्व स्वास्थ्य संगठन ने अलसी को सुपर फूड का दर्जा दिया। जबकि भारतीय आयुर्वेद में इसें दैविक भोजन कहा गया हैं। इसमें करीब 18 प्रतिशत ओमेगा 3 फैटी एसिड लिगनेन प्रोटीन और फाइबर होते हैं। क्या आप जानते है कि अलसी का सेवन त्वचा पर बढती उम्र के असर को कम करता है। अलसी का सेवन भोजन के पहले या भोजन के साथ करने से पेट भरने का एहसास होकर भूख कम लगती है। इसके रेशे पाचन को सुगम बनाते है। इस कारण वजन नियंत्रण करने में अलसी सहायक है। चयापचय की दर को बढ़ाता हैं एवं यकृत को स्वस्थ रखता है। प्राकृतिक रोचक गुण होने से पेट को साफ रख कब्ज से मुक्ति दिलाता है।

मुख्य शब्द - शरीर, दुरूस्त, निरोगी, सुपर फूड, दैविक भोजन

अलसी का रोज घर में प्रयोग किया जाता हैं। अलसी के बीज बहुत ही छोटे-छोटे होते हैं। लेकिन इसमें इतने सारे गुण होते हैं जिसका आप अंदाजा नही लगा सकते हैं। क्या आपको यह जानकारी है कि जिस अलसी के बीज को आप सभी केवल खाद्य पदार्थ के रूप में इस्तेमाल में लाते हैं उससे रोगो का इलाज भी किया जाता है। अलसी का दूसरा नाम तीसी है। यह एक जड़ी-बूटी है, जिसका इस्तेमाल औषधियो के रूप में किया जाता हैं। स्थानों की प्रकृति के अनुसार तीसी के बीजों के रंग रूप और आकार में भी अंतर पाया जाता है। देश में तीसी के बीच सफेद,पीले,लाल या थोड़े काले रंग के होते है। गर्म प्रदेशों में तीसी सबसे अच्छी मानी जाती है। आमतौर पर लोग तीसी के बीज,तेल को उपयोग में लाते हैं। तीसी के प्रयोग सांस ,गला ,कंठ, कफ, पाचनतंत्र के विकार सहित घाव कुष्ठ रोगों में लाभ लिया जाता है। अलसी में कैल्सियम, फास्फोरस, आयरन, केरोटीन, थायमिन, राइबोफ्लोविन और नियासिन पाये जाते हैं। यह गनोरिया, नेफ्राइटिस, अस्थमा, सिस्टाइटिस, कैंसर, हृदयरोग, मधुमेह, कब्ज, बवासीर, एक्जिमा के उपचार के लिये उपयोगी है।

सुपर फूड का काम करते हैं अलसी के बीज- पोषक तत्वों और गुणों से भरपूर अलसी को अब सुपर फूड का स्थान दे दिया गया है। इस लेख में अलसी के फायदे ,अलसी खाने के नुकसान, अलसी के पोषक तत्वों अलसी का उपयोग कैसे करें और अलसी खाने के तरीके के बारे में बताया गया है। अलसी में स्वास्थ्य को लाभ पहुंचाने वाले अनेक गुण मौजूद होते हैं। अब तो अलसी को सुपर फूड कहा जाने लगा है। अलसी बीज, तेल, पावडर, गोली, कैप्सूल और आटे के रूप में उपलब्ध हैं। कब्ज, डायबिटीज, हाईकोलेस्ट्रॉल, हृदयरोग, कैंसर एवं कई स्वास्थ्य समस्याओं से बचने के लिये डायट्री

• सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, इटारसी

सप्लीमेंट के रूप में अलसी का इस्तेमाल किया जाने लगा है। एक चम्मच पिसी अलसी में निम्न लिखित पोषक तत्व पाए जाते हैं -

55	कैलोरी
03	ग्राम फाइबर
02	प्रोटीन
03	कार्बोहाइड्रेट
40	मि. ग्राम मैग्नीशियम
0.3	मैग्नीशियम
65	फास्फोरस
0.1	कॉपर
0.2	थियामिन विटामिन
03	सेलेनियम
2.95	ग्राम फैट
17.0	मि. ग्राम कैल्सियम
56.9	मिलीग्राम पोटेशियम
6.09	माइक्रोग्राम फोलेट
45.6	ल्यूटिन और जीएक्सेंथीन

सुपर फूड अलसी - अलसी एक अद्भुत और चमत्कारिक तिलहनी फसल हैं, इसमें ऐसे औषधीय गुण तत्व हैं जो शरीर को हमेशा स्वस्थ्य रखते हैं। इसके सेवन से शरीर में रोग प्रति रोधक क्षमता बढ़ती है। तमाम तरह की घातक बीमारियाँ पास नहीं फटकती, यह उम्र को बढ़ाती है और बुढ़ापे में भी स्वस्थ्य जीवन शैली की सौगात देती है। महात्मा गांधी ने स्वास्थ्य पर पुस्तकें लिखी है, उन्होने एक पुस्तक में लिखा है, जहाँ अलसी का सेवन किया जाता है वहाँ कोई बीमार नहीं पड़ता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने भी इसके गुणों को देखते हुये इसे सुपर फूड यानी सर्वश्रेष्ठ भोजन का दर्जा दिया हुआ है।आइये देखें इसे सर्वश्रेष्ठ क्यों कहा गया है।

ओमेगा - 3 का सबसे बड़ा स्त्रोत - अलसी में ओमेगा 3 है। ओमेगा 3 और ओमेगा 6 दो ऐसे तत्व हैं, जो शरीर के लिये आवश्यक होते है। इसमें ओमेगा 3 अत्यंत दुर्लभ है, जबकी ओमेगा 6 मूंगफली, सोयाबीन, सूरजमुखी आदि तेलों में खूब पाया जाता है। इसके अलावा आजकल बाजारों में उपलब्ध डिब्बा और पैकेट बंद खाने पीने की चीजों में भी ओमेगा 6 काफी मात्रा में होता है। ओमेगा 6 की कमी और अधिकता हो जाने से तमाम तरह की बीमारियां शरीर पर अपना कब्जा जमा लेती है। इनमें तनाव, सिरदर्द, डिप्रेशन, हाईब्लड प्रेशर, हार्टअटैक, डायबिटीज, मोटापा, जोडों का दर्द, दमा और कैंसर आदि प्रमुख हैं। जबकि ओमेगा 3 इन बीमारियों की रोकथाम करता है और इलाज भी। अलसी ओमेगा 3 का पृथ्वी पर सबसे बड़ा स्त्रोत है। इनमें से 18 से 20 प्रतिशत ओमेगा 3 फैटी एसिड पाया जाता है।

अलसी कैंसर रोधी है - अलसी में एक अन्य महत्वपूर्ण पौष्टिक तत्व होता है। जिसे लिग्नेन कहते हैं। लिग्नेन शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है और उसे बैक्टीरिया

वायरस, फंगस और कैंसर से लड़ने की ताकत देता है। लिग्नेन में कैंसर की रोकथाम करने और उसे मिटाने की अद्‌भुत क्षमता है। यह प्रोस्टेट, बच्चेदानी, स्तन, आंत और त्वचा आदि सभी तरह के कैंसर से बचाव करता है। केवल अलसी ही ऐसा खाद्य पदार्थ है, जिसमें सबसे अधिक मात्रा में लिग्नेन होता है। आपको यह जानकर ताज्जुब होगा कि एक चम्मच अलसी में जितना लिग्नेन होता है, उतनी मात्रा में उसे प्राप्त करने के लिये निम्नलिखित चीजों की आवश्यकता पड़ती है-

54.8	किलो ग्राम ब्रोकली
2248	ओटमील
83	सोयाबीन
118	गाजर
36	सूरजमुखी
59	लहसुन

फाइबर से भरपूर- अलसी में 27 प्रतिशत घुलनशील और अघुलनशील दोनों तरह के फाइबर पाये जाते हैं। इतना फाइबर अन्य किसी चीज में नहीं मिलता है। फाइबर अधिक होने के कारण अलसी कब्ज, मस्सा, बावासीर, भगन्दर, अल्सर और कोलाइटिस से बचाती है। कब्ज के मामले में अलसी ईसबगोल मूसी से भी ज्यादा लाभदायक है।

चमत्कारिक औषधि- दूसरी चीजों की तरह अलसी में अन्य पौष्टिक तत्व होते ही हैं परन्तु ओमेगा 3, लिग्नेन और फाइबर तीन ऐसे महत्व पूर्ण तत्व हैं जो इसमें सबसे अधिक पाये जाते हैं और यही तीनों तत्व अलसी को सर्वश्रेष्ठ बनाते है। यदि प्रति दिन अलसी का सेवन किया जाये तो तमाम ऐसी बीमारियों से हम बचे रह सकते हैं। जिसके इलाज में लाखों रूपये खर्च करने के बाद भी उनसे छुटकारा नहीं हो पाता है। यह स्वस्थ्य रहने की सबसे सरल, सुगम और सस्ती दवा है, परन्तु उसके गुणों को देखा जाये तो वह संसार की सबसे अनमोल गुणकारी और चमत्कारी औषधि है।

अलसी खाने का सही तरीका- अलसी के बीजों को साबुत खाने से बचना चाहिये। क्योंकि आंते इसके पोषक तत्वों को सोख नहीं पाती हैं। अलसी को पीसकर खाना सही रहता है। कच्ची और अधपकी अलसी न खायें। क्योंकि इनमें विषाक्त तत्व होते हैं। पाचन संबंधी परेशानियों से छुटकारा पाने के लिये पर्याप्त पानी पियें और पिसी हुयी अलसी खायें। अलसी के तेल की छोटी बोतल ही खरीदें। इसकी बोतल का रंग गहरा होना चाहिये। आप इसे फ्रीज में ही रखें क्योंकि यह तेल जल्दी खराब हो जाता है। एक्सपायर होने के बाद अलसी का तेल इस्तेमाल न करें।

अलसी खाने के फायदे- अलसी में आमेगा 3 फेटी एसिड होता है। ये कई प्रकार की कैंसर की कोशिकाओं को बढ़ने से रोकता है। अलसी खाने के निम्नलिखित फायदे हैं-

- अमेरिकन हार्ट एसोसिएशन के अनुसार ज्यादा फाइबर और आमेगा 3 खाने से ह्रदय दुरूस्त रहता है।
- अर्थराइटिस फाउंडेशन की माने तो अलसी जोड़ों के दर्द और अकड़न को कम करता है।

- अलसी महिलाओं में रजोनिवृति के दौरान हॉट फलैशेज की गंभीरता को कम करने में मदद कर सकती है।
- अलसी के बीजों में अघुलनशील फाइबर भी होते हैं, जो पानी में घुलते नहीं हैं और खाने के बाद पाचन मार्ग में बने रहते हैं इस तरह यह पानी को सोख लेता है और कब्ज से राहत दिलाता है।

अलसी या तीसी का औषधीय प्रयोग इस तरह से किया जा सकता है।

नींद न आने की बीमारी में अलसी का प्रयोग- नींद न आने की बीमारी में अलसी का सेवन फायदेमंद होता है। इसके लिये अलसी तथा एरंड तेल को बराबर बराबर मात्रा में मिलाकर कांसे की थाली में अच्छे से पीस लें। इसे आंखों में काजल की तरह लगाने से नींद अच्छी आती है।

आंखों के रोग एवं बीमारी में प्रयोग- अलसी आंख के बीमारियों को ठीक करने में भी बहुत लाभकारी सिद्ध होती है। आंखों की बीमारी जैसे आंख आना, आंखों की लालिमा ठीक करने में इसके सेवन से फायदा होता है

दर्द और सूजन में लाभ- तीसी के इस्तेमाल से दर्द और सूजन में भी बहुत फायदा होता है। इसमें अलसी से बनाई हुयी गीली दवा काम करती है। एक भाग कुटी हुयी अलसी को 4 भाग उबलते पानी में डालकर धीरे-धीरे मिलायें, यह गीली होनी चाहिये। इसे दर्द या सूजन वाले जगह पर तेल की तरह चुपड़ कर लगायें, इसके प्रयोग से सूजन और दर्द में आराम लगता है।

कान की सूजन को ठीक करने के लिये- कान की सूजन ठीक करने के लिये अलसी के गुण उपचार स्वरूप बहुत काम आते है। अलसी को प्याज के रस में पकाकर इसे छान लें और 1 - 2 बूंद कान में डालें इससे कान की सूजन ठीक हो जाती है।

अलसी के फायदे सिर दर्द में- आजकल सिरदर्द की समस्या में सबसे ज्यादा परेशानी रहने लगें हैं। सिरदर्द में आराम पाने के लिये अलसी का सही तरह प्रयोग करने पर अलसी के लाभ पूरी तरह से मिल जाते हैं। इसके लिये अलसी के बीजों को ठंडे पानी में पीस कर लेप करें। सिर दर्द या अन्य तरह के दर्द या घावों में फायदा मिलता है।

जुकाम में राहत पाने के लिये- जुकाम से परेशान हैं तो तीसी का प्रयोग कर सकते हैं। अलसी को साफ कर तबे पर धीमी आंच पर भूने, जब अच्छी तरह से भुन जाये और गंध आने लगे तो उसे महीन पीस लें, इसमें बराबर मात्रा में मिश्री मिला लें। आप इसे 5 ग्राम की मात्रा में गर्म पानी के साथ सुबह शाम सेवन करें। इससे जुकाम में लाभ होगा।

खांसी और दमा में- मौसम के बदलाव के समय खांसी और दमें से बार-बार परेशान रहते हैं। इसका सही तरह से प्रयोग कर अलसी का पूरा फायदा उठा सकते हैं। अलसी के बीज का काढ़ा बना लें इसे सुबह शाम पीने से खांसी और अस्थमा में लाभ मिलता है।

वात, कफ दोष में अलसी के फायदे- अलसी के औषधीय गुण का फायदा वात, कफ विकार में भी ले सकते हैं। 50 ग्राम भुनी अलसी के चूर्ण में बराबर बराबर मात्रा में मिश्री और एक चौथाई भाग मरिच मिला लें। इसे 3 - 5 ग्राम की मात्रा में सुबह शहद के साथ सेवन करने से कफ दोष विकार ठीक होते हैं।

थायराइड में अलसी का उपयोग- आप थायराइड का उपचार करने के लिये अलसी

का प्रयोग कर सकते हैं। अलसी के लाभ का पूरा फायदा उठाने के लिये बराबर बराबर मात्रा में अलसी के बीज शमी, सरसों, सहिजन के बीज, जपा के फूल तथा मूली के बीज को छाछ से पीसकर पेस्ट बना लें। इस पेस्ट को गले की गांठों पर लेप करने से थायरायड में फायदा होता है।

घाव सुखाने के लिये अलसी का प्रयोग- अलसी के चूर्ण को दूध और पानी में मिला लें, इसमें थोड़ा हल्दी का चूर्ण डालकर खूब पका लें यह गाढ़ा हो जायेगा। इस गर्म काढ़े को आप जहाँ तक सहन कर सकें गर्म-गर्म घाव पर लेप करें और उस के उपर से पान का पत्ता रख कर बांध लें। इस प्रकार 7 बार लेप करने से घाव पक कर फूट जाता है और घाव की जलन और पीड़ा दूर हो जाती है।

मूत्र विकार में अलसी के फायदे- पेशाब संबंधी रोगों को ठीक करने के लिये अलसी का इस्तेमाल करना अच्छा माना जाता है। इसके लिये 5 ग्राम अलसी, 3 ग्राम मुलेठी को कूट लें इसे 250 मिली लीटर पानी के साथ मिट्टी के बर्तन में हल्की आंच पर पकायें। जब यह 50 मिलीलीटर रह जाये तो इसे छानकर 2 ग्राम कलेभी शीरा मिला लें 2 घंटे के अंतर में 20 - 20 मि. ली. की मात्रा में पियें।

निष्कर्ष- अलसी एक चमत्कारी आयुवर्धक आरोग्य वर्धन दैविक भोजन है। अलसी एक प्राण दायी औषधि है। अलसी एक संपूर्ण आहार है। अलसी विटामिन और खनिज लवणों का भंडार है। अलसी रक्त को पतला बनाये रखती है। रक्त वाहिकाओं को स्वीपर की तरह साफ करती है। अलसी में पाये जाने वाला ओमेगा 3 फेटी एसिड नुकसान पहुंचाने वाली बाडी सेल को एक-दूसरे से चिपकने से रोकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

- कृषक भारती, मासिक पत्रिका 2021
- कृषक जगत, मासिक पत्रिका 2021
- कृषि समाचार, पत्र 2021
- कृषि दर्शन, मासिक पत्रिका 2021
- कृषि जागरण पत्रिका, मासिक पत्रिका 2021

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

कुपोषण : भारत की सामाजिक समस्या

●आशुतोष भण्डारी

सारांश- कुपोषण वर्तमान समाज के लिए एक अभिशाप है। 21 वी सदी में आने के बाद भी मानव भूख से मर जाते है। हंगर इंडेक्स के आंकडे इसको रूप को दर्शाते है । हमारा देश कृषि प्रधान होने के बावजूद भी 60 प्रतिशत लोग किसी न किसी रूप में कुपोषण के शिकार है। लोगो को संतुलित आहार की कमी, स्वास्थ्य की आदतें एवं सामाजिक परिवेश कई प्रकार के कारण इसको बढ़ा रहे है। कुपोषण की स्थिति छोटे बच्चों में अधिक है। 5 वर्ष 10 वर्ष की आयु के बच्चों में यह चिंताजनक है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार प्रत्येक तीन बच्चों में से एक बच्चा कुपोषण का शिकार है। व्यक्ति के पूर्ण विकास के लिए शारीरिक रूप से और स्वास्थ्य की दृष्टि से स्वस्थ होना आवश्यक है। यदि व्यक्ति कुपोषित रहेगा तो वह अपना जीवन यापन सही रूप से नही कर पाता है और उसका जीवन स्तर प्रभावित रहता है। कुपोषण के कारण कई प्रकार की बीमारियॉं व्यक्ति के अन्दर आ जाती है, जिससे उसका स्वास्थ्य प्रभावित होने लगता है।कुपोषण के कारणों में मुख्य रूप से संतुलित आहार की कमी, भोजन की उचित जानकारी का अभाव, गरीबी, मिलावट एवं अन्य कारक है। कुपोषण जैसी समस्या को दूर करके व्यक्ति के जीवन स्तर को ऊॅंचा किया जा सकता है। कुपोषण दूर करने के विभिन्न उपायों में स्वास्थ्य परीक्षण करना, संतुलित आहार की जानकारी देना, सामुदायिक सवच्छता एवं पेयजल स्वास्थ्य योजनाओं की जानकारी सामुदायिक विकास, मिड डे मील जैसे कार्यक्रम आयोजित करना आदि प्रमुख है। कुपोषण जैसी सामाजिक समस्या को एक सतत प्रयास के द्वारा ही खत्म किया जा सकता है। सभी स्तरो पर चाहे सरकार के द्वारा हो या समाज के विभिन्न संगठनों या लोगो के द्वारा इसको खत्म करने के उपायों को लागू करना चाहिए। कुपोषण से हम अपनी आने वाली नस्लों को तभी बचा पायेगें जब हम इसके प्रति सजग होगें एवं सामूहिक प्रयासरत रहेगें।

मुख्य शब्द - कुपोषण, संतुलित आहार, स्वास्थ्य निरीक्षण, सामुदायिक विकास

प्रस्तावना- हमारे देश में आज भी 60 प्रतिशत लोग किसी ना किसी रूप में कुपोषण का शिकार हैं और 5 वर्ष से कम आयु वर्ग के बच्चों में इसकी स्थिति और चिन्ताजनक है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार प्रत्येक तीन बच्चों में एक बच्चा कुपोषण का शिकार है। हमारा देश खाद्यान उत्पादन में विश्व में अग्रणी स्थान रखता है फिर भी हमारी अधिकांश जनसंख्या कुपोषण का शिकार है। कुपोषण के कई कारण हो सकते हैं। समुचित विकास के लिए संतुलित आहार की आवश्यकता होती है, लेकिन कई प्रमुख कारणों के होने से सभी को पोष्टिक आहार नहीं मिल पा रहा है। कुपोषित होने से कई तरह की समस्याएं सामने आ रही है। विश्व बैंक द्वारा विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के आधार पर हमारे जैसे देशो को कुपोषण से लड़ने के लिए अनुदान दिया जाता है।

● सहायक प्राध्यापक, शारीरिक शिक्षा विभाग, बी.वी.आर.आई., बिचपुरी, आगरा

इस अनुदान के अर्न्तगत ही हमारे देश में भी विद्यालय में मध्य दिवसीय भोजन (School midday meal) की व्यवस्था की गयी है, लेकिन इसके बावजूद भी बच्चों मे कुपोषण कम नहीं हो पा रहा है।

कुपोषण का अर्थ- वह भोजन जिसमें हमारे शरीर की आवश्यकतानुसार पोषक तत्व उपलब्ध नहीं होते है उसे अपूर्ण पोषण या कुपोषण कहते हैं। बहुत लोगो को संतुलित भोजन नहीं मिल पाता है जिस कारण उनमें कुपोषण की स्थिति पैदा होती है।

कुपोषण के लक्षण या प्रभाव (Effects or Symptoms of Malnutrition)- कुपोषण के लक्षण या प्रभाव बच्चों में स्वत: ही दिखायी देते हैं। कुछ प्रमुख लक्षण निम्नलिखित है जिनके आधार पर हम कह सकते हैं कि बच्चा या व्यक्ति कुपोषण से ग्रसित है।

1. शारीरिक वृद्धि और विकास समुचित रूप से नहीं होता है।
2. शरीर की मांसपेशियॉ कमजोर होती हैं और आयु एंव ऊँचाई के अनुसार भार नहीं होता है
3. शारीरिक अक्षमता या दुर्बलता उत्पन्न होती है।
4. शरीर की अनुचित बनावट हो जाती है।
5. विभिन्न प्रकार के भोजन के पोषक तत्वों की कमी के कारण विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं।
6. शरीर में थकान पैदा होना और कार्य सही प्रकार से नहीं कर पाना।
7. संक्रामक रोगो से ग्रसित रहना।
8. मानसिक विकास समुचित ना होना जिस कारण कई मनोवैज्ञानिक विकार उत्पन्न होना।
9. व्यग्र होना, उत्तेजित होना, भयभीत रहना, एकाग्रचित न रह पाना और आत्मविश्वास की कमी होना।
10. बच्चों में सीखने की प्रक्रिया धीमी हो जाती है।

कुपोषण जनित रोग (Diseases Due to Malnutrition)- कुपोषण के कारण हमारे शरीर में विभिन्न प्रकार के रोग पैदा हो जाते हैं। जिन्हे समुचित आहार या संतुलित आहार के द्वारा दूर किया जा सकता है। कुपोषण की कमी से कुछ प्रमुख रोग निम्नलिखित हैं-

	रोग	**कमी (पोषक तत्व)**
1.	क्याशियोरकोर	प्रोटीन
2.	ओस्टीयोमलेशिया	विटामिन डी (फास्फोरस एंव कैल्शियम की कमी)
3.	रतौंधी	विटामिन ए
4.	बेरी-बेरी	विटामिन बी 1
5.	सूखा रोग (रिकेटस)	विटामिन डी
6.	घावों से अत्यधिक खून बहना	विटामिन के
7.	पेलग्रा	विटामिन बी 3
8.	त्वचा सम्बन्धी रोग	विटामिन बी 2
9.	एनीमिया	विटामिन बी 12
10.	स्कर्वी	विटामिन सी

कुपोषण के कारण (Causes of Malnutrition)- कुपोषण को कई प्रकार से देखा जा

सकता है और कुपोषण होने के कई कारण हो सकते हैं जिनके आधार पर व्यक्ति या बच्चा कुपोषित होता है। कुछ प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं जिनसे कुपोषण की समस्या पैदा होती है–

1. **भोजन की उचित जानकारी का अभाव होना (lack of proper knowledge of food)**– अधिकतर माता-पिता को संतुलित आहार का समुचित ज्ञान नही होता है और इस कारण बच्चो को जरूरी पोषक तत्व नहीं मिल पाते हैं और बच्चे कुपोषण के शिकार हो जाते हैं।
2. **कम भोजन मिलना (lack of sufficient food)**– अधिकतर बच्चों को उचित मात्रा में भोजन नही मिल पाता है जिस कारण उनमें कुपोषण के लक्षण पैदा हो जाते हैं।
3. **पोषक तत्वों की कमी होना (lack of nutrients)**– भोजन में पोषक तत्व प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन आदि की कमी होने से बच्चो में कुपोषण हो जाता है।
4. **आवश्यकता से अधिक भोजन करना (taking too much food)**– यदि कोई व्यक्ति या बच्चा अपने दैनिक कार्यो के लिए आवश्यक उर्जा से अधिक उर्जा खाने के रूप में लेता है तो वह उसके शरीर में स्टोर हो जाती है। जिससे उस व्यक्ति में वसा के रूप में मोटापा आ जाता है और कई प्रकार की बीमारी भी हो जाती है। भोजन की अधिकता भी कुपोषण होता है।
5. **भोजन सम्बन्धी पसन्द (food liking)**– अधिकतर लोग कई बार अपनी पसन्द, रूचि और स्वाद के अनुसार भोजन करते हैं, जिससे एक प्रकार के पोषक तत्व शरीर में जाते है, जिससे शरीर को समुचित पोषक तत्व नही मिल पाते हैं और कुपोषण की स्थिति मे आ जाते हैं।
6. **गरीबी (Poverty)**–कुपोषण का एक प्रमुख कारण गरीबी भी है, जिसके कारण लोग धन के अभाव में पौष्टिक भोजन नही ले पाते है। केवल पेट भरने हेतु भोजन करते हैं जिससे उनकी भूख तो शांत हो जाती है लेकिन शरीर को पोषक तत्व नहीं मिल पाते हैं, जिससे उनका शरीर कुपोषित हो जाता है।
7. **मिलावटी खाद्य पदार्थ (Adulterated food product)**– आजकल खाद्य पदार्थों में मिलावट बहुत अधिक है। अधिकतर खाद्य पदार्थों में किसी ना किसी स्तर पर मिलावट या जो शरीर के लिए हितकर नहीं हो ऐसे पदार्थों की मिलावट की जाती है, जिससे शरीर को उपयुक्त पोषक तत्व नहीं मिलते हैं।
8. **उचित समय पर भोजन नही करता (not taking food in proper time)**– यदि बच्चा उचित समय पर भोजन नहीं करता है और प्रतिदिन दिनचर्या में समय पर भोजन का अभाव हो तो शरीर को समय पर उचित भोजन नहीं मिलता है तो शरीर पर दुष्प्रभाव पड़ता है।
9. **शारीरिक रोगो के कारण (Due to Diseases)**– यदि कोई बच्चा लगातार बीमार रहता है तो उसे अधिक संतुलित भोजन की आवश्यकता पड़ती है। यदि समुचित आहार नहीं मिलता है तो कुपोषण की स्थिति आ जाती है।

10. **नींद व आराम का अभाव (Lack of sleep and rest)**- उचित भोजन के साथ-साथ आराम व नींद होना जरूरी है। यदि अधिक कार्य करने पर आराम ना मिले तो शरीर पर बुरा असर पडता है और अच्छे स्वास्थ्य के लिए उचित और निर्धारित घंटो की नींद लेना जरूरी है अन्यथा शरीर पर बुरा प्रभाव पड़ता है।
11. **मानसिक कारण (Mental Factors)**- यदि बच्चो के साथ घर में या विद्यालय में उचित व्यवहार नही किया जाता है तो बच्चो में चिन्ता, भय, निराशा, डर आदि उत्पन्न होते हैं, जिससे उनके मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है और जिस कारण बच्चों का भोजन के प्रति रूचि में कमी आती है और यह उनके लिए कुपोषण का कारण बनती है।
12. **वातावरण का प्रभाव (Effect of Environement)**- यदि हमारे आसपास का वातावरण जैसे घर, स्कूल, गॉव, शहर का वातावरण प्रदूषित है तो उसका बुरा प्रभाव हमारे शरीर पर पड़ता है। यदि घर में समुचित प्रकाश, पानी, शुद्व वायु नही है तो सभी लोगो का स्वास्थ्य उत्तम नही होगा। यदि स्कूलों में व्यक्तिगत स्वच्छता तथा स्कूल में सफाई और सामुदायिक स्वच्छता समुदाय में नहीं है तो सभी के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है और कुपोषण का एक कारण बनता है।

कुपोषण दूर करने के उपाय- कुपोषण आज एक जटिल समस्या के रूप में सामने है और इसकी चपेट में हमारे अधिकांश बच्चे आ रहे हैं और उनका स्वास्थ्य प्रभावित हो रहा है। कुपोषण को दूर करने के लिए ठोस कारगर कदम उठाने चाहिए, जिससे इस समस्या से काफी हद तक निजात पायी जा सके। कुछ उपाय निम्नलिखित हैं जिनको ध्यान में रखा जाय तो कुपोषण को दूर किया जा सकता है-

1. **स्वास्थ्य परीक्षण-** कुपोषण ग्रसित बच्चों का स्वास्थ्य परीक्षण किया जाना चाहिए जिससे उनकी बीमारियों का पता चल सके एंव जो भी पोषक तत्वों की कमी हो उसको दूर करने के उपाय किये जा सकें।
2. **कुपोषित बच्चों का चयन करना-** कुपोषण को दूर करने के लिए सर्वप्रथम उन बच्चों का चयन करना चाहिए जिनमें कुपोषण के लक्षण दिखायी दें।
3. **संतुलित आहार के बारे में जानकारी देना-** कुपोषण को दूर करने के लिए बच्चो को संतुलित आहार के बारे में जानकारी देना चाहिए और इसके साथ ही उन्हें संतुलित आहार देना चाहिए जिससे कुपोषण लक्षणों को कम किया जा सके।
4. **स्वास्थ्य शिक्षा की जानकारी देना-** कुपोषण के लिए कई कारक जिम्मेदार हैं जिसमें से एक स्वास्थ्य शिक्षा का अभाव भी है। माता-पिता को स्वास्थ्य शिक्षा में, स्वच्छता, संतुलित आहार, पोषक तत्वों एंव भोजन के प्रकार तथा तरीकों के बारे में बताना चाहिए।
5. **सामुदायिक स्वच्छता एंव पेयजल की व्यवस्था-** बच्चों के स्वास्थ्य के लिए समुदाय में स्वच्छता आवश्यक है, जिससे वातावरण में गंदगी ना फैले और संक्रामक बीमारियों से बचा जा सके तथा सभी के लिए शुद्व पेयजल की व्यवस्था होनी चाहिए, जिससे बच्चों में पेट सम्बन्धी बीमारियों से बचा जा सके।
6. **विद्यालय में मिड डे मील की व्यवस्था-** सभी विद्यालयों में मध्याहन भोजन की व्यवस्था होनी चाहिए और इस भोजन में सभी पोषक तत्वों को समिलित

किया जाना चाहिए तथा ध्यान रखना चाहिए कि भोजन सुतुलित आहार की श्रेणी में आता है। जिससे बच्चों में कुपोषण को दूर किया जा सके।

7. **स्वास्थ्य केन्द्रो द्वारा जानकारी देना-** कुपोषण के बारे में जानकारी देने के लिए प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रो द्वारा गॉवों में कैम्पो का आयोजन किया जाना चाहिए तथा उन्हें कुपोषण से बचाव के तरीके बताने चाहिए। विभिन्न प्रकार के श्रव्य-दृश्य उपकरणों के माध्यम से रूचिकर बनाते हुये उन्हे कुपोषण की जानकारी देना चाहिए।

8. **विद्यालय एंव घर का वातावरण-** कुपोषण से बचने के लिए घर एंव विद्यालयों में साफ-सफाई, धूप की व्यवस्था एंव शुद्ध वायु का आगमन हो सके इसकी व्यवस्था करनी चाहिए जिससे बच्चों को कुपोषण से बचाया जा सके।

9. **विद्यालयों में व्यायाम की व्यवस्था-** कुपोषण से बचाव का एक तरीका शरीर को सुडौल एंव सुदृढ बना कर भी है। सभी बच्चों को नियमित व्यायाम कराना चाहिए जिससे उनकी मांसपेशियाँ मजबूत बनी रहती हैं और सभी में न्यूनतम शारीरिक दक्षता पैदा की जा सकती है। और बच्चों में अपने शरीर को स्वस्थ रखने की प्रवृत्ति को पैदा किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. कवर, डॉ आर. सी., आरोग्य शास्त्र एवं स्वास्थ्य शिक्षा, अकित ब्रदर्स पब्लिकेशन , 2004
2. Dheer, M Basu, R. Kamal, Introduction to health Education, A.P.Publication 1989.
3. बघेला, हेतसिंह, स्वास्थ्य शिक्षा एवं शारीरिक शिक्षा शिक्षण, राजस्थान प्रकाशन, 2004
4. रंजन, डॉ राजकुमार, शौकत अली , गुलाम मुस्तफा, स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा, राखी प्रकाशन 2005
5. Singh, Dr,. Ajmen, Essentials of physical Education, Kalyani Publication, 2003

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

नयी कविता और कुँवरनारायण

• रेणु सक्सेना
•• शुभा मिश्रा

सारांश- 1953 की बाद की कविता को नई कविता कहा जा सकता है। नवीन प्रयोग, नवीन अवधारणा, नवीन अभिव्यक्ति इसकी प्रमुख विशेषताएं है। कुँवरनारायण नई कविता के एक प्रमुख हस्ताक्षर है और ये स्थान उन्हे उनकी प्रथम काव्य रचना चक्रव्यूह से प्राप्त होता है। इसकी सफलता के पश्चात् तीसरे सप्तक में उन्हें स्थान मिला जहां से साहित्य जगत में उन्हें एक प्रतिष्ठित कवि के रूप में दर्जा प्राप्त हुआ और वे नई कविता के आधार स्तंभ माने गये। कुंवरनारायण जी को ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त होना भी नई कविता का सम्मान ही है। इस विषय पर स्वयं कुंवरनारायण जी ने कहा है, मैं तो समझता हूं यह कविता ही क्या, पूरे साहित्य का सम्मान है। क्योंकि अब तो समस्त पुरस्कार एक लेखक को विचार में रखकर दिया जाता है, किसी पुस्तक विशेष पर नहीं। तो इस ख्याल से तो मैं यह मानता हूं कि यह हिन्दी साहित्य का सम्मान है, खासकर नई कविता का सम्मान है, क्योंकि इसके निर्णायक मंडल में सभी भाषाओं के प्रतिनिधि थे। हिन्दी को तो यह अवसर लगभग 8 वर्षो बाद मिला है। कविता को तो शायद और भी बाद में मिला है।

मुख्य शब्द - अवधारणा, अभिव्यक्ति, प्रतिष्ठित, पुरस्कार

कुँवरनारायण जी की कविताओं में एक नयापन देखकर ही उनकी सार्थकता को भली-भांति समझा जा सकता है। अपने दौर के कवियों के बीच तो उन्होंने अपना स्थान बनाया ही परन्तु वर्तमान दौर के कवियों के बीच भी उनकी कविताओं की कौंध आज भी वही है। अपने सामने कविता संग्रह की कविता 'इब्नेबतूता' नयी कविता के रूप में सबके सामने आती है।

इस बर्बर समारोह में कौन है ये अधमरे बच्चे, औरतें जिनके बेदम शरीरों से
हाथ पाँव एक एक कर अलग किये जा रहे हैं ?
काफिर ? या मनुष्य ? कौन हैं ये
मरे इर्द गिर्द जो
शरीअत के खिलाफ
शराब पिये जा रहे हैं ?

कुँवरनायाण जी ने खुद को न सिर्फ इतिहास और पुरातत्वों तक सीमित रखा बल्कि उपनिषद, महाकाव्य, कबीर, गालिब, गांधी और बौद्ध से मार्क्सवाद तक खुद को विस्तृत किया और नयी कविताओं के माध्यम से इन्हें साहित्य जगत में प्रस्तुत किया। मुक्तिबोध ने 'नई कविता का आत्मसंघर्ष' लिखते हुये कविता को जिस जड़ीभूत संवेदना

• शोध निर्देशक, शासकीय नागार्जुन स्नातकोत्तर विज्ञान महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)
•• शोध छात्रा, पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

से बाहर निकालने का उपक्रम किया था, कुँवर नारायण कविता के आत्मसंघर्ष पर कुछ नोट्स दर्ज करते हुये सामाजिक यथार्थ के बरक्स, कविता में संवेदना की ताकत को ज्यादा महत्व देते है। उनकी कोशिश इस बात की रही है कि कविता मनुष्य के दिल और दिमाग के जितना ही नजदीक अपनी जगह बनाएगी, उनके लिये जीवित रहना उतना ही संभव और अर्थपूर्ण होगा। परिवेशः हम तुम कविता-संग्रह की कविता तुमने देखा इसी बात को चरितार्थ करती नज़र आती है।

"तुम कैसे हो ?"
लगा यह उलाहना था
"तुम बड़े वैसे हो !..."
मैंने चाहा
मैंने चाहा
तुमसे भी अधिक सुन्दर कुछ कहूँ,
उस विरल क्षण की अद्वितीय व्याख्या में, सदियों तक रहूँ.
लेकिन अव्यक्त
लिये मीठा-सा दर्द। मोहताज शब्द...।
बिखर गए इधर-उधर

इतिहास के जरिये यदि वर्तमान को अपने कविताओं के माध्यम से देखने की खूबी किसी में समाहित थी तो वे थे नयी कविता के सशक्त हस्ताक्षरक कुँवरनारायण जी और यही इनके भीतर की सबसे बड़ी विशेषता थी, जो अन्य नयी कविता लिखने वाले कवियों में नहीं पाई गई। जो एक इतिहासकर्ता, लेखक, विचारक हो उनकी कविताओं में ही एक अद्भुत नयापन दिखना कोई बड़ी बात नहीं है, क्योंकि नवीनता के साथ ही कुँवरनारायण जी ने अपनी हर कविताओं को जन्म दिया है। कोई दूसरा नहीं काव्य-संग्रह की कविता 'अबकी अगर लौटा तो' उनके नयेपन को प्रत्यक्ष रूप से दर्शाती है कि खुद लौटकर आने के पश्चात वे खुद को किस नये रूप में पाते हैं।

अबकी अगर लौटा तो
मनुष्तर लौटूंगा
घर से निकलते
सड़को पर चलते
बसों पर चढ़ते
ट्रेने पकड़ते
जगह-बेजगह कुचला पड़ा
पिद्दी सा जानवर नहीं
अगर बचा रहा तो
कृतज्ञतर लौटूंगा

कुँवरनारायण अपने समय के प्रति सजग भाव से ग्रहणशील हैं। वे जानते हैं कि यर्थाथ के कई धरातल होते हैं, और कविता ऊपर-ऊपर तैरकर नहीं रह जाती, वह अंतः प्रवेश करती है। कई बार कवियों को स्वयं का भी प्रतिपक्ष बनना पड़ता है और इस बात

को कुँवरनारायण जी बखूबी समझते हैं। नये कवि के रूप में शामिल होना कुँवरनारायण जी के लिये साहित्य के क्षेत्र में एक बड़ी उपलब्धि थी। इस बार खुद को फिर से एक नये रूप में साहित्य जगत में प्रस्तुत करने का सुअवसर प्राप्त होना हर किसी के लिये जीवन का एक नया अध्याय प्रांरभ होना जैसे ही सुखद अनुभव प्रदान करने वाला था तीसरा सप्तक में प्रकाशित कुँवर नारायण जी की कविता 'ये पंक्तियां मेरे निकट' इसी नयेपन के अनुभव को दर्शाती है।-

ये पंक्तियां मेरे निकट आई नहीं
मैं ही गया उनके निकट
उनको मनाने,
ठीठ, उच्छृंखल अबाध्य इकाइयों को
पास लाने
ये कभी भी पास मेरे नहीं आए
मैं गया उनके निकट उनको बुलाने,
गैर को अपना बनाने

अपनी बातें घुमा-फिरा कर कहने की अपेक्षा सीधा पाठकों के ह्रदय तक प्रवेश करवाना कुँवरनारायण जी के ही बस की बात है। नयी कविता के माध्यम से भारतीय परम्परा को और भी सुदृढ़ एवं समृद्ध बनाने की जद्दोजहद सदैव उनके भीतर रही। आधुनिक कवि होने के बावजूद अपनी संस्कृति, पुरातनता को उन्होंने सदैव अपने साथ रखा और समय-समय पर अपनी कविता के माध्यम से पाठकों के समक्ष लाकर उसे संजोने का प्रयत्न किया। अज्ञेय जी के पश्चात् नयी कविता पर सबसे अधिक किसी की कलम चली है तो वे कुँवर जी ही हैं जिन्होनें नयी कविता को और भी अधिक समृद्ध बनाया। 'आत्मजयी' और 'वाजश्रवा के बहाने' प्रबंध काव्य के रूप में लिखकर लंबी कविता के माध्यम से नयी कविता में प्रस्तुत किया -

पिता, तुम भविष्य के अधिकारी नहीं,
क्योंकि तुम 'अपने' हित के आगे नहीं सोच पा रहे,
न अपने 'हित' को ही अपने सुख के आगे।
तुम वर्तमान को संज्ञा तो देते हो, पर महत्व नहीं।
तुम्हारे पास जो हे, उसे ही बार-बार पाते हो
और सिद्ध नहीं कर पाते कि उसने तुम्हें संतुष्ट किया।
इसीलिए तुम्हारी देन से तुम्हारी ही तरह
फिर पाने वाला तृप्त नहीं होता,
तुम्हारे पास जो है, उससे और अधिक चाहता है,
विश्वास नहीं करता कि तुम इतना ही दे सकते हो।

विचारशील व्यक्ति की समस्या के माध्यम से वर्तमान के जरिये भविष्य को देखना कुँवरनारायण जी की नयी कविता की सबसे बड़ी विशेषता है। वर्तमान की आवश्यकताएं या पूर्ति ही सबकुछ या पर्याप्त नहीं बल्कि वर्तमान के साथ-साथ भविष्य में सुखी जीवन व्यतीत करना भी उतना ही आवश्यक है। नयी कविता के जरिये

कुँवरनारायण जी ने ऐसे अनेक सत्यों को उजागर किया है या हमाने सामने ऐसे कई प्रश्न लाकर खड़े किये है जिससे आज तक हमारी पीढ़ियां अनजान रही और जिनको वे कल्पना मात्र समझा करते थे। भूतकाल से वर्तमान को जोड़कर भविष्य का आइना दिखाने का कार्य कुँवरनारायण की सभी नयी कविताओं ने किया। इससे लोगों के भीतर समाजहित को लेकर अनेक भ्रांतियाँ समाप्त हुई और नयी विचारशैली ने जन्म लिया।

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि कुँवरनारायण नयी कविता के सशक्त कवि के रूप में पाठकों के ह्रदय में आज भी विद्यमान है। न सिर्फ भारत बल्कि नयी कविता के माध्यम से कुँवरनारायण ने विश्व-पटल पर भी एक सुदृढ़ साहित्यकार के रूप में अपना नाम अंकित किया। भारत के साथ-साथ विभिन्न देशों का भी व्यापार एवं साथ उन्हें प्राप्त हुआ। उन्होंने विदेशों में अनेक सम्मान और पुरस्कार भी प्राप्त किए। इनकी कविता कौशल को देखकर ही अज्ञेय जी ने अपने तीसरा सप्तक में इन्हे नये कवि के रूप में स्थान प्रदान किया। कुँवरनारायण ने अपनी नयी कविता के माध्यम से एक नई सोच एवं समझ को अपने पाठकों के भीतर प्रवेश दिलाया, जिससे उनमें विचार करने की शैली उत्पन्न हो और वे अपने समाज को नवीन तरीकों से देख पाये। आस-पास या समाज को खुद से देखे और उन्हें समृद्ध बनाने में सहयोग दें। कवि की सबसे बड़ी खूबी यह भी है कि इनकी कविताओं से वर्तमान युग के साहित्यिक परिदृश्यों एवं मूल्यों को समझने में आसानी मिली है। नयी कविता के दौर में जो स्थान कुँवरनारायण जी को प्राप्त हुआ वह अन्य किसी कवि को नहीं साहित्य समाज सदैव आपका स्मरण करेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. अपने सामने, कुँवरनारायण, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली पहली आवृत्ति, 2003, पृ.सं.- 89
2. कोई दूसरा नहीं, कुँवरनारायण, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, चौथा संस्करण 2011, पृ.सं.-9
3. तीसरा सप्तक, अज्ञेय, भारतीय ज्ञानपीठ नयी दिल्ली, दसवां संस्करण 2013, पृ.सं.- 158
4. आत्मजयी, कुँवरनारायण, भारतीय ज्ञान पीठ, नयी दिल्ली, आँठवा संस्करण, 2008 पृ.सं.- 20
5. अन्वय साहित्य के परिसर में कुँवर नारायण, ओम निश्चल, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2018, पृ. सं.-16
6. कुँवरनारायण उपस्थिति, यतीन्द्र मिश्र, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2010, पृ. सं.- 227

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

मध्य हिमालय में कृषि पद्धति, कृषि तकनीकी एवं कृषि उपकरणों के विकास का ऐतिहासिक अध्ययन

• देवेश सिंह गर्ब्याल
•• सत्येन्द्र धर्म्वाण

सारांश- मानव की भौतिक प्रगति में नवपाषाण काल का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। इस काल से उसने नियमित रूप से कृषि तथा पशुपालन करना आरम्भ कर लिया था। वह अधिक समय तक जंगली जानवरों के शिकार तथा कन्दमूलों पर निर्भर नहीं रह सकता था। अतः कृषि एवं पशुपालन ने उसके स्थायी जीवन का आधार निर्मित किया। इसी क्रम में मध्य हिमालय क्षेत्र में पुरातात्विक साक्ष्यों से कृषि के आरम्भ होने के प्राचीनतम् साक्ष्य प्राप्त होते हैं। कृषि कार्य आरम्भ होने के शनैः शनैः कृषि पद्धति एवं कृषि तकनीकियों में भी उत्तरोत्तर सुधार हुआ जो आज भी निरन्तर जारी है। मध्य हिमालय की कुछ कृषि तकनीकियां अति प्राचीन है जिन्हें आज भी उसी रूप में अपनाया जा रहा है। इसके अतिरिक्त मध्य हिमालय में कृषि तकनीकियों के साथ-साथ कृषि उपकरणों में भी निरन्तरता और परिवर्तन दृष्टिगत होता है। कई अनेक प्राचीन कृषि यन्त्रों का प्रयोग यहाँ आज भी किया जा रहा है। समय के साथ-साथ इनके आकार तथा प्रकार में परिवर्तन होता रहा है। वर्तमान समय में कुशल-कारीगरों के अभाव में यहाँ के निवासियों ने हस्तनिर्मित तथा स्थानीय कच्चे माल से निर्मित यंत्रों की अपेक्षा मशीनकृत यंत्रों का प्रयोग आरम्भ कर दिया है, क्योंकि ये यंत्र आसानी से तथा कम लागत पर सुलभ हो जाते हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत शोध-पत्र में मध्य हिमालय में कृषि पद्धति, कृषि तकनीकी तथा कृषि उपकरणों के विकास पर प्रकाश डालने का प्रयास किया जाएगा।

मुख्य शब्द- पुरास्थल, मध्यहिमालय, उत्पादकता, तकनीकी, कृषि यंत्र, रिंगाल, काष्ठनिर्मित, प्रस्तर उपकरण

यह सर्वविदित है कि समस्त जीव-जन्तुओं को जीवित रहने हेतु ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जिसकी पूर्ति वह विभिन्न खाद्य पदार्थों के माध्यम से करता है। इसके लिए उसे कृषि कार्य की आवश्यकता होती है। विभिन्न ऐतिहासिक एवं पुरातात्विक अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि मानव इस ऊर्जा को प्राप्त करने हेतु आखेट एवं कन्दमूल संग्रहण करता था, जिसमें उसे कई कठिनाई का सामना करना पड़ता था। इन्हीं परेशानियों के निराकरण हेतु प्राचीन काल से ही मानव ने विभिन्न कृषि यंत्रों का अविष्कार करके कृषि एवं पशुपालन को अपनाया।

प्रागैतिहासिक काल में मनुष्य को अपनी उदरपूर्ति हेतु जानवरों के शिकार एवं

• असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, सन्त नारायण स्वामी राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय नारायणनगर जिला पिथौरागढ़, पिन-242550, उत्तराखण्ड
•• शोध छात्र, इतिहास विभाग, हे.न.ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल

कन्दमूल, फल-फूलों आदि पर ही पूर्णत: निर्भर था। अत: इस काल तक मनुष्य को कृषि का ज्ञान नहीं था। तदन्तर नवपाषाण काल में वह आखेटक जीवन के साथ-साथ कृषि-कार्य में भी संलग्न हो गया।

पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि कृषि कार्य का प्रारम्भ 10,000 ई. पू. में शुरू हो गया था।[1] विश्व में कृषि का आरम्भ सभी स्थानों पर एक साथ शुरू नहीं हुआ बल्कि भिन्न-भिन्न समय काल में आरम्भ हुआ। 8000 से 6,000 ई. पू. में पश्चिम एशिया में कुछ स्थानों पर कृषि का आरम्भ हुआ था।[2]

भारतीय उपमहाद्वीप में कृषि के आरम्भ की जानकारी स्वतंत्रता के उपरांत हुए उत्खननों से स्पष्ट होता है। सिन्धु और बलूचिस्तान की सीमा पर बेलन नदी के किनारे मेहरगढ़ नामक स्थान से कृषि का पहला स्पष्ट प्रमाण प्राप्त होता है। इस स्थल से लगभग 5000 ई.पू. गेहूं एवं जौ की विभिन्न किस्में प्राप्त होती है।[3] उत्तर प्रदेश के बेलन घाटी में कोल्डीहवा से धान के साक्ष्य प्राप्त हुऐ हैं।[4] इसी क्रम में ऋग्वेद में भी कृषि का उल्लेख प्राप्त होता है। ऋग्वेद के प्रथम मण्डल में अश्विन देवता द्वारा मनु से हल चलवाने का वर्णन मिलता है।[5] हल को लांगल अथवा 'सीर' कहा जाता था। अथर्ववेद में हल चलाने तथा बीज बोने आदि के सम्बन्ध में अनेक मंत्र है। इस समय तक बड़े-बड़े हलों का निर्माण होने लगा था साथ ही इस ग्रंथ में छह, आठ, बारह और चौबीस बैलों तक को हल में जोते जाने का उल्लेख प्राप्त होता है।[6] इस काल के लोग गोबर की खाद से परिचित थे तथा उन्हें दो फसलों वाले खेतों के बारे में जानकारी थी।[7]

उत्तर वैदिककाल तक सम्पूर्ण भारत में कृषि क्रम का विकास प्रारम्भ हो चुका था इसी क्रम में ऐसा माना जा सकता है कि इस काल में मध्य हिमालय क्षेत्र में भी कृषि का विकास आरम्भ हुआ होगा। यहाँ पर कुदाल, फावड़े, हल आदि यंत्रों से कृषि कार्य आरम्भ होने के साक्ष्य प्राप्त होते हैं।[8]

पुरातात्विक साक्ष्यों के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि मध्य हिमालय क्षेत्र में कृषि की शुरूआत 1000 ई. पू. में हो चुकी थी। मध्य हिमालय से प्राप्त पुरास्थलों थापली, पुरोला (1000 ई. पू.) और रणीहाट (600 ई. पू. से 200 ई0) के उत्खननों में गाय, सुअर, घोड़ा आदि पशुओं के अवशेष प्राप्त होते हैं।[9] जिससे मध्य हिमालय क्षेत्र में कृषि कार्य का आरम्भ होने की पुष्टि होती है।

मध्य हिमालय में कृषि पद्धति- प्राचीनकाल से ही मिट्टी की उत्पादकता के आधार पर भूमि का वर्गीकरण किया जाता रहा है। जिसमें मिट्टी की किस्म, रंग, संरचना का ध्यान रखा जाता था वर्तमान में भी मध्य हिमालय की कृषि योग्य भूमि का उसकी उत्पादकता तथा भौगोलिक बनावट के आधार पर गढ़राजवंश काल से भी भूमि को राज्य अभिलेखों में पर्वतीय भूमि "परवत" और तराई-भाबर (मैदान) की भूमि को ''माल" एवं ''चौरासी माल" के नाम से अभिहित किया गया था। भूमि को उसके उपयोग के आधार पर विभाजित किया गया था जो निम्न प्रकार से है-

सारी - विष्णुवर्मन के तालेश्वर दानपत्र और ललितशुर देव के कण्डारा दानपत्र में सारी शब्द का उल्लेख आया है। सारी शब्द का अर्थ चौरस खेतों की ऐसी पंक्तियों से है जिसमें वर्ष में दो फसलें होती हो।[10]

तलाऊँ भूमि-यह सिंचित भूमि होती है, जिसकी मिट्टी उपजाऊ होती है और साथ ही इसमें गेहूं और धान की फसलें अच्छी होती है। ऐसी भूमि और मिट्टियों की प्राप्ति मुख्यत: नदी घाटियों में पाई जाती है। पर्वतीय भागों में सिंचित भूमि में मुख्य रूप से छोटी नदियों, गाड़-गदेरों द्वारा सिंचाई होती है।[11] तलाऊ भूमि दो प्रकार की होती है-

1. **सेरा**- यह नदी के किनारे निचली घाटियों में अत्यत उपजाऊ क्षेत्र होते है।[12]

2. **सिमार**- यह सेरा के मुकाबले कम उपजाऊ और अधिक ऊँचाई वाले स्थानों पर पाई जाती है।[13]

उपराऊँ भूमि- उपराऊँ का अर्थ असिंचित कृषि भूमि से है। यह भूमि पूर्णत: वर्षा के जल पर निर्भर रहती है। इस प्रकार की भूमि को दो वर्गों में बांटा जा सकता है[14] - अब्बल तथा दोयम

1. **अब्बल**- यह असिंचित भूमि अधिकतर गांव तथा घाटियों में होती है। इस प्रकार की भूमि में गेहूँ तथा धान की उत्तम किस्में उत्पन्न होती है।

2. **दोयम**- यह भी असिंचित भूमि है जो अब्बल की तुलना में कम उपजाऊ होती है- यह गांवों से दूर ऊँचे स्थलों पर होती है। इसकी मुख्य फसलें झंगोरा और मंडुवा है, किन्हीं क्षेत्रों में गेहूं भी उगाया जाता है।

इसके अतिरिक्त भौगोलिक संरचना तथा कृषि उपयोग के आधार पर ताम्रपत्रों में भूमि के विभिन्न प्रकार का वर्णन मिलता है जो इस प्रकार है।[15]

गाड़- यह भूमि छोटी-बड़ी नदी घाटियों में होती है। यहाँ की खेती योग्य क्षेत्र को "गाडू" या "गडू" या गाड़ा कहा जाता है।

लेक- लेक का अर्थ घने जंगल वाली उस भूमि से है जिसे खेती योग्य बनाया जा सकता है, इसी तरह के खेतों में बसे कुछ गांवों के नाम कालान्तर में इस प्रकार पड़े यथा: मंगल लेख, सल्लेख, कसिया लेख, बिल्लेख आदि।

ईजर- यह वह कृषि भूमि थी जिसे प्राय: शासक वर्ग दान देते थे। यह भूमि कृषि हेतु बहुत उत्तम नहीं होती है। इसमें हर तीसरे वर्ष फसल बोई जाती थी।

धुरा- डांडा अथवा धुरा-डांडा प्रकार की भूमि को भी शासकों द्वारा दान में दिया जाता था। डांडा शब्द का अर्थ विभिन्न छोटी-छोटी पहाड़ी चोटियों से है। यह भूमि समतल नहीं होने से खेती योग्य नहीं होती है। लेकिन इस भूमि का प्रयोग घास, लकड़ी और पशुचारण हेतु किया जाता है।

बगड़- यह शब्द सामान्यत: खेत के लिए प्रयुक्त होता है। बगड़ पहाड़ में नदियों के किनारे के समतल तथा उपजाऊ भूमि को कहा जाता है। ऐसी ही खेती वाले स्थान आज भी पहाड़ में है यथा: नारायणबगड़, पातलीबगड़ तथा सौड़बगड़ आदि।

गाड़ को दलों- यह भूमि नदी के किनारे होती है, जो उपजाऊ होती है, लेकिन नदी तल से इतनी ऊँची होती है कि उसमें सिंचाई नहीं की जा सकती है। कुमाऊँ में ऐसी भूमि को दल या दौ कहा जाता है।

बण या वन- ऐसा क्षेत्र जो होती तो वन भूमि है, लेकिन उस पर नियंत्रण गांव वालों का होता है। पहाड़ों में ऐसे क्षेत्र के जंगल में गांव वाले घास एवं लकड़ी हेतु सामूहिक रूप से जाते है। स्थानीय भाषा में इसे "बण जाना" कहते है।

रौ या रय- पहाड़ी क्षेत्रों में गहरी घाटी में स्थित ऐसी भूमि जिसमें पानी एकत्रित होकर तालाब का रूप लेता है। इसे "रौ" कहा जाता है, पानी के सूख जाने पर ऐसी भूमि पर फसल बोई जाती है जो बहुत उपजाऊ होती है।

खिल या कटील- जंगल से लगी ऐसी बंजर भूमि जिसे खेती योग्य बनाया जा सकता है, खिल कहलाती है। ऐसी भूमि में कई बार बिना खेत बनाए ही हल से जुताई करके या फिर खोदकर फसल बोई जाती है। एक बार फसल प्राप्त करने के बाद फिर कम से कम तीन साल तक उसे खाली छोड़ दिया जाता है।

मध्य हिमालय क्षेत्र में फसलों से सम्बन्धित कृषि तकनीकी - फसलों की कृषि तकनीकी निम्न प्रकार है[16] –

गेहूं की फसल हेतु कृषि तकनीकी - गेहूं रवि की मुख्य फसल है, उत्तराखण्ड में यह सर्वाधिक पैदा होने वाली फसल है, गेहूं की फसल झंगोरा और कौणी की फसल काटने के उपरांत बोई जाती है। फसल बोने से पहले खेत को मोटे हल से जोता जाता है। जुताई के पश्चात् खेत में जोल (पाटा) लगाकर कुछ समय तक छोड़ दिया जाता है।

गेहूं की बुआई के साथ खेत में खाद का महत्वपूर्ण स्थान है, जो परम्परागत गोबर के रूप में प्रयोग किया जाता है। आज के दौर में रासायनिक खादों का प्रयोग भी किया जा रहा है। गेहूं की बुआई समय, स्थान की ऊँचाई, जलवायु तथा पर्यावरण पर निर्भर करता है। सामान्यतया यह फसल अक्टूबर-नवम्बर में बोई जाती है और इसके पकने का समय अप्रैल-मई में होता है। वर्षा वाले क्षेत्रों में मुख्यतः लाल किस्म के गेहूं को बोया जाता है।[16] गेहूं पकने के बाद गेहूं की बालियां काटी जाती है। किन्हीं क्षेत्रों में गेहूं को जड़ सहित काटने के पश्चात् बालियां काटी जाती है, जिन्हें डण्डों की सहायता अथवा बैलों को गेहूं की कटी बालियों में घुमाकर कूटा जाता है।

धान की फसल हेतु कृषि तकनीकी- धान की बुवाई हेतु खेत को गेहूं के मुकाबले अधिक तैयार करना होता है। खेत में कई बार जुताई करके इसे तैयार किया जाता है। खेत से खर-पतवार निकालकर सुखाने के पश्चात् उसे जलाया जाता है। धान को छिड़काव पद्धति से बारीक हल से चलाया जाता है। खेत में हल लगने के बाद उसे पाटा एवं कुदाल के माध्यम से समतल किया जाता है।

धान की पौध कुछ ऊँची होने के पश्चात् मया(दनाला) लगाया जाता है। उसके पश्चात कुछ समय बाद प्रथम बार निराई-गुड़ाई की जाती है। दूसरी बार गुड़ाई जून-जुलाई में की जाती है। बरसात के महीनों में धान की रोपाई भी की जाती है। धान की फसल पकने के उपरांत उसे दरांती से जड़ से ही काटकर खेत में एक स्थान पर ढेर लगाया जाता है। फसल को वृत्ताकर आकार में इस प्रकार रखा जाता है कि धान की बालिया बीच में एक स्थान पर एकत्रित हो जाये ये ढेर 3, 5, 7, 9 या 12 दिनों तक रखे जाते हैं। जिसे उसके पश्चात् खेत में ही पैर से मसलकर अलग किया जाता है।[18] धान की बुवाई के साथ मोटे अनाज झंगोरा और कौणी की बुआई भी की जाती है।

मंडुवे की फसल हेतु कृषि तकनीकी- गेहूं की फसल के साथ-साथ मंडुवा की बुवाई आरम्भ हो जाती है। मंडुवा की फसल के साथ-साथ खेत में भट्ट, उड़द, सोयाबीन आदि बोया जाता है। मंडुवा का पौधा कुछ इंच बड़ा होने पर उसमें मया लगाया जाता है। इसे

मनुष्य और बैलों दोनों की सहायता से लगाया जाता है। मंडुवा की फसल अक्टूबर-नवम्बर में पककर तैयार हो जाती है। तत्पश्चात् दरांती से बालियां काटकर अलग की जाती है। 10 से 15 दिनों तक किसी स्थान पर ढेर लगाकर उसे पकने हेतु रखा जाता है।[19] बीच-बीच में इसमें पानी भी डाला जाता है। पकने के पश्चात् इसे पैरों से मांडकर बीज अलग किये जाते हैं।

मध्य हिमालयी क्षेत्रों में कृषि उपकरण- कृषि कार्य से तात्पर्य मिट्टी को तैयार कर फसल उगाना है। इस प्रक्रिया के सम्पादन में भौतिक शक्ति के प्रयोग हेतु समुचित औजारों तथा यंत्रों की आवश्यकता होती है। कृषि प्रक्रिया के प्रारम्भ से आखिर तक मृदा को तैयार करना, बीज बोना, फसलों की गुड़ाई, खाद डालना, फसल काटना, मंडाई करना, भण्डारन तथा पिसाई करने आदि के लिए विभिन्न कृषि उपकरणों की आवश्यकता होती है।[20] मध्य हिमालय में कृषि मुख्यत: वर्षा पर निर्भर है। मध्य हिमालय में सीढ़ीनुमा खेत होते है। इस क्षेत्र के भौगोलिक परिस्थितियों के कारण यहाँ आधुनिक औजारों से कृषि करना सम्भव नहीं है। मध्य हिमालय में लगभग एक समान कृषि औजारों का प्रयोग किया जाता रहा है। कृषि उपकरणों में हल, जुआ, कुदाल, पाटा, दरांती, मया, डिकारा, सियारा, आदि प्रमुख है।

हल- हल का साक्ष्य सर्वप्रथम हड़प्पा कालीन स्थल बनवाली से मिलता है।[21] मध्य हिमालय में लोहे के फाल के प्रयोग का उदाहरण मोरध्वज ऐतिहासिक स्थल से प्राप्त होता है।[22] हल कृषि कार्य का सबसे महत्वपूर्ण उपकरण है यह भूमि को जोतने तथा अनाज को बोने के काम आता है जो बैलों द्वारा खींचा जाता है। पर्वतीय क्षेत्रों में प्राय: लकड़ी का हल प्रयोग में लाया जाता है जो बांज, कैल, सांदण आदि की लकड़ी से बनाया जाता है। इसे स्थानीय भाषा में 'नसूड़ा' कहा जाता है। जिसके अग्र भाग में लोहे का फाल लगाया जाता है। इसके मध्य भाग में लाट को लकड़ियों के माध्यम से जोड़ा जाता है। लाट का अग्र भाग जुवा द्वारा जुड़ा होता है। पिछले हिस्से में लकड़ी का हत्था लगा होता है। इसके द्वारा हल को नियंत्रित किया जाता है जिसे स्थानीय भाषा में "अणुवा" कहा जाता है। (चित्र सं.1) मध्य हिमालय में मुख्यत: दो प्रकार के हलों का प्रयोग किया जाता है।[23] साधारण हल तथा कूड़वाला हल के अतिरिक्त आज के दौर में देशी हल का प्रयोग भी होने लगा है।

साधारण हल- साधारण हल त्रिकोण आकार का होता है, जिनमें हल की निचली सतह सपाट होती है। प्रत्येक जुताई हेतु अलग-अलग हल का प्रयोग किया जाता है। पहली जुताई में कठोर भूमि को जोतने हेतु मोटे हल का प्रयोग किया जता है। बीज बोने के लिए पतले तथा छोटे हल को प्रयोग में लाया जाता है। हल के अग्र भाग में लोहे का फॉल लगा होता है जो कठोर भूमि को चीरता हुआ नाली आकार बनाता है। हल के मध्य भाग में लाट लगी होती है जो 4 से 5 हाथ लम्बी होती है। बैलों के आकार पर भी यह निश्चित होती है। छोटे बैलों पर छोटी तथा बड़े बैलों पर बड़ी लाट का प्रयोग किया जाता है। लाट को नाड़ा द्वारा बैलों के गले में पड़े जुऐ से जोड़ दिया जाता है। हल के पृष्ठ भाग में लकड़ी का हत्था लगा होता है। जिसे 'अणुवा' कहा जाता है। इसकी लम्बाई 70-75 से.मी. होती है।

कूड़वाला हल- यह हल बिना कंकड़ पत्थर युक्त कोमल मिट्टी वाले क्षेत्रों में प्रयुक्त

होता है। यह अधिकांशत: मध्य हिमालय के निचले भागों में प्रयोग किया जाता है। साधारण तथा कूड़वाला हल में मुख्य अंतर इसकी बनावट होती है। जहाँ साधारण हल में लाट तथा अणवा नसूड़े से जुड़े होते है वहीं कूड़ वाले हल में अणुवा में सुराख बनाकर नसूड़ा तथा लाट जोड़ी जाती है। इसके अतिरिक्त कूड़ वाले हल का मुख्य हिस्सा अणुवा होता है, जबकि साधारण हल का मुख्य भाग नसूड़ा होता है। कूड़ वाले हल में लाट फंसाने हेतु अलग से छिद्र बनाया जाता है लाट को 450 के कोण पर रखा जाता है जिसको कि उसे बैलों के कन्धों पर रखे जुए से आसानी से जोड़ा जा सके।

देशी हल- उपरोक्त हलों के अतिरिक्त मध्य हिमालयी क्षेत्रों में लोहे के हल का प्रयोग भी होने लगा है जिसे देशी हल कहा जाता है। देशी हल में नसूड़े की लम्बाई 44-45 से.मी. तथा ऊँचाई 30 से.मी. होती है। इसका अग्र भाग होल्डर की तरह होता है। इस कूड़ की लम्बाई 80-90 से.मी. होती है जिसे मुठिया कहते हैं तथा हल में दो छिद्र होते है। पीछे के दो हिस्से में अणुवा को पेंचदार कील के माध्यम से कस दिया जाता है। नसूड़े से 14-15 से.मी. ऊपर लाट पेंच द्वारा अणुवा से जुड़ी रहती है।[24] नसूड़ा तथा लाट के संतुलन को बनाये रखने हेतु लोहे की कील से पेंच द्वारा जोड़ा जाता है।

जुआ- जुए का उपयोग बैलों को आपस में जोड़ने हेतु किया जाता है। जुए के दोनों सिरों पर चार छिद्र होते है, जिनमें दोनों ओर दो-दो लकड़ियां लगी होती है। जिनके माध्यम से बैलों के गले में जुए को फंसाया जाता है। जुए के मध्य में खाँचा बना होता है, जिसमें नाड़े की सहायता से लाट जुए से जोड़ा जाता है।[25] (चित्र सं 02)

नाड़ा- चमड़े या रस्सी का बना मजबूत छोटा टुकड़ा होता है। जिसके माध्यम से हल को जुए के साथ जोड़ा आता है। नाड़ा को मजबूती देने के लिए तेल में भिगों कर रखा जाता है। पहले मुख्यत: नाड़ा पशुओं की खाल से तैयार किया जाता था।[26] परन्तु वर्तमान में अधिकांशत: जूट की रस्सी का बनाया जाता है। (चित्र सं 03)

मया (दन्याला)- दन्याला को मया भी कहा जाता है। यह लकड़ी के चतुष्कोणीय अथवा शटकोणीय टुकड़े का बना होता है। जिसमें लकड़ी या लोहे के लम्बे-लम्बे दांत लगे होते हैं। जो फसल की निराई-गुड़ाई के काम में आता है। इसको मनुष्य और बैलों दोनों की सहायता से खींचा जाता है। मनुष्य द्वारा खीचें जाने वाले मया में लकड़ी या लोहे के दांत लगे टुकड़े के बीच में एक 5-6 फीट लम्बी लकड़ी लगी होती है जिसे आगे खींचने वाला व्यक्ति पकड़ता है तथा दो रस्सियों को कन्धे में फंसाकर वह खींचता है।(चित्र सं. 4) पीछे माया में दो हत्थे लगे हुए होते है जिसे पीछे वाला व्यक्ति जमीन में दबाता है। जब मया में मिट्टी और पौधे फंसकर अटक जाते है तो पीछे वाला व्यक्ति उसे कुछ इंच उठाकर उसे झाड़ता है। इसी प्रकार मया को बैल भी खींचते हैं, जो हलनुमा आगे नाड़े की सहायता से जुए से जुड़ा होता है। दन्याला दो प्रकार का होता है।[27] -

उखड़ हेतु दन्याला- ऊखड़ जमीन हेतु प्रयोग किए जाने वाले दन्याला में लम्बे-लम्बे दांत होते है। जिसकी लम्बाई एक से छ: फीट होती है। इस दन्याले का प्रयोग धान और मण्डुवे की निराई-गुड़ाई हेतु किया जाता है।

रोपाई हेतु दन्याला- रोपाई हेतु प्रयुक्त दन्याला मया कहलाता है। इसका प्रयोग हल चलाने के बाद पानी युक्त खेत को समतल करके मिट्टी को महीन करने हेतु प्रयुक्त होता है।

कुदाल- इसमें लकड़ी के हत्थे के अग्र भाग में छिद्र होता है जिसमें लोहे का मुड़ा 6 इंच से 10 इंच लम्बा दांतनुमा लोहे का टुकड़ा लगा होता है। इसका आकार उपयोग के आधार पर छोटा-बड़ा हो सकता है। यह खेत खोदने, गुड़ाई करने तथा खर-पतवार हटाने के काम आता है। यह एक महत्वपूर्ण कृषि उपकरण है।[28] (चित्र सं. 5) शिव प्रसाद डबराल ने प्राग ऐतिहासिक काल में उत्तराखण्ड में कोल जाति द्वारा कुदाल तथा फावड़े के उपयोग की जानकारी दी है।[29] आज के दौर में लोहे के कुदाल का प्रयोग भी होने लगा है, जिसमें लकड़ी के हत्थे के स्थान पर लोहे का प्रयोग होता है तथा उसका अग्र भाग (दांत) को साथ जोड़ दिया जाता है।

दरांती- लकड़ी के हत्थे पर लोहे के धारदार ब्लेड को अर्द्धचंद्रकार आकार देकर लगाया जाता है, जो एक महत्वपूर्ण कृषि औजार है। इसका प्रयोग घास और अनाज को काटने के लिए होता है।(चित्र सं. 6) गढ़वाल में पुरोला की वेदिका से दरांती के अवशेष के संकेत प्राप्त होते है।[30] दरांतियों का आकार-प्रकार क्षेत्र और स्थान के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है।

पाटा (ज्वल)- हल द्वारा जुते हुए खेत को समतल करने हेतु पाटा का उपयोग होता है। इसमें लम्बे लठ्ठे को जुए से बांधा जाता है। कहीं-लठ्ठे के स्थान पर मोटे रस्से का उपयोग होता है।(चित्र सं. 7)

ढिकारा- खेत में हल चलाने के पश्चात् मोटे-मोटे मिट्टी के ढेले को महीन करने तथा तोड़ने के लिए लकड़ी के बड़े हथोड़ेनुमा उपकरण का प्रयोग किया जाता है। (चित्र सं. 8)

सियारा- इसे स्यूं-छप्पा भी कहा जाता है। बीज बोने के बाद उन्हें मिट्टी में दबाने हेतु बराबर हल रेखा (स्यूं) के ऊपर पाटा जाता है, जिससे बीज मिट्टी में अच्छी तरह दब जाते हैं।

इन कृषि उपकरणों के अतिरिक्त भी मध्य हिमालय में कृषि आधारित घरेलू जीवन से सम्बन्धित काष्ठ एवं प्रस्तर निर्मित उपकरण भी है-

सुप्पा (सूप)- सूप रिंगाल एवं बांस से बनाया जाता है। कृषि कार्य में सूप अनाज की सफाई और मापन तथा अनाज के आदान-प्रदान में प्रयुक्त होता है। ऋग्वैदिक काल भी सूप का उल्लेख फसल को कूटने के पश्चात् इसकी सहायता से भूसे को उड़ाकर अन्न से अलग करने का उल्लेख प्राप्त होता है।[31] (चित्र सं0 9) समय के साथ-साथ इसकी बनावट में भी परिवर्तन दृष्टिगत होता है, जहां यह पहले रिंगाल तथा बांस से बनाया जाता था परन्तु आज के दौर में टिन की चादर एवं प्लास्टिक से बने सूप को लोग ज्यादा प्राथमिकता दे रहें है क्योंकि रिंगाल से सुप्पा बनाने वाले कुशल कारीगरों की आज के समय में कमी है।

कोन्ना (कन्नू)- रिंगाल एवं बांस से निर्मित अनाज को भण्डारित करने हेतु उपयोग किया जाता है।[32] इसकी आकृति गोल होती है तथा इसका ढक्कन अलग से बनाया जाता है। इसमें धान, गेहूं, मंडुवा, चौलाई, झंगौरा आदि का भण्डार किया जाता है। (चित्र सं. 10) परन्तु वर्तमान में यह लुप्तप्राय: हो गये है क्योंकि इनको निर्मित करने वाले कारीगरों की कमी है तथा लोगों ने इनके स्थान पर प्लास्टिक की टंकियाँ और बर्तनों का उपयोग करना आरम्भ कर दिया है। ये सस्ते एवं टिकाऊ अधिक होते है।

डलिया (डल्लू)- यह अनाज को संग्रहित करने हेतु रिंगाल का बर्तन होता है, जो गोल आकार का होता है।(चित्र सं. 11) इसमें अनाज को संग्रहित किया जाता है। वर्तमान में

इसका स्थान प्लास्टिक के टब ने ले लिया है।

रूंगड़ा (रिंगाल को छलनी)- यह रिंगाल का बना हुआ कृषि उपकरण है। इसका उपयोग अनाज को छानने एवं भूसा को अनाज से अलग करने हेतु किया जाता है इसे छलनी या रूंगड़ा कहा जाता है।[33] (चित्र सं. 12) समय के साथ इसके भी आकार-प्रकार में परिवर्तन दृष्टिगत होता है। अब रिंगाल के स्थान पर टिन का रूंगड़ा प्रयोग होने लगा है।

जंदरा- यह अनाज पीसने हेतु एक प्रस्तर यंत्र है। मध्य हिमालय क्षेत्र में यह प्राचीन काल से प्रयोग होता आ रहा है। इसमें पत्थरों के दो पाट होते है। नीचे का पाट जमीन में स्थित होता है जबकि ऊपरी चक्के के बीच में अनाज डालने हेतु एक गोल छिद्र होता है तथा किनारे पर चक्के को घुमाने के लिए लकड़ी का हत्था लगा होता है।(चित्र सं. 13) लेकिन वर्तमान में जंदरे का प्रयोग बहुत कम हो गया है लेकिन आज के दौर में बिजली द्वारा चलित मशीनों का प्रयोग होने लगा है।

ओखली- यह भी एक प्रस्तर निर्मित कृषि उपकरण है। इसका प्रयोग मध्य हिमालय में अनाज कूटने हेतु लम्बे समय से प्रयोग किया जाता रहा है।(चित्र सं. 14) प्राचीन काल में धान, झंगौरा, मंडुवा (कौधा) आदि कूटने हेतु प्रयोग किया जाता रहा है। वर्तमान में इसका प्रयोग भी कम होने लगा है।

मूसल- यह एक काष्ठ निर्मित उपकरण है, जिनकी सहायता से ओखली में अनाज को कूटा जाता है। यह एक बेलनाकार होता है। इसकी लम्बाई भिन्न-भिन्न होती है। कुछ छोटे आकार के जिनकी लम्बाई 3-4 फीट तथा कुछ बड़े आकार के जिनकी लम्बाई 5-6 फीट तक होती है।(चित्र सं. 15) इसके मध्य भाग को थोड़ा पतला कर दिया जाता है। जिससे इसे पकड़ने में आसानी होती है। गढ़वाल में इसे गंजल्या कहा जाता है।

सिलबट्टा- यह एक प्रस्तर उपकरण है, जिसका प्रयोग अनाज तथा मसाले को पीसने हेतु किया जाता है।(चित्र सं. 16) मध्य हिमालय में प्राचीन काल से ही इसका प्रयोग किया जाता रहा है। सिलबट्टा, बेसाल्ट, क्वार्ट्ज, ग्रेनाइट, सिल्ट आदि के बने होते हे। जिन्हें स्थानीय शिल्पियों द्वारा बनाया जाता है।

घराट - मध्य हिमालय में यह अनाज पीसने का एक यंत्र है जिसे पानी की सहायता से चलाया जाता है। पानी को लकड़ी के पन्याल की सहायता से घराट में पंखों पर गिराया जाता है। इन पंखों को स्थानीय भाषा में फिरकू (भ्यरण) कहा जाता है। जितना तेज पानी का वेग होगा उतना ही तेज फिरकू घूमता है। इसमें अनाज पीसने हेतु चक्के के दो पाट होते है। ऊपरी चक्के (पाट) पर अनाज डालने हेतु एक छेद बना होता है। पाटों के आपसी घर्षण के अनाज पिसकर घट की परिधि से बाहर हो जाता है।(चित्र सं. 17) वर्तमान समय में इनका प्रयोग दूर-दराज के क्षेत्रों में ही सीमित हो गया है। डीजल तथा विद्युत निर्मित चक्कियों के निर्माण से ये लुप्तप्राय: हो गयी है।

मोस्ठा- यह रिंगाल से बना एक वर्गाकार का चटाई होती है, जो अनाज को सुखाने, धान की मंडाई करने हेतु उपयोग में लाया जाता है।(चित्र सं. 18) यह घर की छत पर बिछाने हेतु भी प्रयुक्त होता है। उपयोग हो जाने के उपरान्त इसे गोल बेलनाकार आकार में लपेटकर रखा जाता है। इसको लम्बे समय तक सुरक्षित रखने हेतु स्थानीय लोग इस पर गौमूत्र का छिड़काव भी करते हैं।

भकार/कोठार- प्राचीन समय में अनाज को संग्रहित करने हेतु छोटे-बड़े पात्रों का उल्लेख प्राप्त होता है। मध्य हिमालय क्षेत्र में अनाजों के संग्रह हेतु लकड़ी के बने हुए बड़े-बड़े कोठारों का उपयोग प्राचीन समय से किया जाता रहा है। सामान्यत: ये कोठार आयताकार होते है। ये तुन, साल, आदि इमारती लकड़ी से बनाया जाता है। इन पात्रों में महीनों तक अनाज सुरक्षित रहता है। (चित्र सं. 19)

कृषि प्राचीन काल से ही मानव जीवन का अभिन्न अंग रहा है। मनुष्य अपने भरण-पोषण हेतु कृषि पर निर्भर रहा है। देश स्वतंत्रता के पश्चात् भी कई दशकों तक भारत कृषि प्रधान देश रहा है। मध्य हिमालय क्षेत्र में भी कृषि मानव जीवन का प्रमुख हिस्सा रहा है। प्राचीन समय से जिस कृषि पद्धति तथा तकनीकी का प्रयोग मनुष्य करता आ रहा था उसमें समय के साथ कुछ परिवर्तनों के साथ आज भी निरन्तरता बनी हुई है। इन कृषि पद्धतियों एवं तकनीकियों के साथ-साथ कृषि से सम्बन्धित उपकरणों का उपयोग यहाँ के निवासी पुरातन काल से ही करते आ रहे हैं। समय के साथ-साथ इनके आकार तथा प्रकार में कुछ परिवर्तन दृष्टिगत होते हैं, वहीं कुछ उपकरण आज के समय में लुप्तप्राय: हो गये है तथा कुछ का स्थान नए उपकरणों ने ले लिया है।

परिशिष्ट-

(चित्र सं. 1)

(चित्र सं. 2)

(चित्र सं. 3)

(चित्र सं. 4)

(चित्र सं. 5)

(चित्र सं. 6)

(चित्र सं. 7)

(चित्र सं. 8)

(चित्र सं. 9)

(चित्र सं. 10)

(चित्र सं. 11)

(चित्र सं. 12)

(चित्र सं0 13)

(चित्र सं. 14)

(चित्र सं. 15)

(चित्र सं. 16)

((चित्र सं. 17)

(चित्र सं. 18)

(चित्र सं. 19)

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. हरारी, युवाल नोआ, (अनु. मदन सोनी), 2019, सेपियन्स मानव-जाति का संक्षिप्त इतिहास, मंजुल प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 89
2. सिंह, उपिन्दर, 2017, प्राचीन एवं पूर्व मध्यकालीन भारत का इतिहास (पाषाण काल से 12 वीं शताब्दी तक, प्रियर्सन इंडिया एजुकेशन सर्विसेज प्रा. लि., नई दिल्ली, पृ. 96
3. झा, द्विजेन्द्र नारायण, कृष्ण मोहन श्रीमाली, 2009, प्राचीन, भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृ. 81
4. श्रीवास्तव, शिप्रा, 2010, कृषि व्यवस्था के विकास में प्रमुख चरण, (आरम्भ से मौर्य युग तक) सम्पादित राजवन्त राव, दिग्विजय नाथ, प्रज्ञा चतुर्वेदी, ओमजी उपाध्याय, भारत में कृषि एवं कृषक समुदाय, ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, प्रतिभा, प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 191
5. ओम प्रकाश, 2001, प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, विश्व प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 16
6. शर्मा, रामशरण, 2010, प्रारम्भिक भारत का परिचय, ओरियंट ब्लैकस्वान प्रा. लि., नई दिल्ली, पृ. 96
7. सहाय, शिव स्वरूप, 2019, प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, पृ. 327
8. डबराल, शिवप्रसाद, 1998, प्रागैतिहासिक उत्तराखण्ड, वीरगाथा प्रकाशन, दोगड्डा, पृ. 135
9. नौटियाल, वी., वाई.एस.फर्स्वाण, ए.के. उनियाल, 1998, स्टेविल कार्बन आइसोटोप, एनालिसिस ऑफ आर्कियोलॉजिकल-बोन फ्रॉम गढ़वाल हिमालय, पृ. 139-140
10. त्रिपाठी, किरण, 2006, उत्तराखण्ड का ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक भूगोल, ज्ञानोदय प्रकाशन, नैनीताल, पृ. 246
11. वही, पृ. 248
12. नेगी, विद्याधर सिंह, 2011, कुमाऊँ का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, मल्लिका बुक्स, दिल्ली, पृ. 178
13. त्रिपाठी, किरण, 2006, पूर्वोक्त, पृ. 248
14. नेगी, विद्याधर सिंह, 2011, पूर्वोक्त, पृ. 178
15. वही, पृ. 176-179
16. सिंह, हितेन्द्र, (अप्रकाशित शोध ग्रंथ), 2016, उच्चवर्ती क्षेत्रों में कृषि पद्धतियों का नृपुरातात्विक अध्ययन, मध्य हिमालय में परिप्रेक्ष में, हे.न.ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल, पृ. 61-65
17. बिष्ट, नारायण सिंह, 2009, कृषि पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी नियोजन, नारायण संस्थान, शोध नियोजन एवं विकास, गोपेश्वर चमोली, पृ. 25
18. साक्षात्कार, प्रेम सिंह रावत, उम्र-75 वर्ष, सेवानिवृत्त कर्मचारी, ग्राम, त्रियुगीनारायण, जनपद रूद्रप्रयाग, दिनांक, 28 मार्च 2017
19. साक्षात्कार, अमर सिंह धर्म्वाण, उम्र-80 वर्ष, कृषक, ग्राम, मंगोली, जनपद रूद्रप्रयाग, दिनांक, 28 मार्च 2017
20. बिष्ट नारायण, सिंह, 2009, पूर्वोक्त, पृ. 145
21. श्रीवास्तव, कृष्ण चन्द, 2008-09, प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति, यूनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद, पृ. 51
22. सिंह, हितेन्द्र, 2016, पूर्वोक्त, पृ. 71
23. रावत, शिवचन्द्र सिंह, 2011, गढ़वाल की अर्थव्यवस्था एवं आर्थिक संस्थाओं के विकास का इतिहास, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 26

24. शर्मा, प्रतिभा, (अप्रकाशित शोध ग्रंथ), 2002, उत्तराखण्ड के लोकयंत्रों एवं लोकतकनीकी का सांस्कृतिक ऐतिहासिक अध्ययन, कुमांऊ वि. वि., नैनीताल, पृ. 103
25. पंवार, भगत सिंह, 2007, उत्तराखण्ड संग्रहालय दर्शन, ओमेगा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ. 222
26. सिंह, राम 1999, कुमाऊँ के काष्ठ निर्मित कृषि यंत्रों की शब्दावली, अध्ययन एवं विश्लेशण, (सम्पादित पी.सी. पाण्डेय, डी.एस. पोखरियाल, जे.सी. भट्ट) कुमाऊँ हिमालय का लोक वनस्पति विज्ञान, साइन्टिफिक पब्लिशर्स, जोधपुर, इण्डिया, पृ. 286
27. रावत, शिवचन्द सिंह, 2011, पूर्वोक्त, पृ. 27
28. बिष्ट नारायण, सिंह, 2009, पूर्वोक्त, पृ. 145
29. डबराल, शिवप्रसाद, 1998, पूर्वोक्त, पृ. 35
30. श्रोतिया, सविता, (अप्रकाशित शोध ग्रंथ), 2006, गढ़वाल की लोक संस्कृति का नृवंशीय ऐतिहासिक अध्ययन, भागीरथी, यमुना, टोंस घाटियों के विशेष सन्दर्भ में, हे.न.ब.ग. विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल
31. श्रीवास्तव, हरिगोपाल, 2010, ऋग्वेदिक काल में कृषि कर्म सम्पादित, राजवंत राव, दिग्विजयनाथ, प्रज्ञा चतुर्वेदी ओम जी, भारत में कृषि एवं कृषक समुदाय, ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 106
32. पंवार, भगत सिंह, 2007, पूर्वोक्त, पृ.217
33. वही, ृ. 216

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

विवेकानन्द का नव्य वेदांतः एक समावेशी चिंतन

• वीणा रानी

सारांश- स्वामी विवेकानन्द एक चिंतक, आध्यात्मिक नेता एवं दार्शनिक थे, जिन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर भारत का प्रतिनिधित्व किया। उनकी शिक्षाएँ एवं मूल्यवान विचार भारत की सबसे बड़ी दार्शनिक सम्पत्ति है। आधुनिक युग में स्वामी विवेकानंद वेदान्त के एक महान विचारक के रूप में जाने जाते हैं। वे वेदान्त के आधार पर एक ऐसा दर्शन विकसित करना चाहते थे, जो समस्त संधर्षो को दूर करके मानव जाति को बहुमुखी सम्पूर्णता के शिखर पर पहुँचा सके। भारतीय दर्शन का विकास मूल रूप से तीन दार्शनिक सम्प्रदायों में अवस्थित है- द्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद एवं अद्वैतवाद। भारत में यद्यपि द्वैतवाद और विशिष्टाद्वैतवाद अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुके थे किन्तु अद्वैतवाद को जीवन में व्यवहारिक रूप देना अत्यंत कठिन प्रतीत होता था। विवेकानंद ने इस सत्य का अनुभव किया कि युग को अद्वैतवाद के पूर्ण विकास की आवश्यकता है । उन्होंने अद्वैत वेदांत को तर्क, अनुभव, विज्ञान और आधुनिकता से सुसंगत करने का प्रयत्न किया तथा अपनी तत्वमीमांसा के अनुकूल नैतिक व सामाजिक सिद्धांतो का विस्तार किया। इस प्रकार उन्होंने एक नवीन हिन्दु विश्व-दृष्टि का निर्माण किया। विवेकानंद ने अमूर्त अद्वैत को मानवता के जीवित संदेश के रूप में प्रतिष्ठित किया तथा सभी मनुष्यों को समान दृष्टि से देखने का भाव विकसित किया। इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द के नव्य वेदांत में प्रतिष्ठित नीति-तत्व ही ऐसा व्यवहारिक नैतिक सिद्धांत है जो आज के भूमंडलीकरण के युग में विश्वबंधुत्व की सार्थक व्याख्या करते हुए मानव-मात्र की एकता कायम रखने में सक्षम हो सकता है। इसमें विश्वबंधुत्व की भावना के साथ "सर्वे भवन्तु सुखिनः" की कामना भी निहित है।

मुख्य शब्द- दार्शनिक सम्पत्ति, वेदान्त, बहुमुखी सम्पूर्णता, द्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद

आधुनिक युग में वेदान्त केसरी स्वामी विवेकानंद ने शंकराचार्य के अद्वैत दर्शन की व्यावहारिक व्याख्या प्रस्तुत की है। वेदांत की यह चिन्तनधारा समय-समय पर प्राप्त किन्चित परिवर्त्तनों के उपरान्त भी आज तक अपने आत्मतत्व को पुर्णतः सुरक्षित रखे हुए है। सदियों से अद्वैत-चिन्तन के मन्थन का काम चलता आ रहा है। इस प्रकार के चिन्तन एवं मन्थन से अद्वैत वेदान्त विश्व में अधिक प्रतिष्ठित हुआ। अद्वैत वेदान्त के नवीन चिन्तन, मनन् एवं निदिध्यासन से एक नई दृष्टि का विकास हुआ। इस नवीन चिन्तन में जो नवीन दृष्टि विकसित हुई, वह आज नवीन शब्दावली की दृष्टि से एक नया नाम ग्रहण कर रही है और वह नया नाम है 'नव्य वेदान्त'। स्वामी विवेकानंद वेदान्त को सर्वोच्च दर्शन एवं धर्म के रूप में स्वीकार करते हैं। उन्होंने व्यावहारिक रूप में वेदांत को हिन्दुओं का धर्म ग्रन्थ स्वीकार किया है। उनका कहना है कि भारत में सम्प्रति जितने दार्शनिक सम्प्रदाय हैं, वे सभी वेदांत दर्शन के अन्तर्गत आते हैं। वेदांत परम्परा के प्रमुख

• एसोसिएट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग, दर्शन साह महाविद्यालय, कटिहार

अद्वैतवादी दार्शनिक शंकराचार्य ने अपने दर्शन में ज्ञान पक्ष को अधिक महत्व दिया है, इसके फलस्वरूप सामान्य लोगों में यह धारणा विकसित हो गई है कि वेदांत एक जटिल अथवा रहस्यपूर्ण विषय है, जो साधारण मानवीय बुद्धि से अगम्य है और जिसका हमारे प्रत्यक्ष जीवन से कोई सम्बंध नहीं है। समाज में इस प्रकार के व्याप्त धारणा के निवारण हेतु विवेकानंद ने वेदांत की नवीन, परिष्कृत एवं आशावादी व्याख्या प्रस्तुत करने की आवश्यकता को महसूस किया। इसलिए उन्होंने वेदांत के आदर्शवादी पक्ष को व्यवहारिक रूप दिया तथा वेदांत दर्शन को व्यावहारिक वेदांत के रूप में प्रस्तुत किया। उन्होंने वेदांत को पंडितों के शास्त्रार्थ का विषय ही नहीं माना, अपितु उसे प्रतिदिन के पारिवारिक और सामाजिक जीवन की कुंजी सिद्ध किया। उनकी दृष्टि में वेदांत व्यक्तित्व के उत्थान एवं विकास तथा समाज के निर्माण एवं राष्ट्र के समन्वय का शास्त्र है। उनका समन्वयवादी तथा व्यावहारिक विचार ही वेदांत को एक नया आयाम देता है। यही संदेश विवेकानंद का 'नव्य वेदांत' कहा जा सकता है । वेदांत के तीन रूप हैं – द्वैत, विशिष्टाद्वैत और अद्वैत। स्वामी जी अद्वैत के सर्मथक थे। उनके अनुसार द्वैत, विशिष्टाद्वैत और अद्वैत, इनमें कोई अन्तर नहीं है, ये तीनों वेदांत दर्शन के तीन सोपान हैं, जिनका अंतिम लक्ष्य अद्वैत की अनुभूति ही है। इन्होंने वेदांत को आधुनिक परिप्रेक्ष में देखने – समझने और वैज्ञानिक व्याख्या करने का प्रयास किया है। यहीं उनके अद्वैत वेदांत का नयापन है और इसी के आधार पर इनके दार्शनिक चिंतन को 'नव्य वेदांत' कहा जाता है।

विवेकानन्द की व्यावहारिक वेदांत की तत्वमीमांसा न तो पूर्णत: यथार्थवादी है और न ही विज्ञानवादी। इसमें यथार्थवाद और विज्ञानवाद का समन्वय किया गया है। इसीलिए विवेकानंद के वेदांत को पूर्ण अद्वैतवादी वेदांत की संज्ञा से अभिहित किया जाता है । व्यष्टि में समष्टि समाहित है –"यत् पिंडे तत् ब्रह्मंडे" स्वामी जी मानते हैं कि हम अपने दैनिक जीवन में पूजा–पाठ, आराधना, ध्यान से भी ब्रह्मनुभूति कर सकते हैं। इसलिए उनकी तत्वमीमांसा मात्र तर्क का विषय न होकर व्यवहार का विषय है। इसलिए इसे व्यावहारिक वेदांत की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। यह व्यावहारिक वेदांत विज्ञान–सम्मत एवं बुद्धि प्रधान है, अर्थात यह पूर्णत: वैज्ञानिक है। विवेकानंद का अद्वैत दर्शन उनके पूर्ववर्तियों के अद्वैत दर्शन से अंशत: भिन्न और अंशत: विशिष्ट है। उनके अद्वैतवादी तत्वमीमांसा में मूर्त एवं अमूर्त का, ज्ञेय और ज्ञाता का, विषय और विषयी का, व्यावहारिक सत् एवं पारमार्थित सत् का संयोग एवं समन्वय किया गया है। विवेकानन्द शंकर के दर्शन को जीवन जगत् की सबसे संतोषजनक व्याख्या मानते थे। इसलिए उन्होंने अद्वैत वेदान्त को ही नव्य वेदांत का आधार बनाया। उनके अनुसार अद्वैत वेदान्त उन मौलिक सिद्धांतों के अनुरूप है, जिस पर किसी सच्चे दर्शन को आधारित होना चाहिए। अद्वैत वेदांत का सार है कि "ब्रहम ही सत्य है, जगत् मिथ्या है और जीव एवं ब्रहम में भेद नहीं है।" विवेकानन्द इसे स्वीकार करते हैं और इसकी नई वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। अद्वैत वेदांत की पांरपरिक व्याख्या के विपरीत वे बताते हैं कि यह सिद्धांत बंजर एकता की बजाय "अनेकता में एकता" का है और यहॉ जगत् को सर्वथा अस्वीकार नहीं किया गया है।

विवेकानन्द मानते हैं कि वेदांत सभी सत्ताओं को सत्य मानता है, लेकिन उनमें अभिव्यक्ति की मात्रा भिन्न–भिन्न है। वे प्राणीविज्ञान के विकास सिद्धांत का उल्लेख

करते हुए कहते हैं कि यह सत्य है कि अमीबा विकसित होकर बुद्ध बनता है। जीवन विकसित होता हुआ क्रमशः उच्च से उच्चतर स्तर तक उठता जाता है। लेकिन विज्ञान हमें यह भी बताता है कि ब्रम्हांड में उर्जा का कुल जोड़ हमेशा समान रहा है (उर्जा संरक्षण का सिद्धांत)। इसलिए यदि बुद्ध परिवर्त्तन की प्रक्रिया का एक छोर है, तो दूसरी छोर पर अमीबा भी कुछ रहा होगा। संभावना के रूप में सूक्ष्म से सूक्ष्म जीव से लेकर साधु-महात्मा तक सबों में यह असीम शक्ति, असीम निर्मलता और सब कुछ असीम विद्यमान है। अंतर केवल अभिव्यक्ति की मात्रा का है। सूक्ष्म जीव में उस असीम के छोटे से अंश की अभिव्यक्ति है, मनुष्य में उससे अधिक और ईश्वर में सबसे अधिक। यहाॅ प्रश्न उठता है कि यदि अद्वैत वेदान्त सभी सत्ताओं को किसी-न-किसी रूप में सत्य मानता है तो जगत् को मिथ्या/माया क्यों कहा गया है? विवेकानन्द के अनुसार माया जीवन जगत् की सापेक्षिक सत्यता का सूचक है। इसका तात्पर्य यह है कि ब्रहम परम सत्य है, क्योंकि वह त्रिकाल बाधित नहीं है। जगत् स्वतंत्र रूप से सत्य नहीं है, यह ब्रहम पर आधारित होने के कारण ही सत्य है। वास्तव में, जगत् सत्य एवं मिथ्या, यथार्थ एवं अयथार्थ का अपरिभाष्य मिश्रण है। जगत् शुद्ध भ्रम नहीं हैं, बल्कि अन्तर्विरोधों से भरा है, इसके विपरीत ब्रहम में कोई अन्तर्विरोध नहीं है।

स्वामी विवेकानंद एक ऐसे महापुरूष थे, जिन्होंने मानव धर्म को एक नई व्यवस्था देकर धर्म के प्रति एक तार्किक दृष्टिकोण का प्रतिपादन किया। उनके नव्य वेदांती दृष्टिकोण ने पलायनवादी मार्ग को छोड़ कर कर्मवादी मार्ग को अपनाया। अद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद, द्वैतवाद आदि वेदांत के विभिन्न सम्प्रदायों एवं भारतीय दर्शनों में जो विरोध चला आ रहा है, स्वामी विवेकानंद ने उनमें समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया। सभी धर्मो में समन्वय स्थापित करते हुए स्वामी जी कहते हैं, " विश्व के सभी धर्म मूलतः एक हैं। " सभी वेदांती तीन बातों में एक मत प्रतीत होते हैं। तीनों मत ईश्वर में विश्वास करते हैं, वेद में आस्था रखते हैं और सृष्टि चक्र को स्वीकार करते हैं। अद्वैतवाद के अनुसार परमतत्व एक है, यह अद्वैत तत्व उपनिषद की भाषा में ब्रम्ह है। ब्रम्ह के सम्बन्ध में स्वामी जी कहते हैं, "यह हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि भक्त का उपास्य सगुण ईश्वर ब्रम्ह से भिन्न नहीं है। सबकुछ वही एकमेव अद्वितीय ब्रम्हा है। निर्गुण निरपेक्ष स्वरूप अत्यंत सूक्ष्म होने के कारण उपासना एवं प्रेम के योग्य नहीं है। इसलिए भक्त ब्रम्हा के सगुण भाव को ही उपास्य के रूप में स्वीकार करते हैं।" अद्वैत वेदांती होते हुए भी विवेकानंद निर्गुण और सगुण रूप ब्रम्हा में भेद स्वीकार करते हैं। यह स्वरूप भेद निर्गुण और सगुण का समन्वय है जो स्वामी जी की विशेषता है। परन्तु विवेकानन्द निर्गुण और सगुण में तात्विक अन्तर नहीं मानते हैं। उनके अनुसार परमतत्व अद्वैत ब्रम्ह है जो अनिवर्चनीय है। अद्वैतवादियों के अनुसार परमतत्व अविर्चनीय है, का अर्थ है कि परमतत्व बुद्धि के सभी विकल्पों से भिन्न है। विवेकानंद कहते हैं परमतत्व अप्रमेय अवश्य है परन्तु अज्ञेय नहीं है।

विवेकानंद मानते हैं कि ईश्वर सर्वव्यापी है। वे ईश्वर को सत्य, ज्ञान एवं अनन्त मानते हैं। वे कहते हैं कि मनुष्य में ईश्वरीय गुण विद्यमान है। ईश्वर में जो गुण पाए जाते हैं मनुष्य में भी वे गुण पाए जाते है, भले ही उसमें मात्रा का अन्तर हो सकता है। उन्हीं के

शब्दों में "मनुष्य ही परमात्मा का सर्वोच्च एवं साक्षात मंदिर है, इसलिए इस साकार देवता की ही पूजा की जानी चाहिए। ईश्वर की प्राप्ति खुद ही हो जाएगी। चरित्र का निर्माण परमावश्यक है।" पुन: वे कहते हैं "जिसे हम प्रेम और सहानुभूति कहते हैं, वह एकत्व की अभिव्यक्ति है और यही हमारी नैतिकता तथा सदाचार का आधार है। यही वेदांत सूत्र 'तत्वमसि' का मूल मंत्र है।" विवेकानंद वेदांत को शिक्षाओं से परिपूर्ण मानते हैं। वे मनुष्य को ज्ञान एवं विज्ञान के साथ सदाचार की भी शिक्षा देना चाहते हैं। वे बलपूर्वक कहते हैं कि वेदांत का आचरण सहज रूप में मनुष्य को चिंताओं से, विषादों से, निराशाओं से एवं तनावों से मुक्त कर देता है।

विवेकानंद वास्तव में नव्य वेदांती हैं जिन्होंने वेदांत दर्शन के मूल सिद्धांतों को स्वीकार करते हुए उनकी नई व्याख्या प्रस्तुत की है। शंकराचार्य जगत् की व्यावहारिक सत्ता स्वीकार करते हैं, "ब्रम्ह सत्य जगन्न मिथ्या जीवों ब्रहमैव नापर:।" विवेकानंद कहते हैं कि "एक ही सत्य में एक से अधिक वस्तुओं का अस्तित्व नहीं रह सकता है।" शंकराचार्य ने माया को अनिवर्चनीय कहा है। विवेकानंद ने भी माया को अनिवर्चनीय माना है। साथ ही वे जीव को कर्त्ता स्वीकार करते हैं। यदि जीव सुखी तथा दु:खी है तो यह उनके कर्म के कारण है। जीव ही कार्य है और जीव ही कारण है। स्वामी विवेकानंद के मोक्ष विचार में भी अद्वैत वेदांत की झलक मिलती है। शंकर ब्रम्ह को ही मोक्ष प्राप्ति का साधन मानते हैं। वे कहते हैं मोक्ष प्राप्ति के लिए साधक को साधन-चतुष्टय की आवश्यकता होती है तथा उसे श्रवण, मनन् तथा निदिध्यासन को अपनाना पड़ता है। तत्पश्चात् उसे 'तत्वमसि' का आभास होता है और वह कह उठता है 'अहं ब्रहमास्मि'। विवेकानंद भी अपने दर्शन में मोक्ष प्राप्ति के लिए ज्ञान को ही साधन मानते हैं।

विवेकानंद के चिंतन का आधार वेदान्त है। वे कहते हैं वेदांत दर्शन के ज्ञान गर्भ से जो प्रकाश निकलता है, वह दिव्य प्रकाश है, जिसमें ज्ञान, कर्म और भक्ति समाहित है। वेदांत दर्शन पर आधारित धर्म विश्व धर्म हो सकता है क्योंकि यह अद्वैत के सिद्धांत पर खड़ा है, इसका किसी धर्म से विरोध नहीं है, यह सभी धर्मो का आदर करता है। अर्थात सभी धर्मो का सार वेदांत में है। स्वामी जी कहते हैं कि, एक मात्र परमात्मा की अनुभूति से ही सारी विषमताएँ दूर हो सकती है। इसी कारण गीता में श्री कृष्ण ने कहा है :-

"सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज ।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच: ।।"

इस प्रकार विवेकानन्द का वेदान्त व्यावाहारिक सत्य में विश्वास करता है। उनका मानना है कि "सिद्धांत बिल्कुल ठीक होने पर भी उसे कार्य रूप में परिणत करना कठिन होता है। यदि उसे कार्य रूप में परिणत किया जा सकता तो उसका बौद्धिक व्यायाम के अतिरिक्त कुछ मूल्य नहीं"। अतएव वेदांत को धर्म के स्थान पर आरूढ़ होने के लिए व्यावहारिक होना होगा तथा अपने जीवन की सभी अवस्थाओं में उसे कार्य रूप में परिणत करना होगा। केवल इतना ही नही अपितु आध्यात्मिक जीवन के बीच जो काल्पनिक भेद है, उसे भी मिटाना होगा, क्योंकि वेदांत एक अखंड वस्तु के सम्बंध में उपदेश देता है। वेदांत के अनुसार एक ही आत्मा सर्वत्र विद्यमान है। विवेकानन्द के अनुसार अद्वैत वेदांत की निम्न विशेषताएँ है –

1. तर्कसंगत- अद्वैत वेदांत तर्क की कसौटी पर खड़ा उतरता है। यह सामान्य के माध्यम से विशेष की व्याख्या करता है और मानता है कि किसी भी पदार्थ की व्याख्या बाहर से नहीं, भीतर से होनी चाहिए।

2. मौलिकता- अद्वैत वेदांत मौलिक रूप से निरन्तर आबद्ध दर्शन है। इसकी जड़े उपनिषदों के महान विचार में है। यह विचार विराट सुसंगति, सबकी एकता और आत्मा की अमरता में विश्वास करता है।

3. सार्वभौमिकता- वेदांत के विचार शाश्वत हैं, जो अन्य व्यक्तियों अथवा अवतारों के सहारे के बिना स्वयं अपनी नींव पर खड़े हैं। केवल वेदांत को ही सार्वभौमिक धर्म माना जा सकता है, क्योंकि यह सिद्धांतों का प्रतिपादन करता है, व्यक्तियों का नहीं।

4. एकता- वेदांत की प्रामाणिकता मानव के चिरंतन स्वभाव में है। इनकी नैतिकता मनुष्य की आध्यात्मिक एकता पर आधारित है। विवेकानन्द के शब्दों में, "मूलत: मनुष्य-मनुष्य में कोई भेंद नहीं है, सभी समान रूपेण दिब्य हैं। यह ऐसा ही है, जैसे पीछे एक अनन्त समुद्र है और उस अनन्त समुद्र में हम एवं तुम लोग इतनी सारी लहरें हैं और हममें से हर एक उस अनंत को बाहर व्यक्त करने के निमित्त प्रयत्नशील है।"

5. वैज्ञानिकता- विवेकानन्द ने वेदान्त को वैज्ञानिकता की कसौटी पर कसने का प्रयास किया है। उन्होंने वेदान्त को वैज्ञानिक रूपकों के द्वारा समझाने की कोशिश की है। उनके अनुसार धर्म भी एक विज्ञान है। जिस तरह प्राकृतिक विज्ञान भौतिक जगत् के नियमों का अनुसंधान करता है, उसी प्रकार धर्म नैतिक एवं तत्वमीमांसीय जगत् के सत्यों से संबद्ध है। धर्म मनुष्य के आन्तरिक स्वभाव के भव्य नियमों की खोज करता है। विज्ञान एवं धर्म, दोनों ही एकता हेतु खोजरत है और दोनों ही अपनी-अपनी दिशाओं में मनुष्य एवं मनुष्यता की मुक्ति हेतु प्रयास करते हैं। एक अर्थ में, समस्त ज्ञान ही धर्म है और दूसरे अर्थ में समस्त ज्ञान ही विज्ञान है।

6. उपयोगिता- वेदांत महज एक कोरा आदर्शवादी बौद्धिक सिद्धांत मात्र नहीं, वरन् एक जीवन्त कर्म-दर्शन है। यही वेदान्त की सर्वप्रमुख विशेषता है, और इसी के आधार पर यह एक धर्म के रूप में प्रतिष्ठित हो सकता है।

7. लोकधार्मिता- विवेकानन्द ने वेदान्त के लोकधर्मी आदर्शों एवं व्यवहारों को आगे बढ़ाने की कोशिश की तथा आम जनता को दु:ख-दारिद्रय से मुक्ति दिलाने हेतु निरंतर संधर्ष किया है। उनके अनुसार, "जो जाति रोटी को तड़प रही है, उसके हाथ में दर्शन एवं धर्म ग्रन्थ परोसना उसका मजाक उड़ाना है।" इसलिए उन्होंने 'पहले रोटी फिर धर्म की' इस तथ्य की वकालत की। उन्होंने व्यक्तिगत मुक्ति के बजाय सर्वमुक्ति पर जोर दिया और ईश्वर को भी लोकधर्मी स्वरूप में ही स्वीकार करने की पहल की। इस क्रम में उन्होंने यहाँ तक कहा, "मैं ऐसे ईश्वर में विश्वास नहीं करता, जो स्वर्ग में तो मुझे अनंत आनन्द देगा, पर इस जगत् में मुझे रोटी भी नहीं दे सकता है।"

विवेकानन्द मानते हैं कि जगत् के दोनों पक्ष हैं - माया और यथार्थ, वासना और विवेक। हमें माया के बीच से रास्ता निकालकर माया के परे तक पहुँचना है। संसार माया है, ऐसा कहकर कर्म और संधर्ष छोड़ देने से हम अपना कर्त्तव्य पूरा नहीं कर सकते। इस प्रकार विवेकानन्द ने नव्य वेदांत के माध्यम से बताया है कि अद्वैत वेदान्त एक शुष्क

तत्वमीमांसीय सिद्धांत नहीं, वरन् एक सरलतम जीवन दर्शन है, जिसे सामान्य व्यक्ति भी अपना सकते हैं।

विवेकानंद ने अपने नव्य वेदांत के माध्यम से आध्यात्मिक, सामाजिक विचारों को प्रत्येक जनसमुदाय के लिए एक आदर्श प्रस्तुत किया है। स्वामी जी ने यह भलीभाँति दर्शाया है कि व्यक्तिगत और सामाजिक हित दोनों के लिए वेदांत कितना उपयोगी है। इनके विचार में वेदांत द्वारा प्रतिपादित सत्य- सिद्धांत एकांगी नही वरन् सार्वजनिक है और साथ ही वे शाश्वत मूल्य रखते हैं। फलत: वे सभी व्यक्तियों को चाहे वे किसी भी जाति , सम्प्रदाय अथवा राष्ट्र के और किसी भी युग के रहने वाले क्यों न हो आदर्श जीवन निर्माण में अपूर्व सहायता प्रदान करते हैं। विवेकानंद वेदांत पर अधिक जोर देते हुए कहते हैं कि वेदांत का सारतत्व 'एकता' है। एकता के आधार पर ही 'आत्मवत सर्वभूतेशु या वसुधैव कुटुम्बकम' जैसे आदर्शों की स्थापना हो सकती है। विवेकानंद का नव्य वेदांत दर्शन वर्तमान संदर्भ में भी प्रासंगिक है। आज आवश्यकता है, स्वामी जी द्वारा दिए गए विचारों को आत्मसात् करने की ताकि राष्ट्र का विकास एवं मानवता का कल्याण हो सके। इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द के नव्य वेदांत में प्रतिष्ठित नीति-तत्व ही ऐसा व्यावहारिक नैतिक सिद्धांत है जो आज के भूमंडलीकरण के युग में विश्वबंधुत्व की सार्थक व्याख्या करते हुए मानव-मात्र की एकता कायम रखने में सक्षम हो सकता है। इसमें विश्वबंधुत्व की भावना के साथ 'सर्वे भवन्तु सुखिन:' की कामना भी निहित है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. नरवणे विश्वनाथ, आधुनिक भारतीय चिंतन, पृ.-106
2. स्वामी विवेकानन्द का भारतीय व्याख्या- सर्वांग वेदांत, पृ.-281
3. व्यवहारिक जीवन में वेदांत, प्रथम भाग
4. स्वामी विवेकानन्द साहित्य, नवम् खण्ड, पृ.-117-118
5. भगवान बुद्ध तथा उनका संदेश, पृ.-33
6. स्वामी विवेकानन्द भक्ति योग, पृ.-22
7. Vedanta voice of freedom, Page-98-99
8. शर्मा, डॉ. आर. ए., तत्वमीमांसा, ज्ञानमीमांसा, मूल्यमीमांसा एवं शिक्षा, सूर्या पब्लिकेशन, मेरठ, 2010

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

राष्ट्रकवि गिरिजाकुमार माथुर के साहित्य में राष्ट्र-प्रेम

• रंजन शर्मा

सारांश- गिरिजा कुमार माथुर का जन्म मध्यप्रदेश के अशोक नगर कस्बे में हुआ। एम.ए., एल.एल.बी. तक शिक्षा प्राप्त करने के बाद उन्होंने वकालत की और दिल्ली में आकाशवाणी में काम किया। कविता के अतिरिक्त वे एकांकी नाटक, आलोचना, गीति-काव्य तथा शास्त्रीय विषयों पर भी लिखते रहे हैं। मंदार, मंजीर, नाश और निर्माण, धूप के धान, शिलापंख चमकीले आदि काव्य-संग्रह तथा खंड काव्य में पृथ्वीकल्प प्रकाशित हुआ। माथुर जी के विचारों में और साहित्य में एक विचारधारा के भी दर्शन होते हैं। मानवीय समाज और राष्ट्र चिंतन को लेकर उनके साहित्य में गहराई से उतरने पर बहुत कुछ समझने को मिलता है। साहित्यकार के साहित्य को प्रायः किसी विचारधारा से अवश्य जोड़ा जाता है। कवि गिरिजाप्रसाद को भी तत्कालीन विचारधाराओं से सम्बद्ध किया गया किन्तु उनके साहित्य में उनसे जुड़ी धारणाओं के ठीक विपरीत देखने को मिलता है। इसी आशय के साथ यह शोध-पत्र प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत शोध-पत्र में श्री गिरिजाकुमार माथुर के राष्ट्रीय चिंतन को अभिव्यक्त किया गया है।

मुख्य शब्द- विचारधारा, संकल्पना, जनमानस, विविध, आजादी, हुतात्माओं, पहरुए, सामरिक,अंतरात्मा, सौरमंडल

प्रस्तावना- राष्ट्र-कवि गिरिजा कुमार माथुर का जन्म वर्ष 1919 ई. में मध्यप्रदेश राज्य के तत्कालीन ग्वालियर जिले के अशोक नगर कस्बे में हुआ। उनके पिता ने उन्हें घर में ही अंग्रेजी, इतिहास, भूगोल आदि पढ़ाया। स्थानीय कालेज से इण्टरमीडिएट करने के बाद 1936 ई. में स्नातक उपाधि के लिए वे ग्वालियर चले गये। ग्वालियर के विक्टोरिया कालेज से उन्होंने शिक्षा ग्रहण की तथा सन् 1938 में उन्होने बी. ए. किया। 1941 में उन्होंने लखनऊ विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में एम.ए. किया तथा वकालत की परीक्षा भी पास की।

वर्ष 1940 में उनका विवाह दिल्ली में शकुन्त माथुर से हुआ, जो अज्ञेय द्वारा सम्पादित सप्तक परम्परा ("दूसरा सप्तक") की पहली कवयित्री रहीं। वर्ष 1943 से "ऑल इंडिया रेडियो" में अनेक महत्वपूर्ण पदों पर रहते हुए अंग्रेजी और उर्दू के वर्चस्व के बीच हिन्दी को पहचान दिलाई। उन्होने काफी समय तक वकालत भी की। वे कुछ वर्ष अमेरिका में भी रहे। लोकप्रिय रेडियो चैनल "विविध भारती" उन्हीं की संकल्पना का मूर्त रूप है। माथुर जी दूरदर्शन के उप-महानिदेशक के पद से सेवानिवृत्त हुए।

गिरिजाकुमार माथुर की समग्र काव्य-यात्रा से परिचित होने के लिए उनकी पुस्तक ''मुझे और अभी कहना है'" अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। 10 जनवरी 1994 को नई दिल्ली मे उनका निधन हुआ।

• सहायक प्राध्यापक, हिन्दी, मालवा कालेज ऑफ एजुकेशन,बीनागंज, गुना (म.प्र.)

कविता-संग्रह- गिरिजाकुमार का काव्यात्मक जीवन वर्ष 1934 में ब्रजभाषा के 'कवित्त-सवैया' लेखन से प्रारम्भ होता है। वे जनमानस के लोकप्रिय रचनाकार माखनलाल चतुर्वेदी, बाल कृष्ण शर्मा नवीन आदि की रचनाओं से बहुत प्रभावित हुए और 1941 में प्रकाशित अपने प्रथम काव्य संग्रह "मंजीर" की भूमिका उन्होंने निराला जी से ही लिखवायी। उनकी रचनाओं पर द्वितीय विश्वयुद्ध की घटनाओं का तथा भारत में चल रहे राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन का प्रभाव माना जाता है। सन 1943 में अज्ञेय द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित "तारसप्तक" के सात कवियों में गिरिजाकुमार माथुर भी एक कवि हैं। यहाँ उनकी रचनाओं में प्रयोगशीलता देखी जा सकती है। कविता के अतिरिक्त उन्होने, आलोचना,, नाटक तथा कहानियाँ भी लिखी हैं। उनका ही लिखा एक भावान्तर गीत "हम होंगे कामयाब" अत्यंत लोकप्रिय है।

1991 में इनको कविता-संग्रह ''मै वक्त के हूँ सामने'' के लिए हिंदी का 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' तथा इसी काव्य संग्रह के लिए 1993 में के. के. बिरला फाउंडेशन द्वारा दिया जाने वाला प्रतिष्ठित 'व्यास सम्मान' प्रदान किया गया। उन्हें 'शलाका सम्मान' से भी सम्मानित किया जा चुका है।

तार सप्तक भारतवर्ष के सुप्रसिद्ध कवि एवं साहित्यकार अज्ञेय जी के मार्गदर्शन में छपा कविताओं के संग्रह का एक विशेष काव्य-संग्रह माना जाता है। तारसप्तक में गिरिजाकुमार माथुर की अनेक कवितायें प्रकाशित हुई और उन्होने अपनी प्रतिभा को राष्ट्रीय स्तर पर अभिव्यक्त कर दिया। आज हिन्दी साहित्य के विद्यार्थियों के लिए और हिन्दी जगत में गिरिजाकुमार माथुर एक उल्लेखनीय नाम है। इसके अतिरिक्त उनकी 'नाश और निर्माण' 'धूप के धान', 'मैं वक्त के हूँ सामने' तथा 'मुझे अभी कुछ कहना है', 'कल्पांतर', 'शिलापंख चमकीले', 'जो बंध नहीं सका', 'भीतरी नदी की यात्रा', 'छाया मत छूना मन' आदि भी उनकी विशेष रचनाएँ मानी जाती हैं।

तार सप्तक में संकलित कुछ प्रतिनिधि रचनाएँ- छाया मत छूना, कौन थकान हरे जीवन की, हम होंगे कामयाब, ढाकबनी, खुले बालों की रात, दो पाटों की दुनिया, आज हैं केसर रंग रंगे वन चूड़ी का टुकड़ा, नया कवि, पन्द्रह अगस्त, भीगा दिन, नया बनने का दर्द, खुशबू बहुत है, अनकही बात, मैं कैसे आनन्द मनाऊँ, चाँदनी की रात है, कौन थकान हरे जीवन की, विदा, समय, क्यों भरे नयन हैं, भूले हुओं का गीत, भटका हुआ कारवाँ, इतिहास की कालहीन कसौटी।

राष्ट्रीयता की सकारात्मक सोच- गिरिजाकुमार माथुर के साहित्य में राष्ट्रीयता एवं जीवन दर्शन का सुंदर समावेश है। सबसे पहले तो उन्होने 'तारसप्तक' नामक काव्य संग्रह मे राष्ट्रीय स्तर पर अपना स्थान बनाया। यह अपने आप में बहुत बड़ी उपलब्धि थी। तत्पश्चात माथुर जी को तारसप्तक काव्य संग्रह के अतिरिक्त जिस रचना से सर्वाधिक प्रसिद्धि प्राप्त हुई, वह एक रचना है 'हम होंगे कामयाब एक दिन।' इस रचना ने इतनी ऊंचाई को प्राप्त किया कि यह आज जन-जन एवं बच्चे के मुख से सुनी जा सकती है। प्रस्तुत हैं कविता कि कुछ पंक्तियाँ -

होंगे कामयाब, होंगे कामयाब
हम होंगे कामयाब एक दिन।

हो-हो मन में है विश्वास, पूरा है विश्वास
हम होंगे कामयाब एक दिन।
होंगी शांति चारो ओर
होंगी शांति चारो ओर
होंगी शांति चारो ओर एक दिन।
हो-हो मन में है विश्वास, पूरा है विश्वास
होंगी शांति चारो ओर एक दिन।

एक दार्शनिक कवि- रचनाकार, कथाकार एवं अन्य किसी भी विधा का कोई साहित्यकार कब किस नवीन रूप मे समाज के सामने आ जाए कहा नहीं जा सकता। माँ सरस्वती उसकी कलम से कब और क्या लिखवा दे या कहलवा दे, यह अनुमान लगाना कठिन है। कुछ भी अनायास ही सृजित हो जाना उस देवी की कृपा होती है। माथुर जी की रचनाओं में भी उनके व्यक्तित्व के विविध लक्षण प्रतीत होते हैं। वे एक मंझे हुए दार्शनिक भी थे। उनकी एक रचना 'नया बनाने का दर्द' से उनकी यह विशेषता प्रकट होती है। उनकी ये पंक्तियाँ कुछ इसी प्रकार का संदेश व्यक्त करती हैं-

यों तो पुराना कभी व्यर्थ नहीं होता है
वह एक रंगीन डोर है
रोम रोम बँधी जिससे
एक-एक पीढ़ियाँ
माटी से बनी देह
रंग, रूप, बीज-कोष
अपनी पहचान-गन्ध
संस्कार सीढ़ियाँ!
जो कुछ पुराना है मोहक तो लगता है
टूटने का दर्द मगर सहना ही पड़ता है
बहुत कुछ टूटता है
तब नया बनता है।

देश प्रेमी कवि- गिरिजाकुमार माथुर जी के समय में देश और दुनिया में आजादी की प्यास थी। भारतवर्ष में भी राजनेता हो या पत्रकार और विद्यार्थी हो या साहित्यकार सभी के मन में एक ही समग्र प्रयास थी ......स्वतन्त्रता की प्राप्ति। सभी अपनी प्रतिभा और प्रयास से स्वतन्त्रता प्राप्ति का संदेश ही फैला रहे थे। ऐसे में इस भारत वर्ष मे स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने और बलिदान देने वाले अधिकतर क्रांतिकारी स्वतंत्रता प्राप्ति के सूर्य का दर्शन नहीं कर सके। इस स्वर्णिम वेला का आनंद लेने का स्वप्न लिए ही उन्हे इस जगत को अलविदा कहना पड़ा। किन्तु कवि माथुर जी को यह सौभाग्य प्राप्त हुआ कि उन्होने उस संघर्ष और बलिदान की वेदी को भी देखा और संभवतया मातृभूमि के लिए समर्पित हुतात्माओं का प्रतिनिधि बन आजादी का सुखद दिन भी देखा। इस सुख का अनुभव और आजादी से उत्पन्न दृढ़ भविष्य को उन्होने अपनी रचना '15 अगस्त' में लिखा। 15 अगस्त कविता में उन्होने एक ओर जीत को खुलकर अनुभूत किया दूसरी ओर इसका जश्न भी मनाया।

यथा–

आज जीत की रात
पहरुए सावधान रहना।
खुले देश के द्वार
अचल दीपक समान रहना।

लेकिन एक ओर जहां उन्होने आजादी का जश्न मनाया तो दूसरी ओर कुछ आशंकाओं को भी अभिव्यक्त किया। जैसे कि–

अभी शेष है पूरी होना
जीवन–मुक्ता–डोर
क्योंकि नहीं मिट पाई दुख की
विगत साँवली कोर
ले युग की पतवार
बने अम्बुधि समान रहना।

माथुर जी के ह्रदय में देश विभाजन की पीड़ा स्पष्टतया दिखलाई पड़ती है। इस विभाजन से भविष्य में होने वाले अनर्थ की आशंका को भी वे साथ में ही अभिव्यक्त कर देते हैं। उनका यह चिंतन देश–प्रेम के अमिट भाव को प्रकट करता है, जैसे–

विषम श्रृंखलायें टूटी हैं
खुली समस्त दिशाएँ–
आज प्रभंजन बनकर चलतीं
यु–बंदिनी हवाएँ
प्रश्नचिह्न बन खड़ी हो गईं
यह सिमटी सीमाएँ।

सैंकड़ों वर्षों तक अंग्रेज इस देश का शोषण करते रहे। हमारे जीवन को चलाने वाला अन्न तक इस देश के ही किसानों को भरपेट नहीं मिल पाता था। सोने की चिड़िया कहा जाने वाला यह देश शोषण के सर्पदंश से देखते ही देखते मृतप्राय: होने लगा। आजादी मिल भी गई किन्तु प्रश्न यह भी था कि अब देश कि व्यवस्था कैसे चले। धन की कमी, साधनों की कमी और साथ ही भारत के समक्ष कई राजनैतिक और सामरिक प्रश्न भी खड़े हो गए थे।

कल्पांतर की भूमिका में वे लिखते हैं कि, "इस तरह वर्तमान वैज्ञानिक और तकनीकी विभूति का पूरा इस्तेमाल मानवीय मंगल यानि सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक मुक्ति के लिए नहीं हो रहा बल्कि विभिन्न शक्ति–सम्पन्न देशों द्वारा अपना–अपना प्रभुत्व बनाये रखने की प्रतिस्पर्धा ने सामूहिक विनाश का चरम सफर उपस्थित कर दिया है।" अब साधन विकास के लिए तो चाहिए ही थे किन्तु विकास के साथ साथ प्रतिरक्षा के साधन अधिक महत्वपूर्ण हो गए। कवि माथुर के मन में यह सब चल रहा था पर वे आशान्वित भी थे कि अंतत सब ठीक हो जाएगा। निम्नलिखित पंक्तियों में उन्होने यही लिखा है–

शोषण से है मृत समाज
कमजोर हमारा घर है

किन्तु आ रहा नई जिन्दगी
यह विश्वास अमर है
जन-गंगा में ज्वार,
लहर तुम प्रवहमान रहना
पहरुए ! सावधान रहना।

उपरोक्त पंक्तियों मे कवि माथुर को अभी-अभी उगे आजादी के सूर्य के आस-पास काली छायाओं का डर भी दिखलाई पड़ता है। आश्चर्यजनक सत्य यह भी है कि यह भय अकारण नहीं था और भविष्य मे यह घटित हुआ भी। विभाजन के पश्चात आजादी के सुख को उसके बाद भड़की हिंसा और सीमा बाँट दिये जाने के बाद, इस देश की आजादी अभी नई-नवेली दुल्हन जैसी थी कि स्वतन्त्रता के आँगन के मुक्त गगन में आसुरी छाया मंडराने लगी। कहीं हिन्दू-मुस्लिम तो कहीं कश्मीर पर पाकिस्तान के अनधिकृत कब्जे के प्रयास ने आजादी के जश्न के दोने-पत्तल तक नहीं उठाने दिये। यही से यह स्पष्ट हो जाता है कि साहित्यकार की कलम में सब छिपा होता है। उसका मन और उसकी अंतरात्मा बिना किसी आधिकारिक घोषणा के वह सब कुछ सूंघ और समझ सकती है जो अभी तक भी भविष्य के पर्दे से छिपा है। कवि उसको जैसा है, वैसा सब दिख जाता है। माथुर जी की '15 अगस्त' कविता में यह सब कुछ स्पष्टतया लक्षित होता है।

ऊँची हुई मशाल हमारी
आगे कठिन डगर है।
शत्रु हट गया, लेकिन उसकी
छायाओं का डर है।

छाया के डर को भी वे समझते थे। उस समय अंग्रेज और अङ्ग्रेजी का भले ही विरोध था किन्तु यह भी सर्व विदित है कि अंग्रेजी बोलना और अंग्रेजी संस्कृति जैसे आज हावी है, तब भी तथाकथित संपन्नता और 'बड़े घरानों' या बड़े लोग होने की पहचान मानी जाती थी। बड़प्पन का पर्याय थी। यह काली छाया आज भी वैदिक संस्कृति के मुक्त गगन से हटी नहीं है और आज भी इसकी काली छाया मंडरा रही है।

कल्पांतर की भूमिका लिखते समय वे आगे लिखते हैं, 'पिछले 20-25 वर्षों मे संसार जिस घटनाक्रम से गुजरा है, उसमें यह समस्याएँ और भी भयावह होती गई हैं।...... ....यह जानते हुए भी कि समस्त सौरमंडल में ही नहीं अनेक नक्षत्र मंडलों के बीच सिर्फ पृथ्वी ही जीवनधारी ग्रह- लोक है आदमी- विशेष रूप से वे जिनके हाथ में सत्ता, साधन और शक्ति मत्ता है- आदमी घृणा और लिप्सा से अंधे होकर पृथ्वी से जीवन-क्रम को ही समाप्त करने में लगे हैं।"

निष्कर्ष- गिरिजाकुमार माथुर स्वतन्त्रता आंदोलन के प्रत्यक्ष साक्षी रहे और जिस विचारधारा को उन्होने क्रांतिकारियों में देखा उसका प्रभाव उनके मानस पर भी देखा जा सकता है। उनके चिंतन और लेखन में जनमानस के प्रति संवेदना को अनुभूत किया जा सकता है। उनकी रचनाओं और साहित्य में जीवन-दर्शन भी अभिव्यक्त हुआ है। उनका चिंतन समग्र है और एक साहित्यकार से समाज तथा बुद्धिजीवी वर्ग जैसी अपेक्षा करता है, वैसे साहित्य की उन्होने सृजना की। कतिपय विद्वानों ने यह भी अवधारित किया है कि उन

पर मार्क्सवाद का पूर्ण प्रभाव था। किन्तु उनके विचारों को अभी और भी विश्लेषण के साथ प्रसारित करने की आवश्यकता है क्योंकि जिस गति से अतुकांत कविता एवं प्रयोगवादी कविता का प्रचलन अब चल पड़ा है आने वाली पीढ़ी के लिए वे सदैव प्रासंगिक रहेंगे। उनके साहित्य को विकास की अवधारणा और दार्शनिकता के अधिक निकट देखा जा सकता है। कविताओं में भी उन्होने अधिकतर जीवन के यथार्थ और सामाजिक संरचना की कल्पना की है। आवश्यकता है उनके कृतित्व को ठीक संदर्भ से देखकर विश्लेषित करने की।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. माथुर गिरिजाकुमार, मैं वक्त के हूँ सामने कविता-संग्रह 1990, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली,
2. माथुर गिरिजाकुमार, कल्पांतर कविता संग्रह 1989, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली
3. माथुर पवन, गिरिजा कुमार माथुर रचना-संचयन, फरवरी 2019, साहित्य अकादमी, दिल्ली
4. दांगी चूरामन प्रसाद, आधुनिक हिन्दी कविता में गिरिजा कुमार माथुर का योगदान, 2019, क्लासिक पब्लिशर एंड डिस्ट्रीबूटर, चेन्नई
5. गर्ग शेरजंग, हमारे लोकप्रिय गीतकार: गिरिजाकुमार माथुर, 2002, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली
6. शर्मा रीता, गिरिजाकुमार माथुर के काव्य में जीवन मूल्य, प्रथम प्रकाशन, 2009, मेधा पब्लिशिंग हाउस, अमरावती
7. श्रीवास्तव डॉ. शुभा, वाराणसी, जन्म शताब्दी वर्ष गिरिजाकुमार माथुर, हिन्दी कुंज 29/7/2019 पर छपा लेख

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

बदलते वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारत की विदेश नीतिः एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

• सुधा गुप्ता

सारांश- प्रत्येक देश की भांति भारत की विदेश नीति का भी सर्वप्रथम लक्ष्य अपने राष्ट्रीय हितों को सुरक्षित रखना है। भारत के परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय हितों का आशय है- क्षेत्रीय अखण्डता की रक्षा के लिए सीमाओं को सुरक्षित रखना, ऊर्जा सुरक्षा, खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण सुरक्षा, साइबर सुरक्षा, प्रवासी भारतीय के हितों की रक्षा करना आदि। स्वतंत्र होने के पश्चात् भारतीय विदेश नीति के प्रमुख सैद्धान्तिक आधार से हैं गुट निरपेक्षता की नीति, पंचशील एवं शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व, साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशाद का विरोध, रंगभेद एवं जाति भेद का विरोध, संयुक्त राष्ट्र में दृढ़ आस्था, सभी राष्ट्रों से विशेषतः पड़ोसी राष्ट्रों से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध तथा अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के शांतिपूर्ण समाधान का पक्षधर। परन्तु बदलते अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य में भारतीय विदेश नीति की प्रमुख प्राथमिकताएँ हैं- प्रथम पड़ोसी की नीति, विस्तारित पड़ोस की नीति, रूस एवं अमेरिका के साथ सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध बनाना, वैश्विक मुद्दों पर प्रभावशाली एावं ठोस नीति अपनाना आदि। भारत का प्रयास है कि वैश्विक मंचों पर उसकी आवाज सुनी जाए। अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद, जलवायु परिवर्तन, निःशस्त्रीकरण, वैश्विक शाासन आदि प्रमुख मुद्दों पर भारत की सोच का विश्व पटल पर प्रभाव पड़े। इस प्रकार भारत अन्तर्राष्ट्रीय जगत में बड़ी वैश्विक जिम्मेदारी निभाने को तैयार है। परन्तु इन उद्देश्यों, को पूरा करने के मार्ग में उसके समक्ष कई बड़ी चुनौतियाँ भी हैं - जैसे चीन का बढ़ता वर्चस्व, पड़ोसी देशों के साथ कमजोर होते सम्बन्ध, बड़ी शक्तियों के साथ सम्बन्धों को सौहार्दपूर्ण बनाने की चुनौती आदि। इन चुनौतियों के बावजूद वर्तमान में भारत विश्व के लगभग सभी मंचों पर अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है। उसे जनवरी में सुरक्षा परिषद के अस्थाई सदस्य के रूप में दो वर्ष के लिए चुना गया है तथा संयुक्त राष्ट्र के आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् के तीन महत्वपूर्ण निकायों के लिए उसे चुना गया है। यही नहीं भारत यौन एवं अध्यात्म जैसी साफ्ट पावर का भी सफल प्रयोग विदेश नीति में कर रहा है। एशिया में प्रभावशील भूमिका निभाने तथा अन्तर्राष्ट्रीय जगत में महत्वपूर्ण पहचान बनाने के लिए एवं आने वाली चुनौतियों का सामना करने के लिए भारत को अपनी विदेश नीति को सावधानी तथा सतर्कता पूर्वक आगे बढ़ाना होगा।

मुख्य शब्द- राष्ट्रीय हित, क्षेत्रीय अखण्डता, गुट निरपेक्षता, पंचशील, शान्तिपूर्ण सह अस्तित्व

प्रस्तावना- किसी भी देश की विदेश नीति, उसके ऐतिहासिक अनुभव भू-राजनीतिक स्थिति तथा उसकी सांस्कृतिक विरासत से अनिवार्य रूप से प्रभावित होती है। जिन साझे मूल्यों के अनुसार राष्ट्र हित परिभाषित होता है, वे इसी पर निर्भर होते हैं। भारत ने भी अपने ऐतिहासिक अनुभव, भू-राजनीतिक स्थिति तथा सांस्कृतिक विरासत को

• प्राध्यापक, राजनीति शास्त्र, महारानी लक्ष्मीबाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय (शासकीय स्वशासी उत्कृष्ट महाविद्यालय) ग्वालियर (म.प्र.)

ध्यान में रखकर अपने राष्ट्रहित निर्धारित किए हैं और प्रत्येक देश की भांति भारत की विदेश नीति का भी सर्वप्रथम लक्ष्य अपने राष्ट्रीय हितों को सुरक्षित रखना है। भारत के परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय हितों का तात्पर्य है- क्षेत्रीय अखण्डता की रक्षा के लिए हमारी सीमाओं को सुरक्षित करना, सीमा पार आतंकवाद का मुकाबला, ऊर्जा सुरक्षा, खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण की सुरक्षा, साइबर सुरक्षा, नि:शस्त्रीकरण, अन्तर्राष्ट्रीय शांति के लिए प्रयत्न करना आदि। इसके अतिरिक्त विदेशों में रह रहे भारतीयों को संलग्न कर वहाँ उनकी उपस्थिति का अधिकतम लाभ उठाना तथा उनके हितों को सुरक्षित रखना है। इन प्रमुख राष्ट्रीय हितों के सन्दर्भ में भारत की विदेश नीति के चार प्रमुख उद्देश्य हैं-

1. भारत को पारम्परिक एवं गैर पारम्परिक खतरों से बचाना।
2. ऐसा वातावरण बनाना जो भारत के समावेशी विकास के लिए अनुकूल हो, जिससे देश में गरीब से गरीब व्यक्ति तक विकास का लाभ पहुँच सके।
3. यह सुनिश्चित करना कि वैश्विक मंचों पर भारत की आवाज सुनी जाए और विभिन्न वैश्विक आयामों जैसे- आतंकवाद, जलवायु परिवर्तन, नि:शस्त्रीकरण और वैश्विक शासन के मुद्दों को भारत प्रभावित कर सके।
4. विदेश में भारतीय प्रवासियों को जोड़ना और उनके हितों की रक्षा करना।

भारत की विदेश नीति के प्रमुख सैद्धान्तिक आधार-

1. गुट निरपेक्षता की नीति (The policy of Non-alignment)- गुट निरपेक्षता भारतीय विदेश नीति का आधार स्तम्भ है। भारत जब 1947 में स्वतंत्र हुआ उस समय विश्व दो विरोधी गुटों- अमेरिका एवं सोवियत संघ में विभाजित था। भारत ने इन दोनों में से किसी भी गुट में शामिल न होने का निश्चय करके गुटनिरपेक्षता की नीति अपनाई तथा अपनी स्वतंत्र विदेश नीति अपनाने का निर्णय लिया। भारत का दृढ़ मत था कि उसकी गुट निरपेक्षता की नीति सभी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को प्रोत्साहन देती है तथा बल प्रयोग को अस्वीकार करके अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के शान्तिपूर्ण समाधान का समर्थन करती है। उसकी गुटनिरपेक्षता की नीति पूर्ण नि:शस्त्रीकरण की सिफारिश करती है एवं संयुक्त राष्ट्र को शक्तिशाली बनाने की बात करती है।

2. **पंचशील और शांतिपूर्ण सहअस्तित्व (Panchsheel and Peaceful co-existence)**- विभिन्न विचारधाराओं में विश्वास करने वाले देशों के बीच शांतिपूर्ण सहअस्तित्व का आदर करना, भारतीय विदेश नीति का एक प्रमुख सिद्धान्त है। पंचशील सिद्धान्तों को सर्वप्रथम 29 अप्रैल 1954 को चीन के तिब्बत क्षेत्र तथा भारत के मध्य संधि करने के लिए प्रतिपादित किया गया था। बाद में इसका प्रयोग वैश्विक स्तर पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को संचालित करने के लिए किया जाता है। पंचशील को पांच सिद्धांत कहते हैं-

(1) एक-दूसरे की क्षेत्रीय अखण्डता एवं सम्प्रभुता का आदर करना;
(2) एक-दूसरे के विरुद्ध आक्रमण न करना;
(3) एक-दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना;
(4) समानता एवं परस्पर मित्रता की भावना; तथा
(5) शांतिपूर्ण सहअस्तित्व।

3. **साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद का विरोध (Opposition to imperialism and colonialism)**- उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद का विरोध भारतीय विदेश नीति के निर्माताओं के लिए आस्था का विषय रहा है। भारत स्वयं लम्बे समय तक ब्रिटिश साम्राज्यवाद से पीड़ित रहा था। अतः भारत ने एशिया और अफ्रीका के पराधीन देशों के स्वतंत्रता संग्राम में उनका पूर्ण समर्थन किया।

आज यद्यपि उपनिवेशवाद एवं साम्राज्यवाद समाप्त हो गया है लेकिन भारत की विदेश नीति में आज भी यह सिद्धान्त महत्वपूर्ण है क्योंकि अनेक पश्चिमी देशों ने अपने भूतपूर्व उपनिवेशों पर अपना प्रभुत्व अभी तक समाप्त नहीं किया है। आज भी भारत सहित एशिया एवं अफ्रीका के अनेक देशों में नव उपनिवेशवाद (Neo-Colonialism) का प्रयोग किया जा रहा है। यह उपनिवेशवाद का नया रूप है। इसमें आर्थिक एवं सांस्कृतिक रूप से पश्चिमी पूँजीवादी देश गरीब एवं विकासशील देशों का शोषण करते हैं। भारत हर प्रकार के उपनिवेशवाद का विरोध करता है।

4. **रंगभेद एवं जातिभेद का विरोध (Oposition to Aparthed and Racial Discrimination)**- भारत की विदेश नीति प्रारम्भ से ही 'मानवमात्र के बन्धुत्व' (Universal Brotherhood) के सिद्धान्त पर आधारित रही है। इसीलिए भारत द्वारा हमेशा से प्रजाति (Race) एवं इसी प्रकार के अन्य तत्व पर आधारित भेदभाव का विरोध किया जाता रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर रंग भेदभाव के विरुद्ध आवाज उठाने वाला भारत पहला राष्ट्र रहा है। भारत ने प्रारम्भ से ही दक्षिण अफ्रीका द्वारा अपनायी गई रंग-भेदभावशाली नीति की कटु आलोचना की थी। सन् 1952 में 12 अन्य एफ्रो-एशियाई राष्ट्रों के साथ भारत ने संयुक्त राष्ट्र में रंगभेद भाव (Aparthed) का मुद्दा उठाया था। भारत का तर्क था कि इस प्रकार की नीति न केवल संयुक्त राष्ट्र चार्टर के मूल सिद्धान्तों एवं मानवाधिकारों के सार्वभौमिक घोषणा-पत्र के विरुद्ध है वरन् विश्व शांति के लिए भी खतरनाक है। भारत ने दक्षिण अफ्रीका की रंगभेद नीति का सशक्त विरोध किया और उसे सफलता मिली। दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद की नीति समाप्त हुई। नेल्सन मण्डेला के नेतृत्व में पहली बार जनता द्वारा निर्वाचित बहुमत की सरकार बनी।

5. **संयुक्त राष्ट्र में दृढ़ आस्था (Firm Faith in United Nation)**- शान्ति के समर्थक के रूप में भारत की संयुक्त राष्ट्र की गतिविधियों में दृढ़ आस्था रही है। भारत संयुक्त राष्ट्र की अनेक विशिष्ट एजेन्सियों का शुरु से ही सक्रिय सदस्य रहा है। संयुक्त राष्ट्र की शान्ति स्थापक गतिविधियों में भारत ने सदैव अपेक्षित सहयोग दिया है। कोरिया, हिन्दचीन एवं कांगो संकट जैसे मामलों में भारत ने संयुक्त राष्ट्र को महत्वपूर्ण सैन्य सहयोग दिया। भारत की माँग है कि सुरक्षा परिषद् में सभी भौगोलिक क्षेत्रों को प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए। अतः सुरक्षा परिषद् का विस्तार होना चाहिए।

6. **सभी राष्ट्रों से विशेषतः पड़ोसी राष्ट्रों से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध (Friendly Relation with all especially neighbouring Countries)**- भारत सभी राष्ट्रों के मध्य समानता का प्रबल पक्षधर है। अतः प्रजाति, रंग विचारों आदि के भेदभाव को नजर अन्दाज करते हुए सभी राष्ट्रों, छोटे या बड़े के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों की कामना करता है। भारत स्थाई शत्रु (permanent Enemy) की अवधारणा में विश्वास नहीं रखता और

अपने द्विपक्षीय विवादों को (Bi-Lateral Disputes) को परस्पर वार्ता द्वारा हल करने में विश्वास रखता है।

अपने पड़ोसी देशों के साथ भारत सदैव मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाए रखना चाहता है और इसीलिए भारत ने गुजराल सिद्धान्त (1996) को अपनाया, जिसमें पड़ोसी देशों के बीच पारस्परिक सम्बन्ध बढ़ाने पर बल दिया गया।

7. **अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के शान्तिपूर्ण समाधान का समर्थक (Peaceful Settlement of International Disputes)**- पड़ोसी विवादों के साथ ही भारत अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के शान्तिपूर्ण समाधान का पक्षधर है। राष्ट्र संघ के असफल होने के बाद वर्तमान में संयुक्त राष्ट्र संघ एवं अन्तर्राष्ट्रीय संगठन है। संयुक्त राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के शान्तिपूर्ण समाधान के तरीकों को अपनाने पर बल देता है जैसे- वार्ता, मध्यस्थता, पंचनिर्णय, न्यायिक निर्णय आदि। भारत का दृढ़ विश्वास है कि युद्ध से समस्या का समाधान नहीं होता वरन् शान्तिपूर्ण तरीकों को अपनाकर विवादों का समाधान किया जा सकता है।

वर्तमान समय में भारतीय विदेश नीति की प्राथमिकताएँ-

1. भारत की प्रथम पड़ोस नीति- भारत क्षेत्रफल एवं जनसंख्या दोनों दृष्टियों से दक्षिण एशिया का सबसे बड़ा देश है। भारत सदैव से पड़ोसी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों को बनाए रखने का पक्षधर है। वर्तमान मोदी सरकार ने "इण्डिया फर्स्ट" को सारगर्भित तरीके से विदेश नीति का प्रमुख उद्देश्य बनाया है। 2014 में अपने पहले शपथ ग्रहण समारोह ने सरकार द्वारा "दक्षेस" नेताओं को आमंत्रित करके पड़ोसी देशों को प्राथमिकता दी गयी। इसी प्रकार वर्तमान सरकार ने अपने दूसरे शपथ ग्रहण समारोह मई 2019 में बिम्सटेक (Bimstec) के सदस्य देशों को आमंत्रित किया। बिम्सटेक (Bimstec) वास्तव में दक्षिण एशिया एवं दक्षिण पूर्व एशिया को जोड़ने वाली कड़ी है। इसमें भारत की 'प्रथम पड़ोस' और 'एक्ट ईस्ट' की नीति भी एकाकार होती है।

2. विस्तारित पड़ोस की नीति- भारत की विस्तारित पड़ोस की नीति के अन्तर्गत दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों का विशेष महत्व है। अत: भारत ने 1992 में 'Look East Policy' की घोषणा की, जिसका उद्देश्य दक्षिण-पूर्ण एशिया क्षेत्र के साथ भारत के रणनीतिक सम्बन्ध बनाना था और इसके साथ चीन के रणनीतिक प्रभाव को भी सन्तुलित करना था। परन्तु नवम्बर 2014 में मोदी सरकार ने 'Act East Policy' घोषित की जो कि वास्तव में 'Look East Policy का ही विस्तृत रूप है। 'Act East Policy' विभिन्न स्तरों पर विशाल एशिया प्रशान्त क्षेत्र के साथ आर्थिक, रणनीतिक, सांस्कृतिक सम्बन्धों को बढ़ावा देने के लिए एक राजनैतिक पहल है। इस नीति के अन्तर्गत द्विपक्षीय क्षेत्रीय एवं बहुपक्षीय स्तरों पर कनेक्टिविटी, व्यापार संस्कृति, रक्षा और लोगों से लोगों के बीच सम्पर्क बढ़ाने में दक्षिण पूर्व एशिया देशों के साथ गहन एवं निरन्तर सम्पर्क को बढ़ावा देना है। भारत की इस 'Act East Policy' ने भारत आसियान देशों के बीच मौजूदा इन्फ्रास्ट्रक्चर, व्यापार, स्किल डेवलपमेन्ट, शहरी विकास तथा स्मार्ट सिटी के साथ 'मेक इन इण्डिया' पहल पर जोर दिया है। 'Act East Policy' का फायदा उठाने के लिए भारत ने जापान, ऑस्ट्रेलिया, वियतनाम, इण्डोनेशिया, मलेशिया, सिंगापुर और दक्षिण-पूर्व

एशियान राष्ट्रों (आसियान) कोरिया-गणराज्य (ROK) के साथ रणनीतिक साझेदारी के लिए अपने उच्च सम्बन्धों को वरीयता दी है। यही कारण है कि ऑस्ट्रेलिया भारत को गैर परमाणु कार्यों के लिए यूरेनियम देने पर सहमत हो गया है।

3. **संयुक्त राज्य अमेरिका तथा रूस के साथ सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध बनाना-** वर्तमान सरकार भारत एवं रूस जैसी महाशक्तियों के साथ सक्रिय सम्बन्ध बनाने के लिए तत्पर है और कुछ अर्थों में गुटनिरपेक्षता की नीति से दूर हुआ है। दिल्ली में हुए 2019 के रायसीना डायलॉग में भारत के विदेश सचिव विजय गोखले ने कहा था, भारत गुट निरपेक्षता के अतीत से निकल चुका है। भारत आज अपने हितों को देखते हुए दुनिया के दूसरे देशों के साथ रिश्ते बना रहा है। 21वीं सदी के आने वाले दशकों में एशियाई और वैश्विक राजनीति को आकार देने के लिए अमेरिका के साथ भारत के सम्बन्ध बहुत महत्वपूर्ण रहे हैं। भारत द्वारा स्थिर अफगानिस्तान-पश्चिम एशिया, मध्य एशिया और इण्डो पेसेफिक क्षेत्र जैसे मुद्दों पर अमेरिका के साथ रणनीतिक सहयोग को सुनिश्चित किया है। इस क्षेत्र में तेल भण्डारण की मुफ्त पहुँच सुनिश्चित की है। हिन्द महासागर में समुद्री लेन की स्वतंत्रता बनाए रखी है और मुकाबला किया है आतंकवाद के फैलने को रोकने के लिए।

भारत विशेष रूप से अमेरिका के साथ अपने रणनीतिक सम्बन्धों को मजबूत करने की कोशिश कर रहा है। भारत ने अमेरिका के साथ रक्षा सहयोग को बहुत महत्वपूर्ण माना है। भारत एवं अमेरिका ने रक्षा सहयोग के तीसरे बुनियादी समझौते 'COMCASA' अर्थात् संचार सुरक्षा समझौते पर 2018 में समझौता किया जब सितम्बर में दोनों देशों ने 2+2 डायलॉग की शुरुआत की थी। वर्तमान में भारत एवं अमेरिका ने BECA समझौता किया, जिसके अन्तर्गत भारत को किसी पर निशाना लगाने या आने जाने की सटीक जानकारी के लिए अमेरिकी सिस्टम से मदद मिलेगी। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प की दो दिवसीय भारत यात्रा से दोनों देशों के सम्बन्ध मजबूत बने हैं। अमेरिकी राष्ट्रपति की इस यात्रा के दौरान दोनों देशों के बीच, ऊर्जा, रक्षा, स्वास्थ्य जैसे क्षेत्रों में महत्वपूर्ण समझौते हुए हैं। साथ ही आतंकवाद हिन्द प्रशान्त क्षेत्र जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों की चुनौतियों को स्वीकार करते हुए इन खेत्रों में सहयोग बढ़ाने पर बल दिया गया है।

भारत एवं रूस के सम्बन्ध वैश्विक स्तर पर लम्बे समय से घनिष्ठ एवं मजबूत रहे हैं। भारत एवं रूस ऐतिहासिक रूप से रक्षा, व्यापार, ऊर्जा, अन्तरिक्ष आदि क्षेत्रों में एक-दूसरे से जुड़े रहे हैं। हाल में ही रूसी रक्षा मंत्रालय के निमंत्रण पर भारतीय रक्षा मंत्री द्वितीय विश्व युद्ध की 75वीं विजय परेड में शामिल होने के लिए मास्को गए थे। भारतीय रक्षा मंत्री ने अपनी तीन दिवसीय यात्रा के दौरान भारत एवं रूस के सम्बन्धों को विशेष एवं विशेषाधिकार प्राप्त सामरिक साझेदारी बताया। और दोनों देशों के बीच वर्तमान द्विपक्षीय रक्षा अनुबन्धों को जारी रखते हुए अन्य क्षेत्रों में भी द्विपक्षीय सयम्बन्धों को मजबूत करने पर बल दिया।

यद्यपि रूस एवं चीन के बीच बढ़ती घनिष्ठता एवं भारत अमेरिकी निकटता के कारण भारत के साथ रूस के सम्बन्ध कुछ शिथिल हुए हैं, परन्तु वर्तमान में भारत में कोविड-19 की दूसरी घातक लहर के प्रकोप से बचाव हेतु अमेरिका एवं रूस दोनों ही देश भारत की सहायता कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त अमेरिकी धमकियों के बावजूद भारत

ने रूस के साथ एस-400 मिसाल सिस्टम की डील को रद्द नहीं किया है। वर्तमान में नई अमेरिकी बाइडेन सरकार तथा रूस की पुतिन सरकार दोनों से भारत के अच्छे सम्बन्ध हैं।

4. **वैश्विक मुद्दों पर भारत की नीति-** 2015 में तत्कालीन विदेश सचिव एस. जयशंकर ने 'International Institute for Strategic Studies' में भारत अमेरिका एवं चीन पर फुलर्टन लेक्चर दिया था, जिसमें उन्होंने कहा- 'आज का भारत, दुनिया की बड़ी ताकत बनना चाहता है न कि बैलेन्सिंग पावर।' उन्होंने आगे कहा- इसीलिए भारत आज 'बड़ी वैश्विक जिम्मेदारी' निभाने को तैयार है। भारत का यह प्रयास है कि वैश्विक मंचों पर भारत की आवाज सुनी जाए एवं विभिन्न महत्वपूर्ण वैश्विक मुद्दों जैसे आतंकवाद, जलवायु परिवर्तन, निःशस्त्रीकरण, वैश्विक शासन आदि पर भारत की सोच एवं नीति का विश्व पटल पर प्रभाव पड़े। उदाहरण के लिए भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद के विरुद्ध राष्ट्रों की समिति को एक स्वैच्छिक बहुपक्षीय मंच के रूप में बनाने की योजना बनाई है। इसके अतिरिक्त जलवायु परिवर्तन, निःशस्त्रीकरण जैसे वैश्विक मुद्दों पर भी भारत ने प्रभावी कदम उठाए हैं। भारत का यह भी मत है कि वर्तमान में कई वैश्विक संस्थानों में समय की मांग के अनुसार सुधार की आवश्यकता है। संयुक्त राष्ट्र, विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष जैसी समस्याओं में सुधार की अत्यधिक आवश्यकता है।

भारतीय विदेश नीति के समक्ष चुनौतियाँ- बदलती परिस्थितियों के अनुरूप भारत भी अपने प्रभाव क्षेत्र को व्यापक बनाने, सभी राष्ट्रों में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका बढ़ाने तथा एशिया की उभरती हुई शक्ति के रूप में अपने को स्थापित करने की कोशिश में लगा है। अतः विदेश नीति के इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए उसके समक्ष कई चुनौतियाँ भी है, जिनमें कुछ प्रमुख हैं-

1. **चीन का बढ़ता वर्चस्व-** चीन की बढ़ती वैश्विक महत्वाकांक्षाओं के कारण उसके साथ अच्छे सम्बन्ध बनाए रखना भारत के लिए चुनौतीपूर्ण है। चीन ने अपनी वित्तीय एवं सैन्य ताकत के बल पर भारत के पड़ोसी देशों में अपना मजबूत प्रभाव जमा लिया है, जोकि हमारी विदेश नीति के उद्देश्यों की राह में बाधक बन सकता है। चीन की 'स्टिंग आफ पर्ल' (String of Pearl's) रणनीति, उसकी चीन-पाकिस्तान आर्थिक गलियारा परियोजना और 'बेल्ट एण्ड रोड' परियोजनाओं के लिए सटीक बैठती है। वास्तव में इससे चीन का प्रभाव बहुत आगे तक बढ़ जाता है, जो भारत के लिए असहज हो सकता है। इसके अतिरिक्त चीन ने नेपाल और श्रीलंका के साथ अपने सम्बन्ध मजबूत किए हैं, जोकि भारत के लिए चिंता का विषय हैं।

अभी हाल ही वर्ष 2021 में अपने तीसरे विमान वाहक पोत को लांच करने की घोषणा के साथ यह हिन्द प्रशान्त महासागर क्षेत्र में अपने प्रभुत्व को मजबूत करने का प्रयास कर रहा है। इसके अतिरिक्त चीन द्वारा लगातार भारत की सीमा का अतिक्रमण करने का प्रयास किया जा रहा है, जो कि भारतीय विदेश नीति के लिए चुनौतीपूर्ण है।

2. **चीन एवं रूस धुरी की प्रगति-** वर्तमान में रूस ने अपनी सीमा के अन्दर के मामलों में अधिक रुचि दिखाई है। वर्ष 2014 में क्रीमिया पर कब्जे के बाद रूस पर लगाए प्रतिबन्धों ने रूस को चीन के साथ अपने सम्बन्धों को अधिक मजबूत करने के लिए प्रेरित किया है। इससे प्रतीत होता है कि भारत जैसे देशों में रूस की रुचि घट रही है, जो कि

भारत के लिए अच्छा नहीं है। इसके अतिरिक्त अमेरिका और भारत के बीच बढ़ती निकटता ने रूस एवं ईरान जैसे पारम्परिक सहयोगियों के साथ भारत के सम्बन्धों को कमजोर किया है।

3. **पड़ोसी देशों के साथ कमजोर होते सम्बन्ध-** पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्धों का कमजोर होना भारतीय विदेश नीति के लिए चिन्ता का विषय है। इसे श्रीलंका के सन्दर्भ में चीन की 'चेकबुक कूटनीति' (ChequeBook Diplomacy) एन.सी.आर. (NCR) के मुद्दे पर बंगलादेश के साथ सम्बन्धों में तनाव और नेपाल द्वारा नया मानचित्र जारी किए जाने के कारण दोनों देशों के बीच सीमा विवाद आदि के रूप में देखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त पाकिस्तान लगातार भारत में आतंकी गतिविधियों को पोषित कर रहा है, इसे रोकना भी चुनौतीपूर्ण कार्य है।

1. अफगानिस्तान से अमेरिकी सेना की वापसी के बाद उत्पन्न होने वाली शक्ति शून्यता की स्थिति भारतीय विदेश नीति के लिए चुनौती उत्पन्न करेगी।
2. ईरान में चीन के बढ़ते प्रभाव को रोकना भारत की विदेश नीति के लिए चुनौतीपूर्ण है।
3. विदेश नीति के मामले में भारत की सबसे महत्वपूर्ण चुनौती यह भी है कि भारत को न केवल अपने पड़ोसियों, आसियान तथा पश्चिम एशिया समेत दूरवर्ती पड़ोसियों के साथ अच्छे सम्बन्धों को मजबूत बनाए रखना है, वरन् विश्व की प्रमुख शक्तियों के साथ अपने सम्बन्धों को मजबूत कबनाए रखना भी है क्योंकि ये शक्तियाँ अपना-अपना प्रभाव जमाने के लिए होड़ करती हैं तथा किसी न किसी के माध्यम से यह काम करना चाहती हैं। भारत अपने बड़े आकार, आर्थिक एवं सैन्य शक्ति, मानव संसाधन तथा रणनीतिक लाभ के कारण ऐसी भूमिका में नहीं आ सकता।

भारतीय विदेश नीति के लिए भविष्य की रणनीति- हम एक गतिशील दुनिया में रह रहे हैं। अत: भारत की विदेश नीति भी सक्रिय, लचीली एवं व्यावहारिक होनी चाहिए। अत: आगे आने वाले समय के अनुसार भारतीय विदेश नीति को निम्नांकित क्षेत्रों पर ध्यान देना चाहिए-

1. भारत को सर्वप्रथम अपने पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्धों को सुधारने और उनहें घनिष्ठ बनाने का प्रयास करना चाहिए। भारत को बांग्लादेश, म्यांमार और श्रीलंका, नेपाल जैसे देशों के साथ सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध बनाने के प्रयास करना चाहिए। इसके अतिरिक्त पाकिस्तान को पूरी तरह से अलग-थलग नहीं करना चाहिए, वरन् दोनों देशों के बीच परस्पर संवाद कायम रखना चाहिए।
2. चीन के बढ़ते सैन्य प्रभाव को देखते हुए भारत को पर्याप्त मात्रा में बाह्य सहयोग लेने की भी आवश्यकता है। अत: भारत को फ्रांस, जर्मनी, यूके जैसे यूरोपीय देशों के नेताओं के अतिरिक्त अमेरिका, जापान, ऑस्ट्रेलिया से निरंतर समर्थन की आवश्यकता होगी।
3. वर्तमान में अमेरिका-ईरान, इजरायल-फिलीस्तीन, चीन-अमेरिका, रूस आदि देशों के बीच भी अत्यधिक मनमुटाव है। ऐसी स्थिति में भारत को कोई भी कदम

बहुत सोच-समझ कर उठाना चाहिए क्योंकि इन सभी देशों के साथ भारत के आर्थिक हित जुड़े हैं।

4. रूस हमारा बहुत पुराना पारम्परिक मित्र रहा है। अत: अमेरिका से मजबूत रिश्ते के बावजूद रूस से सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध बनाए रखना अति आवश्यक है।
5. वर्तमान में भारत संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् (UNSC) में एक अस्थाई सदस्य के रूप में 8वीं बार दो वर्षीय काल के लिए चुना गया है।ऐसे में इस मंच के माध्यम से भारत को तिब्बत से लेकर ताइवान तक चीन की आक्रामकता ईरान-सऊदी अरब प्रतिद्वन्दिता, बांग्लादेश एवं म्यांमार के बीच शरणार्थी संकट जैसे महत्वपूर्ण वैश्विक मामलों को उठाना चाहिए।
6. चूँकि 'क्वाड' (QUAD) और 'हिन्द प्रशान्त रणनीति (India Pacific Strategy) का भविष्य अमेरिका के नए प्रशासन के दृष्टिकोण पर करेगा। ऐसी स्थिति में भारत के लिए आवश्यक है कि अमेरिका के साथ प्रगाढ़ होते रणनीति एवं रक्षा सम्बन्धों को मजबूत करने के साथ ही व्यापार एवं वीजा जैसे मुद्दों को भी हल किया जाए।

निष्कर्ष- इसमें कोई सन्देह नहीं कि बदलते अन्तर्राष्ट्रीय परिदृश्य में भारतीय विदेश नीति के समक्ष कई बड़ी चुनौतियाँ हैं, जिनका सामना उसे सावधानी एवं सतर्कता पूर्वक करना है, परन्तु इसके बावजूद वर्तमान में भारत विश्व के लगभग सभी मंचों पर अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है और अधिकांश बहुपक्षीय संस्थानों में उसकी स्थिति मजबूत हो रही है। जनवरी में सुरक्षा परिषद् अस्थाई सदस्य के रूप में भारत ने दो वर्ष के लिए अपना कार्यकाल शुरु किया है। इसके अतिरिक्त संयुक्त राष्ट्र के आर्थिक एवं सामाजिक परिषद के तीन निकायों के लिए भारत का निर्वाचन हुआ है-

1. अपराध निरोधक एवं आपराधिक आयोग का सदस्य, भारत को 1 जनवरी 2022 से शुरु हो रहे वर्ष में 3 वर्ष के लिए चुना गया है।
2. लैंगिक समानता एवं महिला सशक्तिकरण संस्था का तीन वर्ष के लिए सदस्य चुना गया है।
3. विश्व खाद्य कार्यक्रम के कार्यकारिणी बोर्ड में निर्वाचित। भारत का कार्यकाल 1 जनवरी 2022 से प्रारम्भ होगा।

इसके अतिरिक्त भारत ने अपनी सभ्यता की सॉफ्ट पावर को भी विदेश नीति में शामिल किया है। योग एवं अध्यात्म जैसी सॉफ्ट पावर का वैश्विक स्तर पर प्रभाव पड़ा है। इस प्रकार भारत वैश्विक स्तर पर अपनी प्रभावशाली भूमिका स्थापित करने की कोशिश कर रहा है, परन्तु यह भी सत्य है कि भारतीय विदेश नीति के समक्ष कई चुनौतियाँ हैं। अत: उनका सामना करने और अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति के रूप में स्वयं को स्थापित करने के लिए भारत को अपनी विदेश नीति को सावधानी पूर्वक आगे बढ़ाना होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. पंत, पुष्पेश - 21वीं सदी में अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध M.C. Graw Hill (India) private Limited P. 111-7
2. खन्ना, वी.एन., अरोड़ा लिपाक्षी - भारत की विदेश नीति, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि.,

नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण, पृ.सं. 68
3. वही, प्र.सं. 46
4. नन्दलाल – यूनीफाइड राजनीति विज्ञान, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, इन्दौर, पृसं. 5
5. वही, पृ.सं. 7
6. fonline.org.cdn.ampproje....
7. वर्ल्ड फोकस, पीयर रिव्यूड/ रैफ्रीड रिसर्च जर्नल, भारत की विदेश नीति भाग 2, अंक 95, फरवरी 2020, पृ.सं. 69
8. एडिटोरियल (28 July 2020) Drishti 9AS, www.drishtias.com
9. वर्ष 2021 में भारत की विदेश नीति की नीति Drishti 9AS, www.drishtias.com

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

गाँधी दर्शन में नैतिक अनुशासन : एक विवेचन

• वीणा रानी

सारांश- महात्मा गाँधी ने बुद्ध एवं महावीर के अहिंसा सिद्धांत के आधार पर ही समस्त सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक समस्याओं के समाधान का प्रयास किया है। उनके अनुसार नैतिकता मानव जीवन का वास्तविक आधार है। यह मानव के अन्दर संघर्ष और संहार की भावनाओं एवं प्रवृतियों को दबा कर उनमें परोपकार, सुख, शांति और सामंजस्य को प्रोत्साहित करती है। व्यक्ति एवं समाज का अस्तित्व नैतिकता पर ही निर्भर है। सर्वोच्च नैतिकता सार्वभौम है। गाँधी जी ने सर्वोदय समाज की स्थापना के लिए नैतिक अनुशासनों के पालन पर अत्यधिक बल दिया है। वे अनुशासन व्रत के रूप में जाने जाते हैं। यह अनुशासन मुख्य सद्गुण है जिसका पालन सभी व्यक्तियों के द्वारा होना चाहिए। सर्वोदय समाज की आधरशिला कुछ मुख्य सद्गुणों पर ही निर्भर है। इस शोध-पत्र में गाँधी जी द्वारा बताए गए नैतिक सद्गुणों की व्याख्या प्रस्तुत की गई है।

मुख्य शब्द- नैतिकता,सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, सद्गुण, अनुशासन

भूमिका- भारतीय दर्शन के सभी सम्प्रदाय सामाजिक एवं नैतिक समस्याओं के सम्बन्ध में एकमत है। चार्वाक को छोड़कर भारतीय दर्शन के सभी सम्प्रदाय स्वीकार करते हैं कि विश्व का संचालन सामाजिक एवं नैतिक नियमों के द्वारा होता है। यह नियम मूल्यों की अनश्वरता में विश्वास करता है। "As you sow, so you will reap." यह कर्म सिद्धांन्त का सार है। गाँधी इन नियमों में विश्वास रखते हैं क्योंकि उनके अनुसार सर्वोदय समाज में व्यक्ति के शुभ नैतिक एवं सामाजिक जीवन के लिए यह प्रेरणादायक है। गाँधी कर्त्तव्य के लिए सिद्धांन्त में विश्वास रखते थे। व्यावहारिक दृष्टि से करीब-करीब सभी भारतीय चिन्तक मुख्य-सद्गुण की समस्या के सम्बन्ध में एकमत है। इन सद्गुणों का अभ्यास प्रत्येक व्यक्ति के द्वारा सिर्फ विचार से नहीं, वरन् कर्म एवं मन से भी होना चाहिए। वेद, उपनिषद्, बौद्ध, जैन तथा योग दर्शन ने पाँच सद्गुणों को मुख्य-सद्गुण के रूप में स्वीकार किया है, जिसका अभ्यास हमें करना चाहिए। वे सद्गुण हैं सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह। गाँधी ने भी पाँच पारम्परिक एवं मुख्य सद्गुणों को स्वीकार किया है तथा सामाजिक एवं राजनीतिक आवश्यकताओं के अनुसार अपनी व्याख्या के बाद उन्होंने एक और सद्गुण को मुख्य-सद्गुण की सूची में जोड़ा है। वह सद्गुण हैं निर्भीकता।

सत्य- गाँधी के अनुसार सत्य ही ईश्वर है। जो व्यक्ति ईश्वर के प्रति समर्पित है वह सत्य के प्रति भी समर्पित है। जब तक हम सत्य के व्रती नहीं होंगे तब तक हम नैर्सगिक भी नहीं हो सकते हैं। उन्होंने सत्य का पाठ अपने बचपन से ही सीखा था। गाँधी ने अपने सम्पूर्ण जीवन को सत्य के साथ प्रयोगों की श्रृंखला कहा है। उनके अनुसार, "There should

• एसोसिएट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग, दर्शन साह महाविद्यालय, कटिहार

be truth in thought, truth in speech and truth in action."

सत्य के साधक को ईश्वर में आवश्यक रूप से विश्वास होना चाहिए। क्योंकि गीता का कहना है कि एकाग्र चित उपासना तथा जीवन में आसक्तियों की उदासीनता से ही सत्य की प्राप्ति हो सकती है। सत्य सम्प्रभु सिद्धांत है, जिसमें अन्य सिद्धांत निहित है। यह हमारे संप्रत्यय का केवल सापेक्ष सत्य नहीं है वरन् यह निरपेक्ष सत्य भी है। यह शाश्वत सिद्धांत है। यह ईश्वर है।

सत्य के आविष्कार के लिए आत्म-विश्लेषण एवं आत्म-शुद्धता की आवश्यकता होती है। केवल नैतिक रूप से बलवान व्यक्ति ही सत्य का दर्शन कर सकता है। सामाजिक एवं नैतिक शुद्धता मनुष्य को विचार में सत्यता के बुरे शत्रुओं से दूर रखता है। कर्म एवं वचन में सत्य होना मन में सत्यता का स्वाभाविक एवं तार्किक परिणति है। गाँधीजी सत्यमेव जयते की उक्ति से बहुत ही प्रभावित थे। यह उनका विश्वास था कि केवल सत्य में ही आन्तरिक शक्ति है, जो सदा विद्यमान रह सकता है। वचन एवं कर्म में सत्यता की उत्पत्ति सह-प्राणियों के प्रेम से होती है। गाँधी के लिए सत्य एवं प्रेम दोनों एक-दूसरे से अवियोज्य है। हमें सत्य वचन का प्रयोग मुधर रूप में करना चाहिए। सत्य बोलना एक कला है जो निरन्तर प्रयास से ही पूर्ण होता है। गाँधी का विश्वास संस्कृत की इस उक्ति में है।

"सत्यम् ब्रुयात्, प्रियम ब्रुयात
ना ब्रुयात सत्यम् अप्रियम।।"

इस उक्ति की व्याख्या में उन्होंने कहा है, "In my opinion the Sanskrit test means that one should speak the truth in gentle language. One had better no speak it. If one can not do so in a gentle way meaning them by that them is not truth in a man who cannot control his tongue."

सत्यता का आदर्श गाँधी के सम्पूर्ण जीवन में परिवर्तित हुआ है। उनकी अपनी बात-चीत, भाषण, लेख तथा व्यवहार सभी सत्य के प्रयोग ही है। उन्होंने सापेक्ष सत्य तथा निरपेक्ष सत्य में अन्तर बतलाया है। सापेक्ष सत्य की अनुभूति असीम प्राणियों के द्वारा विशेष विचार एवं परिस्थिति के सन्दर्भ में होती है, जबकि निरपेक्ष सत्य का अस्तित्व दिक् एवं काल के परे हैं तथा यही ईश्वर है। ईश्वर को सत्-चित् आनन्द कहा गया है। उनमें सत्य, ज्ञान एवं आनन्द का संयोग है। सत्य में सभी ज्ञान निहित है तथा सभी ज्ञान ही शाश्वत आनन्द का उद्‌गम है। गाँधी के अनुसार हम ससीम प्राणी होने के कारण सापेक्ष सत्य के माध्यम से ही निरपेक्ष सत्य की प्राप्ति कर सकते हैं।

गाँधी के अनुसार प्रत्येक मनुष्य को यह अधिकार और सामर्थ्य है कि वह अपने लिए सत्य का निर्धारण कर सके। इसी आवश्यक गुण के कारण मनुष्य कसाई से भिन्न माना गया है। उसका नैतिक, सामाजिक तथा बौद्धिक उपकरण सत्य को जानने के लिए आवश्यक है। सत्य की प्राप्ति के लिए निरन्तर प्रयास, जीवन के अन्य रुचियों के प्रति उदासीनता सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रम्हचर्य के प्रति प्रतिज्ञा आवश्यक है। उनके अनुसार यह सभी नियम सत्य से निष्पादित होते हैं तथा अन्य सभी सत्य के सहायक साधन के रूप में ही प्रयुक्त होते हैं। गाँधी के अनुसार, "That truth is fixed and unalternable. It can never be destroyed. The soul like his can have but faint, flecting glimpses of absolute truth."

गाँधी के दर्शन में सत्य स्थिर एवं सम्पूर्ण है, लेकिन इसका ज्ञान गत्यात्मक तथा इसकी प्राप्ति आंशिक है। उनके अनुसार सत्याग्रह ही वह एकमात्र बल है, जिसके द्वारा सत्य की प्राप्ति हो सकती है। गाँधी ने स्पष्ट रूप में हमें सत्य के नैतिक अन्तर्भूत कठिनाइयों के सम्बन्ध में नहीं बतलाया है। सत्य का अभ्यास जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में होना चाहिए। सत्य के अभ्यास में स्वतंत्रता, सहिष्णुता तथा व्यवहार में विनम्रता निहित है।

अहिंसा- अहिंसा का शाब्दिक अर्थ है, किसी की हिंसा न करना तथा मारना नहीं। इस अर्थ में इस पद का प्रयोग उपनिषद्, बौद्ध धर्म, जैन धर्म तथा मनु के द्वारा किया गया है। अहिंसा की अत्यन्त ही कठोरवादी व्याख्या जैनियों के द्वारा की गई है। "सभी परिस्थितियों में सभी प्राणियों के लिए मनसा, वाचा, कर्मणा हिंसा का वर्णन है।" हिन्दू समाज के नियम निर्माता मनु ने भोजन तथा बलि के लिए पशुओं को मारने तक की अनुमति प्रदान की है। बल्कि आत्मरक्षा के लिए वे मनुष्य को भी मारने की स्वीकृति देते हैं, मनु ने बताया है कि साधारण व्यक्तियों के द्वारा इस नियम का पालन बहुत ही कठिन है। अतः उन्होंने कुछ छूट भी प्रदान की है।

इसके विपरीत गाँधी ने जैन धर्म और मनु के बीच का रास्ता अपनाया है। उन्होंने मनु के द्वारा प्रदत्त छूट को अस्वीकार किया है। इस सद्गुण के सम्बन्ध में गाँधी Tolstoy से बहुत ही प्रभावित थे। अगर हम वृक्ष की ऊँचाई पर चढ़ना चाहते हैं तब हमें आकाश को अपना उद्देश्य बनाना चाहिए। उन्होंने मनु की अपेक्षा जैन धर्म की अहिंसा को अपनाया है। लेकिन अपने व्यावहारिक जीवन में वे इस सिद्धांन्त के पालन में उतने कठोर नहीं थे। अहिंसा की उत्पत्ति हृदय की आन्तरिक अनुभूति एवं प्रेम से होती है। यह अहिंसा की सच्ची कसौटी है। जो व्यक्ति प्रेम की आन्तरिक पुकार को अपनाता है वह अवश्य ही सजीव प्राणियों की हिंसा से दूर रहने की चेष्टा करेगा। हमें यह कभी नहीं सोचना चाहिए कि हम अहिंसा का पालन पूर्णतया नहीं कर सकते हैं। हमें इसके पालन के लिए प्रयास करना चाहिए।

मात्रा अहिंसा न करना ही सही अहिंसा नहीं है, बल्कि यह हृदय के अन्दर से होना चाहिए। इसका निर्देशन क्रोध, घृणा तथा प्रतिशोध की भावना से नहीं होना चाहिए। अहिंसा वस्तुतः सबल के लिए है। यह निर्बल एवं डरपोक के लिए नहीं है। गाँधी ने कहा है, "My creed of non-Violence is an extremely active force. It has no room for cowardice or even weakness."

अहिंसा का मूल अर्थ नहीं मारने के निषेधात्मक अर्थ से है। लेकिन गाँधी ने इसका प्रयोग भावात्मक अर्थ में भी किया है। नहीं मारना उसी सीमा तक सद्गुण है, जहाँ तक कि यह प्रेम एवं सद्भाव को अभिव्यक्त करता है। उन्होंने कभी-कभी अहिंसा का अनुवाद प्रेम के रूप में भी किया है। अहिंसा सभी प्राणियों को अपनी ही आत्मा के समान व्यवहार करने का भावात्मक रूप है। गाँधी के लिए "आत्मवत् सर्वभूतेषु" अहिंसा सर्वोच्च सद्गुण है, अहिंसा परमोधर्मः। लेकिन यह सर्वोच्च सद्गुण क्यों है? गाँधी ने इसके कारण में कहा है कि अहिंसा के बिना सत्य की अनुभूति नहीं हो सकती है। क्योंकि उनके लिए सत्य ही ईश्वर है तथा यह सभी प्राणियों में निवास करता है तथा उन सबों को प्रेम के द्वारा एक सूत्र में बाँधता है। गाँधी ने कहा है कि जब हम सत्य को पाना चाहते हैं तब

इसे पाने का एकमात्र साधन प्रेम या अहिंसा ही है।

यह सर्वोच्च सद्‌गुण है क्योंकि अहिंसा जीवन की हत्या नहीं करने के रूप में सभी सजीव प्राणियों के प्रति अन्य सभी धर्मों की तार्किक पूर्व मान्यता है क्योंकि हम अपने पड़ोसी के प्रति किसी भी धर्म का निर्वाह तब तक नहीं कर सकते हैं जब तक कि वह जीवित नहीं रहे। अहिंसा, प्रेम के रूप में अन्य सभी सद्‌गुणों का जनक है।

अहिंसा एक जटिल पद है तथा समन्वित दर्शन है। यह दयालुता की एकमात्र क्रिया नहीं है। यह स्वयं में उन सभी सद्‌गुणों को सन्निहित करता है जो प्रेम से उत्पन्न होता है क्योंकि प्रेम इसके समान ही है। अहिंसा का उपदेश नहीं दिया जा सकता है, अपितु इसका अभ्यास करना है। जब अहिंसा सक्रिय हो जाती है तब यह अतिरिक्त वेग के साथ भ्रमण करता है तथा यह एक अलौकिक घटना हो जाती है। अहिंसा विस्तृत रूप से स्वागत योग्य तथा सम्पूर्णतय: आत्म बलिदान है। अहिंसा के अभाव में सत्य को खोजना तथा पाना दोनों ही असम्भव है। अहिंसा तथा सत्य इस प्रकार मिले हुए हैं कि व्यावहारिक रूप से दोनों को अलग करना सर्वथा असंभव है। दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू के समान है। अहिंसा साधन एवं सत्य साध्य है। साध्य को साधन के रूप में हमारी पहुंच के अन्दर होना चाहिए। अत: अहिंसा हमारा सर्वोच्च धर्म है। अगर हम साधन की चिन्ता करते हैं तो अपने अपने लक्ष्य पर देर या सबेर पहुंचने को बाध्य है।

इस प्रकार गाँधी दर्शन का अहिंसा सभी क्षेत्रीय, जातीय, धार्मिक और सांस्कृतिक सीमाओं को ऊपर उठाता है। यह केवल मानवता में ही व्याप्त नहीं है, वरन् सम्पूर्ण जीवित विश्व में व्याप्त है क्योंकि यह स्वीकार करता है कि प्रेम ही जीवन का नियम है। अहिंसा स्वयं में शक्ति धारण करता है इसका प्रभाव टिकाऊ, कालहीन तथा विश्वसनीय है। इसके निरन्तर अभ्यास एवं शाश्वत सजगता से कोई भी इसका प्रयोग सीख सकता है। अहिंसा शनै: विकास का एक पौधा है। यह अदृश्य रूप में लेकिन निश्चित ही विकसित होता है। अत: अहिंसा गाँधीवादी व्यवहार का मूलमंत्र है। यह केवल ऋषियों एवं गुफाओं में रहने वालों तक ही सीमित रहने वाला सद्‌गुण नहीं है बल्कि लाखों व्यक्ति के द्वारा अभ्यास करने योग्य है।

अस्तेय- अस्तेय का शाब्दिक अर्थ है चोरी नहीं करना। यह किसी भी व्यक्ति के धन को नहीं छीनने में निहित है। यह सद्‌गुण सम्पत्ति के समान अधिकार की मान्यता पर आधारित है। इस सद्‌गुण के पालन के सम्बन्ध में जैन दार्शनिक अधिक कठोरवादी थे। उनके अनुसार सम्पत्ति व्यक्ति का बाह्य जीवन है और इस सम्पत्ति को छीनने का अर्थ उसके जीवन को छीनना है। जीवन बिना किसी सम्पत्ति के संभव नहीं है। अगर अहिंसा का पालन करना धर्म है तो इस सम्पत्ति को हमें नहीं छीनना चाहिए। अस्तेय भी प्रेम की उत्पत्ति है। किसी वस्तु को प्रेम करना और उसकी सम्पत्ति को छीनना दो विभिन्न वस्तुएँ है।

गाँधी के अनुसार चोरी अन्य को घायल करता है, अत: यह बुरी है। उनके लिए इसका अर्थ केवल चोरी करने से ही स्वयं को दूर रखना नहीं है, बल्कि दूसरों के मूल्य पर शोषण के सभी प्रकार से अपने को दूर रखना है। शोषण में भी हिंसा उपस्थित है क्योंकि यह जीवन को नुकसान पहुँचाता है। उन्हीं के शब्दों में, "It means not only non-stealing but taking or keeping of things which we do not require is also a kind of

stealing, which must be shuned." जो व्यक्ति अस्तेय व्रत का पालन करता है, वह अपनी आवश्यकताओं में साहसिक कटौती ला सकता है। आज विश्व में व्याप्त चिन्ताजनक विपन्नता इस अस्तेय के सिद्धांन्त के उल्लंघन से ही हुई है। अस्तेय व्रत का पालन करनेवाला व्यक्ति कभी भी भविष्य में वस्तुओं के अधिग्रहण के बारे में नहीं सोचेगा। अस्तेय सिद्धांन्त का उपासक विनीत, गम्भीर, सजग तथा सरल आचरण वाला व्यक्ति होगा। गाँधी ने कहा है यदि तुम्हारे पास आवश्यकता से अधिक है और अन्य के पास आवश्यकता से कम है, तब अधिक रखने वाला व्यक्ति चोर है, गाँधीजी ने कहा था, "suggest that we are thieves in a way. If I take anything that I do not need for my own immediate use and deep it, I thieve it from sombody else."

अस्तेय व्रत का पालन भी सत्य में अन्तर्भूत है। बाह्य या भौतिक अस्तेय के अतिरिक्त मानसिक विचारों का भी अस्तेय होता है। गाँधी के अनुसार आवश्यकताओं के बिना वस्तुओं का अधिग्रहण भी अस्तेय है। अस्तेय व्रत का पालन मन, वचन एवं कर्म से होना चाहिए।

अपरिग्रह- अपरिग्रह का शाब्दिक अर्थ है कुछ स्वीकार नहीं करना। इस व्रत के सम्बन्ध में करीब-करीब विभिन्न सम्प्रदाय द्वारा कम या अधिक कठोर रूप में उपदेश दिया गया है तथा अभ्यास भी किया गया है। इस व्रत के अतिरूप का अर्थ है अपनी सभी स्वामित्व का त्याग करना। इसे अकिंचन व्रत के रूप में भी जाना जाता है, जिसका अर्थ है कुछ भी धारण नहीं करना, लेकिन इस व्रत का अतिरूप में पालन साधारण मनुष्यों के लिए असंभव है। गाँधी के लिए इसका अर्थ केवल अनावश्यक वस्तुओं को स्वीकार नहीं करने से है, जिसकी आवश्यकता उन्हें नहीं है। उन्होंने इस अनुशासन के सम्बन्ध में कहा है "Not to accumulate thing not necessary for a day."

गाँधी के अनुसार यह व्रत आत्मसमर्पण, सेवा तथा ईश्वर में विश्वास की माँग करता है। किसी वस्तु को जमा करने का अर्थ है भविष्य के लिए रखना। अगर हम ईश्वर के साम्राज्य में विश्वास रखते हैं तो हमें यह विश्वास होना चाहिए कि वह हमें प्रतिदिन का भोजन देगा अर्थात् हमें जिस वस्तु की आवश्यकता होगी वह ईश्वर प्रदान करेगा। क्योंकि प्रेम एवं जमा रखने की प्रवृति दोनों एक साथ नहीं हो सकती हैं। पूर्ण प्रेम शरीर सहित प्रत्येक वस्तुओं को छोड़ने की माँग करता है क्योंकि शरीर भी किसी अर्थ में धन ही है। व्यावहारिक जीवन में शायद ही हम पूर्ण प्रेम का अभ्यास कर सकें क्योंकि शरीर सदैव हमारे साथ नही रहेगा। मनुष्य केवल पूर्ण होने का अभ्यास कर सकता है। पूर्ण अपरिग्रह भी हमारे जीवित रहने तक अप्राप्य आदर्श है, लेकिन इसकी ओर हमें निरन्तर प्रयत्नशील रहना चाहिए।

अपरिग्रह के आदर्श का पूर्ण पालन यह माँग करता है कि मनुष्य को चिड़िया के समान ही भविष्य के लिए कुछ भी संचित नहीं करना चाहिए। इसकी प्राप्ति कुछ ही व्यक्तियों द्वारा हो सकती है। साधारण व्यक्ति को आलोचनात्मक रूप में अपने संयम की परीक्षा करनी चाहिए तथा उसे कम करने का प्रयास करना चाहिए। अपरिग्रह का सिद्धान्त विचार एवं वस्तुओं दोनों पर ही समान रूप से लागू है। अपरिग्रह का अर्थ है, अस्तेय के अर्थ का विस्तार तथा वैसी वस्तुओं का संयम जिसकी आवश्यकता ही नहीं है। निरपेक्ष अपरिग्रह, जो निरपेक्ष प्रेम की उत्पत्ति है, का अर्थ सम्पूर्ण त्याग या विरक्ति है। विचार के

संदर्भ में अपरिग्रह का अर्थ है कि वैसे तथाकथित ज्ञान जो हमें आन्तरिक जीवन के मूल्यों से दूर करते हैं तथा मानवता की सेवा से अलग करते हैं वह शुद्ध एवं सरल अज्ञान है जिसे हमें दूर करना चाहिए। इस प्रकार अपरिग्रह में व्यक्तिगत सम्पत्ति के सभी प्रकारों की पूर्ण समाप्ति निहित है। अपरिग्रह से संचित धन के संदर्भ में ट्रस्टीशिप का आदर्श निहित है। यह ट्रस्टीशिप मनुष्य की योग्यता तथा आवश्यकता से अध्कि आमदनी पर भी लागू होता है।

ब्रह्चर्य- ब्रह्चर्य का शाब्दिक अर्थ है ब्रम्ह के प्रति समर्पित जीवन का मार्ग। ब्रम्ह का अर्थ वेद एवं ईश्वर दोनों ही है। लेकिन ब्रह्चर्य का सामान्य अर्थ विषय-मात्रा का निरोध है। महात्मा गाँधी के अनुसार "Brachacharya means control of all the organs of sense."

ब्रम्हचर्य का वास्तविक अर्थ है, वह आचरण जो मनुष्य को ईश्वर के सम्पर्क में रखता है। यह आचरण सभी इन्द्रियों के पूर्ण नियन्त्रण में निहित है। सामान्यतया इसका अर्थ संतानोत्पत्ति के अवयव पर शारीरिक नियन्त्रण मात्र होता है। लेकिन यह इस पद का संकीर्ण अर्थ है। यह सभी इन्द्रियों में नियन्त्रण की माँग करता है क्योंकि वे सभी एक दूसरे पर निर्भर हैं। शारीरिक अंगों के नियन्त्रण के लिए मन का नियन्त्रण आवश्यक है। यौन-सम्बन्धी तृष्णा के नियन्त्रण के लिए स्वाद का नियन्त्रण आवश्यक है। यही कारण है कि गाँधी ने भोजन एवं पथ्य पर अपने सम्पूर्ण जीवन भर प्रयोग किया है। इस प्रयोग के द्वारा वे यौन संवेगों पर भोजन के प्रभाव का निरीक्षण करते हैं। अन्य व्रतों के समान ब्रम्हचर्य का भी पालन मन, वचन एवं कर्म से होना चाहिए। गीता में कहा गया है कि मूर्ख व्यक्ति जो अपने शरीर को नियंत्रित करता है, पर मन में बुरे विचार पालता है उसके लिए इस व्रत का पालन करने का प्रयास व्यर्थ है। अनुभव भी इस कथन को प्रमाणित करत है।

ब्रम्हचर्य में शरीर, मन तथा आत्मा की सुरक्षा संग्रहीत है। ब्रम्हचर्य व्रत का पालन ईश्वर में सजीव विश्वास के अभाव में सम्भव नहीं है। जो कि सजीव सत्य है। गाँधी के अनुसार हम समुचित रूप से यौन सम्बन्धी विकारों का नियन्त्रण नहीं कर सकते हैं। इसलिए वे युवा पीढ़ी के लड़के तथा लड़कियों को उत्पादक अवयवों के उचित उपयोग के सम्बन्ध में तथा उसके महत्व के बारे में शिक्षा प्रदान करने के पक्ष में थे। गाँधीजी हिन्दूशास्त्र की इस उक्तियों में अक्षरश: विश्वास करते हैं, ''ब्रम्हचर्येण तपसा देवा मृत्यु पाध्नत।'' गाँधीजी इस आदर्श का पालन करने के लिए शक्ति और संकल्प के साथ आजीवन प्रयास करते रहे। उनके अनुसार ब्रम्हचर्य असंभव आदर्श नहीं है क्योंकि उनका विश्वास है कि आत्मा सभी के लिए समान है। इस प्रकार यदि ब्रम्हचर्य गाँधी के लिए संभव है तब वह प्रत्येक मानव प्राणी के लिए संभव है। आवश्यकता है केवल उचित् प्रयास की। अत: मुख्य सद्‌गुणों में ब्रम्हचर्य का महत्वपूर्ण स्थान है। महात्मा गाँधी ने तो यहाँ तक कहा है कि ब्रम्हचर्य के बिना सत्य एवं अहिंसा का व्रत संभव नहीं है।

निर्भीकता- गाँधी ने पाँच मुख्य सद्‌गुणों में एक और सद्‌गुण निर्भीकता को भी जोड़ा है। हम इस सद्‌गुण का वर्णन उपनिषद् में भी पाते हैं। निर्भीकता साहसी का गुण है। गाँधी के अनुसार निर्भीकता उन कार्यकर्त्ताओं के लिए महत्वपूर्ण व्रत है, जिन्हें अहिंसात्मक संघर्ष में मृत्यु एवं कष्ट सहने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है। भय द्वैत के कारण उत्पन्न होता है। सत्यव्रती निर्भय होता है। गाँधी का कहना है कि अहिंसा के व्रती को बुराइयों को छोड़कर अन्य किसी से नहीं डरना चाहिए। हमें मात्र ईश्वर से डरना चाहिए। यह सद्‌गुण

प्रेम से निष्पादित है तथा आध्यात्मिक जीवन के लिए यह आवश्यक है। गीता के अनुसार ब्राम्हण का अनिवार्य लक्षण निर्भयता है। गाँधीजी का कथन है, "कायर व्यक्ति कभी नैतिकता का पालन नहीं कर सकता। सदाचरण और सद्गुण-ग्रहण के लिए भी अभय आवश्यक है। इसके बिना भला सत्य का अण्वेषण और प्रेम की साधना कैसे हो सकेगी।" निर्भीकता अन्य योग्य गुणों के विकास के लिए अत्यन्त ही आवश्यक है। निर्भीकता के अभाव में सत्य की प्राप्ति नहीं हो सकती है और न ही प्रेम का भाव उत्पन्न हो सकता है। निर्भीकता सभी बाह्य भय मृत्यु, शारीरिक दुर्घटना, बीमारी इत्यादि से मुक्ति दिलाकर मानव में धैर्य और साहस प्रदान करता है। पूर्ण निर्भीकता केवल उन्हीं के द्वारा प्राप्त की जा सकती है, जिसने सर्वोच्च तथा परम तत्व को अनुभूत कर लिया है।

इस प्रकार महात्मा गाँधी इन सद्गुणों की व्याख्या में मध्यम मार्ग को अपनाया है जो सामान्य व्यक्ति के लिए भी उपयोगी हो सकता है। इन सद्गुणों का संप्रत्यय कोई नया विचार नहीं है, वरन् इसकी जड़े, वेद, उपनिषद्, बौद्ध दर्शन, जैन दर्शन, मनु आदि में पायी जाती है। सभी सम्प्रदायों में पाँच सद्गुणों को मुख्य सद्गुण के रूप में स्वीकार किया गया है जबकि गाँधी छः सद्गुण मानते हैं। उन्होंने भारतीय दर्शन तथा शास्त्रों के व्यापक अध्ययन एवं अपने जीवन में अनेक प्रयोगों के बाद ही निर्भीकता को भी मुख्य सद्गुण के रूप में स्वीकार किया है। उन्होंने अपने जीवन के सभी क्षेत्रों में अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए इन व्रतों की साधना की है।

अतः गाँधीजी के इन सद्गुणों की व्याख्या से यही निर्देशित होता है कि प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर या आत्मा की अभिव्यक्ति है जो सभी में विद्यमान है। उन्होंने बौद्ध दर्शन के उस विश्वास को उसी रूप में स्वीकार किया है, जहाँ यह कहा गया है कि निरन्तर सजगता और प्रयास एक अच्छे सामाजिक तथा नैतिक जीवन के लिए आवश्यक है। इस प्रकार गाँधी ने अपने संकल्प को शक्ति प्रदान करने के लिए तथा नैतिक नियमों के पालन के लिए इन सद्गुणों की साधना पर बल दिया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. गाँधी, म. क., हरिजन, 20 फरवरी 1937
2. सिंह, प्रताप, 'गाँधी जी का दर्शन', रिसर्च पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली
3. धर्माधिकारी, दादा: सर्वोदय दर्शन, सर्व सेवा संध प्रकाशन, वाराणसी
4. Gandhi, M. K. Young India, 17th Sept. 1925
5. Gandhi, M. K. Young India, 16th June 1927
6. The Philosophy of Mahatma Gandhi, Dutta. D. M
7. The Social Philosphy of Mahatma Gandhi, Prashad. Mahadev, Gorakhpur

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

समकालीन हिन्दी कथा साहित्य में नारी अस्मिता के स्वर

• जानेश्वरी सिन्हा
•• कृष्णा चटर्जी

सारांश- स्वतंत्रता के पश्चात् पुराने मूल्य ध्वस्त हुए, नए जीवन मूल्य, संघर्ष जय-पराजय के साथ नए प्रतिमान में स्थापित हुए। आधुनिकता की चकाचौंध में व्यक्ति आत्मकेन्द्रित हो गया। समाज अनेक समस्याओं से ग्रसित होता चला गया। पुरूष सत्तात्मक समाज में स्त्री निरंतर दमित होती चली गयी। बुद्धिजीवियों द्वारा स्त्री-विमर्श पर अनेक विचार विमर्श हुए। नारी को कहीं प्रेरणा तो कहीं विवश नारी के रूप में प्रस्तुत किया गया। वैसे देखा जाए तो स्त्री का आत्म संघर्ष अपनी निरंतरता में प्रत्येक युग में विद्यमान रहा है। स्त्री विमर्श का सारोकार, जीवन और साहित्य में स्त्री मुक्ति के प्रयासों से है। स्त्री की स्थिति की पड़ताल, उसके संघर्ष की पीड़ा, उसकी अभिव्यक्ति, बदलते सामाजिक परिवेश में उसकी भूमिका, स्त्री मुक्ति प्रश्न, ज्वलंत प्रश्न है। भारतीय समाज अपनी बहुरंगी विशिष्टताओं के कारण प्रसिद्ध है। आधुनिकता के आइने में स्त्री-विमर्श पर विचार करते हुए हम पाते हैं कि स्त्रियाँ हमेशा ही पराधीन रही हैं और अपनी मुक्ति के लिए निरंतर संघर्षशील है।

मुख्य शब्द- अस्मिता, विमर्श, मूल्य, आत्मकेन्द्रित, दमित, वासना

प्राचीन काल से ही स्त्री किसी न किसी रूप में चर्चा में रही है। परन्तु स्त्री के विषय में, स्त्री की दृष्टि से विचार आधुनिक युग में प्रारंभ हुआ। आदिकाल में शौर्य वर्णन के शोर में, तो भक्तिकाल में कड़ी नैतिकता के बोझ तले स्त्री की आवाज दबी रही। वहीं रीतिकाल में स्त्री मात्र भोग विलास की वस्तु बनकर रह गयी। आधुनिक युगीन साहित्यकारों की दृष्टि इस ओर गयी। उन्होने स्त्री की पीड़ा को समझा और अपने साहित्य में उन्हें प्रमुख स्थान दिया। आधुनिक काल में स्त्री की दशा में युगान्तकारी परिवर्तन हुए। समकालीन हिंदी साहित्य में स्त्री अपनी जोरदार उपस्थिति दर्ज कराती नजर आती है। इस तरह 'नारी चेतना' देश और राष्ट्र की परिधि का अतिक्रमण कर सार्वभौमिक मानदण्डों से निर्दिष्ट हो रही है। महिलाओं में आ रही जागरूकता के परिणाम स्वरूप पुरूष नजरिए में भी बदलाव आया। सत्तर के दशक के बाद भारत में पश्चिम की तरह 'नारीवादी' आन्दोलन' दिखाई पड़ता है। स्त्री अपनी ज्वलंत समस्याओं से दो-चार होती दिखती है। पश्चिमी सभ्यता का खुलापन अब भारतीय स्त्रियों में भी नजर आने लगा। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पारिवारिक रिश्तों के साथ-साथ परिवार के स्वरूप में भी बदलाव आया। नारी के बिना परिवार की कल्पना संभव नहीं। देखा जाए तो

• शोधार्थी, शासकीय वि.या.ता.स्ना. स्व. महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)
•• निर्देशक, शासकीय वि.या.ता.स्ना. स्व. महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)

परिवार ही 'नारी शोषण' का केंद्र रहा है। अत: आज नारी पारिवारिक ढ़ांचे में परिवर्तन के साथ-साथ अपनी स्वतंत्रता की मांग करती नजर आती है।

नारी अस्मिता की स्थापना और गरिमा के काफी प्रयास हुए परंतु नारी को स्वतंत्रता एवं समानता प्रदान किए बिना यह असंभव था। परंपरागत नियमों एवं बंधनों को तोड़ना आसान नहीं था। बीसवीं सदी के छठे दशक के अंतिम पड़ाव में विद्रोह का तीखा स्वर दृष्टिगोचर होता है। समकालीन कथा-लेखिकाओं का नारी अस्मिता को मुखरित करने में महत्वपूर्ण स्थान है। नयी कहानी आंदोलन की प्रवृत्तियों को आत्मसात करके कहानी कला को एक प्रमाणिक स्तर देने वाली कथा लेखिकाओं में चार नाम चर्चित हुए- मन्नू भण्डारी, उषा प्रियंवदा, कृष्णा सोबती और शिवानी। इन लेखिकाओं ने भारतीय समाज के मध्यवर्गीय परिवारों के नारी चरित्रों की दोहरी स्थिति और मूल्यगत तनावों को चित्रित किया है। तत्कालीन कथा लेखकों से इन कथा लेखिकाओं की कहानियों में नारी का मन जीवंत रूप में उपस्थित हुआ है।

मन्नू भण्डारी ने अपनी रचनाओं में धार्मिक मान्यताओं की आड़ में होने वाले कुकृत्यों एवं कठोर सामाजिक बंदिशों में कैद अपनी अस्मिता तलाशती नारी का चित्रण किया है। 'ईसा के घर इंसान', 'एक कमजोर लड़की की कहानी', 'जीती बाजी की हार', 'गीत का चुंबन', 'यही सच है','एक प्लेट सैलाब', 'त्रिशंकु', 'अकेली', 'नौकरी' आदि कहानियों में आधुनिकता और पुरातनता के बीच फंसी नारी की त्रासदीपूर्ण जीवन-कथा चित्रित है। डॉ. सुरेश सिन्हा का मत है कि, "आज की नारी परिवर्तित सामाजिक एवं पारिवारिक संदर्भो में फिट है नहीं, उसकी वास्तविक स्थिति क्या है तथा नवोन्मेष एवं आधुनिक संचेतन में उसकी गति क्या है?" मन्नू भण्डारी की कहानियाँ इसे सशक्त रूप में अभिव्यक्त करती है।" 'आपका बंटी' एवं 'महाभोज' नामक उपन्यास में भी स्त्री अस्मिता का चित्रण है। लेखिका का यह कथन नारी जागृति का प्रतीक है- "आज मैं इतनी निर्बल और निरीह नहीं कि मुझे जीवन बिताने के लिए कोई सहारा चाहिए।" इस तरह स्त्री अपनी ताकत पहचान रही है वह विवाह संस्था का मोहताज नहीं।

इसी प्रकार उषा प्रियंवदा ने जीवन की सच्चाईयों का सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक एवं विश्लेषणात्मक चित्रण किया है। हिंदी के समकालीन महिला कथाकारों में अग्रणी उषा प्रियवंदा की प्रसिद्ध कहानियाँ है- 'वापसी', 'जिद्दी' और 'गुलाब के फूल', 'छुट्टी का दिन', 'मछलियाँ' इत्यादि। 'वापसी' कहानी में आधुनिक जीवनशैली के फलस्वरूप जीवन में आए, अकेलेपन एवं विवशता का भावपूर्ण चित्रण है। जिंदगी और गुलाब के फूल नामक कहानी में आत्मनिर्भरता से स्त्रियों के जीवन में आए बदलाव का चित्रण है। 'छुट्टी का दिन' कहानी में कामकाजी महिला के एकाकीपन की पीड़ा एवं 'मछलियाँ' कहानी में सुशिक्षित आत्मनिर्भर महिला के जीवन मूल्यों का चित्रण है। इस प्रकार उषा प्रियंवदा की कहानियों के पात्र आधुनिक नारी के बदलते संबंधों, आत्मनिर्भरता से आए बदलाव, एकाकी जीवन की विषमता इत्यादि का गहन विश्लेषण है।

हिंदी की समकालीन कथा लेखिकाओं में कृष्णा सोबती का विशिष्ट स्थान है। 'स्त्री अस्मिता' की पहचान उनके लेखन की विशेषता है। उनकी रचनाओं में एक अलग ही स्त्री छवि उभरकर सामने आई है। 'सिक्का बदल गया', 'डार से बिछुडी', 'मित्रों मर

जानी', 'ऐ लड़की', 'सूरजमुखी अंधेरे में' इत्यादि कृतियों में नारीवादी चेतना का प्रखर रूप परिलक्षित होता है। कृष्णा सोबती का यथार्थवादी नजरिया 'बोल्डनेस' उनकी खास पहचान है। डॉ. पुष्पपाल सिंह के अनुसार, "कृष्णा सोबती के समस्त साहित्य में उनकी दो कहानियाँ 'सिक्का बदल गया' तथा 'मित्रों मरजानी' का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। इन दोनों रचनाओं को कालजयी रचनाएँ माना जा सकता है।"

शिवानी 'गौरा पंत' का नाम महिला कथाकारों में अग्रगण्य है। उन्होंने अपनी कहानियों में न केवल नारी जीवन की विसंगतियों को व्यक्त किया है अपितु नारी के टूटन, घुटन और संघर्ष को भी व्यक्त किया। अपने महिला संघर्ष को एक नया आयाम दिया साथ ही अपने अस्तित्व और अस्मिता के लिए पुरूष प्रधान समाज में भटकती नारी को एक नई राह दिखाई। आपकी प्रमुख कहानियाँ हैं'- 'चिरस्वयंवरा', 'स्वयंसिद्धा', 'दो सखियाँ', 'अपराजिता', 'लाल हवेली', 'भिक्षुणी', 'करिए छिमा', 'अपराधी कौन', 'कस्तूरी मृग' इत्यादि। शिवानी की कहानियों की विशेषता है कि उनमें हताशा पराजय, आत्मपीड़ा, समपर्ण का पुट नहीं मिलता वरन् उनके नारी पात्र बनी बनाई कसौटी को तोड़ने एवं समाज में अपनी अस्मिता बनाने हेतु तत्पर दिखाई देती है। साथ ही चुनौतियों एवं जीवन संघर्षों से जूझती लक्ष्य प्राप्ति की ओर अग्रसर होती है। भोगे हुए यथार्थ का चित्रण शिवानी की कहानियों की प्रधान विशेषता है। 'लाल हवेली' और 'एक्सीडेण्टल' कहानी में जीवन-यथार्थ और संवेदनाओं के यथार्थ के बीच की स्थिति का चित्रण है। नगरीय और पहाड़ी अभिजात्य जीवन से संबद्ध नारी मनोविज्ञान की पारखी शिवानी अपनी काव्यात्मक भाषा के कारण अपनी ओर आकर्षित करती है।

ममता कालिया की रचनाओं में जीवन-दृष्टि की तलाश के साथ-साथ सामाजिक समस्याओं और प्रक्रियाओं से गुजरते हुए रचनात्मक दृष्टि का आग्रह मिलता है। समाज के विभिन्न वर्गों में शोषित नारी का प्रबल आक्रोश, विभिन्न मनःस्थिति का चित्रण, निर्भिकता एवं तीखे तेवर का चित्रण ममता कालिया के साथ-साथ व्यंग्यपरक चुटीली शैली भीतर तक भेद जाती है। स्त्री समस्या के अतिरिक्त अन्याय सामाजिक विसंगतियों का पर्दाफाश भी व्यंग्यात्मक धरातल पर हुआ है। ममता कालिया ने नारी मनोविज्ञान का सूक्ष्म निरीक्षण किया है तभी तो 'बेघर' एवं 'नरक दर नरक' उपन्यास में यौन अतृप्ति एवं कामवासना का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। आपका साहित्य सृजन नारी जीवन की उत्कंठा, हताश एवं यौन उत्पीड़न पर केंद्रित है। भाषा-शैली शिल्पगत चमत्कार से बोझिल न होकर सहज सरल है। आपका नजरिया भावात्मक कम बौद्धिक अधिक है। समकालीन लेखिकाओं ने नारी अस्मिता को भिन्न भिन्न कोणों से देखा।

सन् सत्तर के बाद की महिला कथा लेखिकाओं में विशिष्ट स्थान रखती हैं मृदुला गर्ग। नारी के प्रति बदले दृष्टिकोण को लेकर लेखिका एक खास बौद्धिक तेवर के साथ उपस्थित होती है जहाँ रोमैंटिक भावुक दृष्टि से नकारती वैचारिकता के धरातल पर संबंधों की सूक्ष्म परतों को खोलती है। दो स्त्री के बीच के संबंधों को आपने नए कोण से देखा है। 'डैफोडिल्स जल रहे हैं' संग्रह की कहानियाँ सर्वकालिक प्रश्नों से जुड़ी हुई है। इसलिए कथा का कैनवास विस्तृत है। इसमें सामाजिक रूढ़ियों एवं विसंगतियों का पर्दाफाश व्यंग्यात्मक धरातल पर हुआ है। मृदुला गर्ग ने पिछड़ी, थोथी और शोषक

नैतिकता के विरूद्ध आवाज उठाकर सेक्स के खुलेपन का चित्रण किया है, 'कितनी कैदें' कहानी के माध्यम से। यही कारण है कि सेक्स के धरातल पर भी नारी के द्वंद्व का बारीक विश्लेषण हुआ है जहाँ एक ओर शरीर तो उपस्थित है पर मन किसी नये की तलाश में रत है। इसी तरह 'टुकड़ा-टुकड़ा आदमी' संग्रह की अधिकांश कहानियाँ उच्च मध्यवर्ग से संबद्ध है, जो निम्न वर्ग को हेय दृष्टि से देखता है साथ ही इस संग्रह की कहानियों में ओढ़ी हुई सभ्यता पर करारा व्यंग्य है। डैफोडिल्स जल रहे हैं, शीर्षक कहानी में दो स्त्रियों की आकस्मिक मुलाकात फिर दोनों में हमदर्दी, स्वेच्छा से जीवन वरण कर अपनी-अपनी लालसा का चित्र उकेरती दिखती है। इस तरह स्वतंत्र अस्तित्व का निर्धारण करती यह कहानी अस्तित्ववादी दर्शन से प्रभावित जान पड़ती है।

इसी तरह सातवें दशक की महत्वपूर्ण कथाकार हैं, 'मृणाल पांडे'। उनकी कहानियाँ हिंदी जगत में अपने अलग तेवर के लिए जानी जाती है। जीवन को देखने का बहुविध नजरिया, वैचारिक तीखापन, घिसी-पिटी सामाजिक मर्यादाएँ, सड़ी-गली परंपराएँ और कदम-कदम पर व्यक्ति का विकास रोकने वाले वर्जनाओं एवं परंपराओं पर प्रहार करती हुई उनकी कहानियों में एक ओर जहाँ सामाजिक अन्तर्विरोधों से टकराहट है वहीं मानवीय मूल्यों से लगाव भी महसूस कराती हैं। 'मृणाल पांडे' ने भारतीय स्त्री के आवाज को मुखर किया। उन्होने विश्व साहित्य एवं स्त्री आंदोलन का गहन अध्ययन कर उसकी व्याख्या की। उनकी रचनाओं में 'नारी मुक्ति' की छटपटाहट है। भूमंडलीय के इस दौर में उन्होने नारी की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक एवं राजनीतिक स्थितियों को अपनी रचनाओं का केन्द्रिय विषय बनाया। दरम्यान, एक नीच ट्रैजेडी, एक स्त्री का विदागीत, यानी कि एक बात थी, बचुली चौकीदारिन की कढ़ी, 'चार दिन की जवानी तेरी' आदि कहानी संग्रह में मृणाल जी समकालीन स्त्री विमर्श की एक नयी परंपरा का सूत्रपात करती हैं। उनकी रचनाएँ मानव मूल्यों से समझौता नहीं करती बल्कि समकालीन यर्थाथ को सामने रखकर संघर्ष की प्रेरणा देती हैं।

समकालीन लेखिकाओं की कतार लंबी है जो लीक से हटकर लिख रही हैं। स्त्री पुरूष संबंधों को केंद्र में रखकर उनकी बारीकियो को उधेड़ती 'शशि प्रभा शास्त्री' की सहजता सहज ही आकर्षित करती है। परंपरागत रूढ़ियों और नैतिकता को नकारकर स्थितियों के भीतर छिपे सही रूप का जायजा लेना उनका मकसद रहा है। यही कारण है कि उनके नारी पात्र स्वतंत्रता की इच्छा के साथ-साथ पुरानी मान्यताओं और जकड़बन्दियों को तोड़ने की कोशिस करते हैं। परंतु वे न तो पूरी तरह स्वतंत्र हो पाते हैं और न ही परंपरा को तोड़ पाते हैं। लेखिका ने नारी के अन्तर में छिपी इच्छाओं, अतृप्त लालसाओं पर आदर्श भावुकता का पर्दा न डालकर उसका सूक्ष्म एवं यथार्थ रूप प्रस्तुत किया है। नौकरीपेशा नारी किस तरह समाज द्वारा शोषित होती है उसे शंकित निगाहों से देखा जाता है इसे गहराई तक महसूस कर लेखिका ने स्वर दिया। 'अनुत्तरित' संग्रह की अधिकांश कहानियां इसी कोटि की है। इसके अतिरिक्त अमलतास, नार्वे, सीढ़ियाँ, परछाइयों के पीछे, क्योंकि, ककरीखा इत्यादि उपन्यासों में नारी पीड़ा और संघर्षों का चित्रण है।

व्यापक सामाजिक परिवेश में आम कथानकों को लेकर वक्र अभिव्यक्ति देती हैं, 'चित्रा मुद्गल'। महानगरीय जीवन के निम्न और मध्यवर्गीय चरित्रों को लेकर उनके

अन्तर्द्वन्द्व, संत्रास, भय, असुरक्षा का भाव, यांत्रिकता इत्यादि का चित्रण उनकी रचनाओं में देखा जा सकता है। निम्न वर्ग में आर्थिक दबावों के तहत जन्मी संघर्षशीलता और शोषण से मुक्त होने की चाहत लिए नारी का संघर्ष जिस रूप में विवेचित विश्लेषित होकर कहानियों में स्थान ग्रहण करता है वह सहज ही पाठक को गहरे तक छू जाता है। 'जहर ठहरा हुआ' और 'लाक्षागृह' दोनों ही संग्रह की कहानियाँ इन विशिष्टताओं से युक्त है। 'केंचुल', 'भूख', 'मामला आगे बढ़ेगा' और 'त्रिशंकु' आदि कहानियाँ निम्नवर्गीय वैशिष्ट्य से युक्त है। 'मामला आगे बढ़ेगा वर्ग मानसिकता पर आधारित कहानी है। इसमें एक ओर निम्न तबके के मेहनतकश ईमानदार लोग हैं जिनमें वर्ग सुलभ निश्छलता, प्रेमभाव सहज विश्वास जैसी मानवीय संस्पर्श गहरे रूप में विद्यमान है। तो दूसरी ओर उच्च वर्ग है जिसमें पुरूष और स्त्री दोनों में ही चारित्रिक भिन्नता के दर्शन होते हैं। मानवीयता जहाँ मृतप्राय है। निर्ममता अमानवीयता ने संवेदनाओं को खोखला कर दिया है। इन्हीं दो विरोधों के बीच कहानी आगे बढ़ती है। भाषा और संवाद में स्थानीय रंग के साथ-साथ बम्बइया 'टच' भी है।

नारी जीवन की विसंगतियों को विविध आयामों में अनुभूति की गहराई तक ढ़ाला है सुधा अरोड़ा ने। इनके चरित्रों में निर्णय लेने की अद्भूत क्षमता परिलक्षित होती है। यही कारण है कि लेखिका नई कहानी के दौर के 'मैनरिज्म' से दूर रहती है। इनकी कहानियाँ आंतरिक संघर्ष की उपज है जो कथा को गति प्रदान करती है। 'आग', 'घर', 'एक सेंटिमेंटल की डायरी', 'बगैर तराशे हुए' आदि अनेक कहानियों में चेतना के विस्तार को इंगित करती है प्रतीत होती है।

इसी तरह नमिता सिंह व्यापक सामाजिक जीवन को आधार बनाकर एक खास दृष्टिकोण के साथ कथा क्षेत्र में उपस्थित होती हैं। इनकी कहानियाँ वैचारिक है जो एक निश्चित लक्ष्य को लेकर चलती है। राजनैतिक भ्रष्टाचार, वर्ग वैषम्य, आर्थिक शोषण, मध्यवर्गीय रिश्तों की विसंगतियाँ, नारी का आधुनिक सचेतन रूप, निम्न तबके में आयी जागरूकता और विद्रोही वृत्ति आदि से लेखिका आंदोलित ही नहीं होती वरन् रचनात्मक धरातल पर स्वर भी देती है।

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि समकालीन साहित्यकारों ने स्त्री पक्ष के विविध पहलुओं को चित्रित किया है। प्रमुख रूप से लेखिकाओं ने यौन बोध, यौन विकृतियों एवं दासित काम-कुण्ठा को अपनी रचनाओं में प्रमुखता दी। साथ ही उन्होंने ऐसे समाज की कल्पना की जिसमें स्त्री स्वतंत्रतापूर्ण जीवन जी सके। उपरोक्त लेखिकाओं के अलावा अन्यान्य लेखिकाओं ने भी स्त्री अस्मिता पर अपनी लेखनी चलाई है जैसे, मंजुल भगत, इन्दुबाली, अर्चना वर्मा, पुष्पा भारती, निरूपमा सेवती, अचला वर्मा, उषा किरन खान, उषा महाजन, निर्मला अग्रवाल, ऋतु शुक्ल, देवकी अग्रवाल इत्यादि। साथ ही पुरूष कहानीकारों ने भी इस दिशा में सार्थक प्रयास किए हैं जैसे कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, राजेन्द्र यादव जी ने अपनी कहानियों में दाम्पत्य जीवन के टूटने से उपस्थित परेशानियों को उकेरा है। रमेश बक्षी, जगदीश चतुर्वेदी, सुरेन्द्र चोपड़ा, माहेश्वर और पृथ्वीराज इत्यादि लेखकों की कहानियों में विवाह संबंधी नयी सोच विकसित हुई है। साथ ही हम पाते हैं कि समकालीन कथा लेखन में पात्र पारिवारिक रिश्तों के अलगाव से उत्पन्न भयावह

स्थितियों का चित्रांकन है। मात्रात्मक दृष्टि से यह दौर काफी उत्सावर्धक रहा है, महिला कथा लेखिकाओं के योगदान पर विस्तृत विवेचना की गई है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. सिंह, पुष्पपाल, समकालीन हिंदी कहानी
2. शंभुनाथ, सामाजिक क्रांति के दस्तावेज, भाग-2
3. मालती,के. एम. स्त्री विमर्श : भारतीय परिप्रेक्ष्य
4. प्रकाश अल्का, नारी चेतना के आयाम
5. शर्मा, राजरानी, हिंदी उपन्यासों में रूढ़मुक्ति नारी
6. राकेश कुमार, नारीवादी विमर्श

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

वृद्धा अवस्था एक समाजशास्त्रीय अध्ययन

• दयाशंकर सिंह यादव

सारांश- वृद्धावस्था को रोकने के लिए कितना भी प्रयास किया जाय चाहे वह चिकित्सकीय प्रयास हो या सरकारी प्रयास हो या मनोवैज्ञानिक या जैविक प्रयास, वृद्धावस्था में एक दिन सबको पहुँचना है। वृद्धावस्था एक ऐसा कटु सत्य है जिससे कोई भी आज तक बचा नहीं। जैसे-जीवन लेने पर मृत्यु को स्वीकार करना ही पड़ेगा, शिशु बड़ा होकर युवा और उसके बाद वृद्ध होगा ही। यह एक स्वाभाविक एवं प्राकृतिक प्रक्रिया है। हाँ, समस्या है एवं प्रश्न भी, कि कैसे वृद्धावस्था में होने वाली शारीरिक, मानसिक, सामाजिक समस्याओं का उन्मूलन किया जाय? अर्थात् वृद्धावस्था की समस्या का समाधान क्या है? अतः अनिवार्य रूप से वृद्धावस्था की समस्या पर विचार करना होगा और इसका समाधान ढूँढ़ना होगा ताकि हमारी वरिष्ठ, ज्येष्ठ एवं सम्माननीय पीढ़ी की दशा इतनी कारूणिक न हो।

मुख्य शब्द- जीवन, जन्म, मृत्यु, शारीरिक विकास

जीवन जन्म से मृत्यु तक का शारीरिक विकास की एक प्रक्रिया है। जो कुछ पूर्व निर्धारित चरणों से होकर गुजरता है। जैसे शैशव अवस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था, युवा अवस्था, वयस्क या प्रौढ़ावस्था तथा वृद्धावस्था है। युवावस्था मे विकास प्रक्रिया धीमी पड़ने लगती है और प्रौढ़ावस्था तक पहुँचते-पहुँचते लगभग थम जाती है। युवा अवस्था से प्रौढ़ावस्था तक का दौर जैविक, सामाजिक व आर्थिक दृष्टियों से उत्पादन, दायित्व निर्वाह या जो कुछ पूर्व मे संचित या संग्रहित किया गया है, उसे लौटाने या खर्च करने का दौर है। वृद्धावस्था जीवन प्रक्रिया का अंतिम चरण है। यह शारीरिक एवं सामाजिक दृष्टि से ह्रास का दौर है जिसमे व्यक्ति न केवल शारीरिक व मानसिक दृष्टि से कमजोर होता जाता है अपितु सामाजिक व आर्थिक दृष्टि से शक्ति हीन भी होता जाता है।

यह एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें वृद्ध व्यक्ति अपने बच्चों से शारीरिक, नैतिक, वित्तीय एवं भावनात्मक सहारे की जरूरत महसूस करते हैं। परंतु युवा पीढ़ी अपने माता-पिता को एक बोझ समझकर हमेशा उनकी उपेक्षा करते रहते हैं। यहां तक कि घर का कोई भी सदस्य उनकी ओर ध्यान भी नहीं देता है एवं हर बात पर उनका तिरस्कार किया जाता है। वृद्ध व्यक्तियों के प्रति उनका रवैया अवमाननापूर्ण और असम्मानजनक होता है। जब भी कोई ऐसी बात होती है तो वृद्ध व्यक्ति निराशा के सागर में डूब जाते हैं। यदि किसी अच्छे कार्य के लिए वो परामर्श भी देते हैं तो उन्हें ऊंची आवाज में बोलकर अपमानित किया जाता है, जिससे वो कभी-कभी कुंठाग्रस्त हो जाते हैं। इस अवस्था में उन्हें अपने सगे-संबंधियों से प्रेम भावना की जरूरत होती है। किंतु युवा पीढ़ी उनसे दूर रहना शुरू कर देती है। जिससे वे अंदरूनी आघात से टूट जाते हैं कभी-कभी अपने आपको खुद बोझ महसूस करने लगते हैं।

• एसोसिएट प्रोफेसर समाजशास्त्र, सकलडीहा पी.जी.कालेज सकलडीहा, चन्दौली

किस आयु को वृद्धता की पहचान का आधार माना जाये, यह बहुत कुछ हद तक जीवन की गुणवत्ता व स्वास्थ्य की दशा पर निर्भर करता है। वैसे कई देशों मे 65 वर्ष की आयु के ऊपर के व्यक्ति को वृद्ध कहा जाता है। भारत मे यह आयु 60 वर्ष है। इसलिए वर्तमान मे इसे वृद्धावस्था की पहचान का विश्वसनीय आधार माना जा सकता है। संयुक्त राष्ट्र संघ का भी मानना है कि 60 वर्ष की आयु से आगे की ओर बढ़ाव जनसंख्या वृद्धावस्था की ओर गमन की पहचान है। अत: वृद्ध से यहाँ हमारा आशय उस व्यक्ति से है जिसने 60 बर्ष की आयु पार कर ली है। वर्ष 2011 की जनगणना के आँकड़ों के अनुसार, भारत में 60 वर्ष से अधिक आयु के लोगों का प्रतिशत कुल जनसंख्या में लगभग 9 प्रतिशत है।

वृद्धावस्था का सामाजिक आधार- वृद्धावस्था की शुरूआत होने पर महिलाओं के जीवन में महत्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन होते हैं- इस तथ्य के संबंध में कुछ सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये हैं जो यह उद्घाटित करते हैं कि किसी महिला में वृद्धावस्था में सामाजिक दृष्टि से क्या-क्या परिवर्तन होते हैं। वे सिद्धान्त निम्नलिखित हैं-

1. सब कल्चर सिद्धान्त- व्यक्ति का समाज के अंतर्गत परिवार, समूह, समुदाय में एक विशेष स्थान है।[1] व्यक्ति की कुछ न कुछ भूमिकायें इन सबसे जुड़ी रहती हैं लेकिन जब वह वृद्धावस्था में पहुँचता है तब उसे कार्यों, भूमिकाओं, आय प्राप्ति, गतिशीलता, रचनात्मक भूमिकाओं, सामाजिक संबंधों में एक विशेष प्रकार का परिवर्तन आता है, जैसे वह पहले जितना 'एक्टिव' नहीं रह पाता क्योंकि वह शारीरिक रूप से कमजोर होने लगता है। इसी प्रकार क्रमश: उसकी क्रियाओं में महत्वपूर्ण परिवर्तन होने लगते हैं।

अरनॉल्ड रोज (1965) ने यह प्रस्तावित किया कि बुजुर्ग अपनी ही उपसंस्कृति में रहना पसन्द करते हैं। जैसे-जैसे वृद्धों की उम्र में बढ़ोत्तरी होती जाती है वे अपने ही उम्र वालों के बीच अंत:क्रियायें करना, व्यवहार करना, भूमिकाओं का निर्वाह करना आदि पसंद करने लगते हैं। वे अपने से छोटे उम्र वालों से विशेष प्रकार का व्यवहार करना, हम उम्र वालों की तुलना में कम पसंद करते हैं। इस सिद्धान्त के द्वारा यह निष्कर्ष निकलता है कि वृद्धावस्था की अवधारण एक विस्तृत अवधारणा है जिसमें विभिन्न प्रक्रियायें शामिल हैं। इस प्रक्रिया में मुख्य रूप से मानव शरीर में शारीरिक परिवर्तन, मानसिक परिवर्तन, मनोवैज्ञानिक परिवर्तन तथा सामाजिक संबंधों में परिवर्तन सम्मिलित है।

जब व्यक्ति वृद्धावस्था की तरफ अग्रसर होने लगता है तो उसके व्यवहार में गम्भीरता आने लगती है। उसके पास हर घटना, कार्य इत्यादि का अनुभव हो जाता है और वह बहुत सारे विषयों का विशेषज्ञ हो जाता है एवं वह अब जो भी निर्णय लेता है बहुत सोच समझ कर लेता है। दूसरी चीज कि सभी वृद्धों की पीड़ा लगभग एक जैसी होती है इसलिए एक बुजुर्ग समस्त बुजुर्गों की समस्या समझता है और सामंजस्य बिठाने में सफल होता है। अर्थात् 'सब कल्चर सिद्धान्त' का सार यह है कि वृद्ध महिलायें, वृद्धों का साथ, उनकी संस्कृति, उनसे मेलजोल ज्यादा पसंद करती हैं और उसी में अपने को सहज महसूस करती हैं क्योंकि उनकी आपसी समस्यायें एक जैसी होती हैं। वैसे वृद्धावस्था को परिभाषित करना अत्यन्त कठिन है, क्योंकि 'वृद्ध' शब्द का अभिप्राय अलग-अलग व्यक्तियों के संदर्भ में भिन्न-भिन्न होता है।

2. द डिसइंगेजमेण्ट सिद्धान्त- जैसा कि इस सिद्धान्त के नाम से ही स्पष्ट है कि व्यक्ति

जब वृद्धावस्था की तरफ अग्रसर होने लगता है तब वैसे-वैसे वह समाज में अपनी भूमिकाओं को त्यागकर सामाजिक उत्तरदायित्व से विमुख होने लगता है। इस सिद्धान्त का सरलीकृत सार यह है कि व्यक्ति समस्त उत्तरदायित्वों से विमुख होकर 'सन्यास आश्रम' की ओर, अपने अंतिम लक्ष्य (मोक्ष प्राप्ति) की तरफ अग्रसर होने लगता है। इस सिद्धान्त के प्रतिपादकों में क्लेन कमिंग तथा विलियम हेनरी (1968) का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। कमिंग व हेनरी इसे एक अपरिहार्य प्रक्रिया मानते हैं जिसके अंतर्गत व्यक्ति का समाज के सदस्यों से संबंध शिथिल पड़ने लगते हैं, परिणामतः उसके व्यवहार में गुणात्मक परिवर्तन आ जाता है। पी.वी. काणे का कहना है कि 50 वर्ष की अवस्था हो जाने पर व्यक्ति संसार के सुख एवं वासनाओं की भूख से ऊब उठता था तथा वन की राह ले लेता था, जहाँ वह आत्म-निग्रही, तपस्वी एवं निरपराध जीवन व्यतीत करता था।[2]

डिसइंगेजमेण्ट की प्रक्रिया में समाज में व्यक्ति की सक्रिय सहभागिता में मंदगति से ह्रास होता है, धीरे-धीरे व्यक्ति अपने को समाज से अलग-थलग महसूस करने लगता है तथा मोक्ष की तरफ अग्रसर होने लगता है। व्यक्ति यह विचार करने लगता है कि उसकी उम्र ज्यादा हो चुकी है एवं उसकी पिछली भूमिकाओं का निर्वाह करने के लिए परिवार में पुत्र-पुत्री, बहू-बेटे हैं। अतः पारिवारिक जीवन में इन बातों को लेकर संघर्ष न हो वह स्वयं ही अलग-थलग हो जाता है।

परन्तु इस सिद्धान्त के विरोध में यह आपत्ति उठायी जाती है कि यह सिद्धान्त 'समाजशास्त्रीय एजिंग' की अत्यंत सरलीकृत व्याख्या करता है क्योंकि समाज में बहुत से ऐसे बुजुर्ग व्यक्ति हैं जो वृद्धावस्था में भी अपने को समाज में विभिन्न सामाजिक भूमिकाओं से पृथक नहीं करना चाहते। इस संबंध में कुछ राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय उदाहरणों को प्रस्तुत किया जा सकता है, प्रसिद्ध बांग्ला लेखिका 'महाश्वेता देवी' को हाल ही में 'मैग्सेसे पुरस्कार' से सम्मानित किया गया है।[3] उनकी आयु 72 वर्ष हो चुकी है और एक समाज-सुधारक के रूप में वह सदैव संघर्षरत रही हैं। जनजातियों एवं पिछड़े वर्ग की महिलाओं के लिए उन्होंने जो कार्य इस उम्र में किया है, आम लोगों के लिए वैसा सोचना भी मुश्किल है। उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार भी मिल चुका है।

शरीर बूढ़ा हो जाता है किन्तु यदि मस्तिष्क का पूरा उपयोग किया जाय तो वह कभी भी बूढ़ा नहीं होता। पश्चिमी जगत तो बहुत से ऐसे उदाहरणों से पटा पड़ा है, जहाँ कलाकारों, लेखकों एवं अविष्कारकों की सच्ची प्रतिभा तभी प्रस्फुटित हुई, जब वे 70-80 वर्ष के हो गये। हमारे देश में भी ऐसी प्रतिभाओं की कमी नहीं है चाहे वह सामाजिक क्षेत्र हो या राजनैतिक, कला जगत हो या आर्थिक-सांस्कृतिक क्षेत्र हो, जहाँ वृद्ध पुरूष/महिलायें इसी उम्र में सफलता के शिखर पर पहुँचने में सफल हुए। एक नाम जोहरा सहगल (उम्र 88 वर्ष) का भी है जो अभिनय के क्षेत्र में आज अपना लोहा मनवा रही हैं। कला के क्षेत्र में लता मंगेशकर, आशा भोसले, एम.एफ. हुसैन, सुब्बुलक्ष्मी, सतीश गुजराल, दीना पाठक इत्यादि, राजनैतिक क्षेत्र में हमारे वर्तमान पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी, शीला दीक्षित, एल.के. आडवाणी, पी.वी. नरसिंह राव, ज्योति बसु, मारग्रेट अल्वा, नजमा हेपतुल्ला आदि, सामाजिक क्षेत्र में मेधा पाटकर, सुन्दरलाल बहुगुणा, महाश्वेता देवी इत्यादि हस्तियों ने अपना बहुमूल्य योगदान किया है।

आयु वस्तुत: एक मनोस्थिति है। बढ़ती आयु का कटु सत्य जिंदगी के दरवाजे बंद करने की भरपूर कोशिश करता है, लेकिन जीवट वाले व्यक्ति अपने अपूर्व साहस से नये कीर्तिमान बनाकर वृद्धावस्था के बावजूद अपनी स्मृति की छाप छोड़ ही जाते हैं, चाहे वे प्रसिद्ध वैज्ञानिक एवं राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम हों या शहनाई वादक भारत रत्न बिस्मिल्ला खाँ हों। इन विभूतियों ने अपनी वृद्धावस्था को युवावस्था से ज्यादा सफल बनाया। अत: यह कोई निष्कर्ष नहीं है कि वृद्धावस्था मृत्यु या मोक्ष का अंतिम पड़ाव है बल्कि व्यक्ति चाहे तो अपने साहस एवं आत्मविश्वास से बुढ़ापे में भी तमाम मंजिलों और शिखरों को छू सकता है।

3. ऐक्टिविटी सिद्धान्त- इस सिद्धान्त के समर्थकों का यह मानना है कि बुजुर्गों को क्रियाशील रखकर उन्हें मनोवैज्ञानिक दृष्टि से स्वस्थ रखा जा सकता है। जार्ज एल. मैडाक्स (1963) ने इस सिद्धान्त की वकालत की और यह तर्क प्रस्तुत किया कि जो व्यक्ति जितना अधिक क्रियाशील होगा, वृद्धावस्था में उसका मनोबल भी उतना ही अच्छा होगा। अमेरिका में सन् 1995 में सम्पन्न हुए सम्मेलन में यह विचार व्यक्त किया गया कि बुजुर्गों की सामाजिक-मनोवैज्ञानिक समस्याओं का समाधान 'व्यावसायिक उपचार' के द्वारा किया जा सकता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए भारतीय सरकार नौकरियों में अवकाश ग्रहण करने की उम्र-सीमा में वृद्धि तथा अवकाश-प्राप्त व्यक्तियों को कुछ वर्षों के लिए पुन: सेवा में लेने के प्रस्ताव पर विचार कर रही है।

वृद्ध महिलायें कुछ रचनात्मक कार्य करके जैसे- छोटे-बच्चों की देखभाल, उनको पढ़ाना, खिलौना बनाना, धार्मिक कार्य सम्पन्न कराना, समाजसेवी संस्थाओं में काम करके, समाज सेवा में योगदान करके, नयी पीढ़ी को मार्ग दिखाने जैसे कार्य करके बुढ़ापे के अवसाद से बच सकती हैं। वे पूजा-पाठ, रामायण-गीता पढ़कर, अपना समय व्यतीत कर सकती हैं। रोजो (1967), टालनर (1969) एवं कुटनर इत्यादि इसी मत का समर्थन करते हैं।

मनोवैज्ञानिकों के मतानुसार आयु के अनुरूप शरीर में परिवर्तन होना स्वाभाविक है किन्तु मन में उत्साह और उमंग हो तो मनुष्य चिरयुवा और सक्रिय बना रह सकता है। प्राय: साठ वर्ष की अवस्था तक पहुँचते-पहुँचते व्यक्ति समस्त पारिवारिक जिम्मेदारियों से विमुक्त होने लगता है, तदुपरान्त उसके अंदर निष्क्रियता घर करने लगती है। निष्क्रियता से जीवनी शक्ति का सबसे अधिक ह्रास होता है। बुढ़ापे में इसीलिए शरीर में अनेक रोग घेर लेते हैं। निष्क्रियता घुन के समान है। वृद्ध ही नहीं युवक भी यदि शरीर एवं मन से काम लेना छोड़ दे तो कुछ दिनों में वह शारीरिक एवं मानसिक रूप से अस्वस्थ हो जायेगा। 'रूस' के उक्रेन संस्थान ने बुढ़ापे के कारणों का गहन अध्ययन किया और परिणाम में देखा कि बुढ़ापे का सम्बन्ध मन से अधिक है। इस तथ्य का समर्थन करने वालों में लेमन, वेंगस्टन एवं पीटरसन (1972) आदि शामिल हैं।

वृद्धावस्था को रोकने के लिए कितना भी प्रयास किया जाय चाहे वह चिकित्सकीय प्रयास हो या सरकारी प्रयास हो या मनोवैज्ञानिक या जैविक प्रयास, वृद्धावस्था में एक दिन सबको पहुँचना है। वृद्धावस्था एक ऐसा कटु सत्य है जिससे कोई भी आज तक बचा नहीं। जैसे-जीवन लेने पर मृत्यु को स्वीकार करना ही पड़ेगा, शिशु बड़ा होकर युवा और उसके बाद वृद्ध होगा ही। यह एक स्वाभाविक एवं प्राकृतिक प्रक्रिया है। हाँ, समस्या है एवं प्रश्न भी, कि

कैसे वृद्धावस्था में होने वाली शारीरिक, मानसिक, सामाजिक समस्याओं का उन्मूलन किया जाय? अर्थात् वृद्धावस्था की समस्या का समाधान क्या है? अत: अनिवार्य रूप से वृद्धावस्था की समस्या पर विचार करना होगा और इसका समाधान ढूँढ़ना होगा ताकि हमारी वरिष्ठ, ज्येष्ठ एवं सम्माननीय पीढ़ी की दशा इतनी कारूणिक न हो।[4]

जन-स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार के कारण आने वाले वर्षों में कुल जनसंख्या में वृद्ध जनसंख्या का प्रतिशत तेजी से बढ़ने की उम्मीद है जो अपने साथ कई समस्याओं को लेकर आएगी। वृद्धावस्था की अपनी समस्याएँ है जो शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य से संबंधित है इसके अतिरिक्त भी कई अन्य समस्याएँ हैं[5], जो बदलते सामाजिक-पारिवारिक मानदंडों के कारण उत्पन्न हो रही हैं जिसे हम निम्नलिखित रूपों में देख सकते हैं-

1. शारीरिक दुर्बलता- आयु बढ़ने के साथ व्यक्ति का शरीर शिथिल होने लगता है। इन्द्रियाँ कमजोर होने लगती है। आँखो से दिखना कम हो जाता है। कान से कम सुनाई पड़ने लगता है। दाँत कमजोर हो जाते है। शरीर को शक्ति व गति प्रदान करने वाले प्रमुख संस्थान जैस पाचन संस्थान, रक्त, परिभ्रमण संस्थान, स्वशन संस्थान आदि कमजोर पड़ने लगते है। शरीर मे अनेक बीमारियां जैसे रक्तचाप मे व्यक्तिक्रम, ह्दय रोग, डायबिटिज, जीर्ण रोग, स्पाण्डलायटिस, जोड़ो का दर्द, गठिया, प्रोस्टेट ग्लैण्ड का बढ़ना, अस्थना आदि आ जाती है। व्यक्ति की कार्यशक्ति घट जाती है।

2. मानसिक दुर्बलता- अस्वस्थता, शारीरिक क्षीणता व मानसिक रोग बहुत कुछ साथ-साथ चलते है। शरीर के कमजोर पड़ने के बाद बुढ़ापे की अनुभूति ही व्यक्ति मे मानसिक निराशा का संचार करती है। वृद्ध व्यक्ति शारीरिक रूप से ही नही अपितु मानसिक रूप से भी अपने को बहुत असहाय महसूस करता है। बुढ़ापे की मानसिकता और निरूपायता के अहसास से उसके मन मे हताशा घर करने लगती है जिससे उसमे संवेगात्मक अस्थिरता उत्पन्न होती है। उसकी स्मरण शक्ति कमजोर पड़ने लगती है। शारीरिक कार्यक्षमता घटने और सामाजिक उपयोगिता कम होने के साथ वृद्ध व्यक्ति को अनेक मानसिक चिन्ताएँ घेर लेती है जिससे उसकी नींद कम हो जाती है और वह मानसिक थकावट महसूस करने लगता है।

3. आर्थिक असुरक्षा- वृद्ध लोगों को प्राय: आर्थिक सुरक्षा संबंधी तनाव का भी सामना करना पड़ता है। पारिवारिक आय कम होने से परिवार के लोग बुजुर्गों को प्राय: भार स्वरूप देखने लगते है।

5. संयुक्त परिवार का अभाव- बुजुर्गजनो को संयुक्त परिवार के अभाव की समस्या का भी सामना करना पड़ता है। संयुक्त परिवार मे वृद्धावस्था, बीमारी आदि के समय सुरक्षा प्रदान की जाती है, वही एकाकी परिवार मे व्यक्ति अपने परिश्रम से प्राप्त फल पर निर्भर रहकर वृद्धावस्था अथवा बीमारी के समय अपनी जीविका चलाता है।

6. उचित देखभाल की समस्या- हम सभी जानते हैं कि, उम्र के एक पड़ाव के बाद वृद्धावस्था निश्चित रूप से आनी है। जो परेशान करती है और समय के साथ-साथ स्थिति बदतर होने लगती है। जिस परिवार मे कई सदस्य होते है, वहां तो बड़े बुजुर्गों की देखभाल ठीक तरह से हो जाती है, लेकिन एकाकी परिवार की स्थिति मे जब घर के सदस्य चले जाते है, तो अक्सर बुजुर्ग लोगों की देखभाल करने वाला कोई नही होता है, इससे उन्हें कभी-कभी बड़ी बाधा का सामना करना पड़ता है।

वृद्धों की समस्या का समाधान- भारतीय जनांकिकी का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि वृद्धों की जनसंख्या मे निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। स्वाभाविक तौर पर इनकी समस्याओं मे वृद्धि होगी। इस दृष्टि से यह आवश्यक है कि वृद्धों की समस्याओं के समाधान के लिए प्रयास किए जाएँ। वृद्धों की समस्याओं के समाधान हेतु निम्न प्रयास किये जा सकते है-

1. भारत मे संयुक्त परिवार व्यवस्था वृद्धों को सुरक्षा प्रदान करती रही है। अतः इसके विघटन को रोकने के लिये प्रयास किये जाने चाहिये।
2. परम्परागत भारतीय समाज मे सामुदायिक जीवन वृद्धों को उनकी किसी भी समस्या का एहसास नही होने देता था।
3. सरकार की ओर से वृद्धों के लिये वृद्ध होम स्थापित करने चाहिए जिनमे समुचित सुविधायें हो।
4. वृद्धों की स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं के लिये निःशुल्क व्यवस्था की जानी चाहिए।
5. वृद्धावस्था पेंशन योजना की राशि उपलब्ध करायी जानी चाहिए।
6. शिक्षित वृद्धों के अनुभवों का लाभ लिया जाना चाहिए।
7. केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड ने वृद्ध सदनों एवं पालनाघरों को मिलाकर एक स्थान पर संचालित करने की योजना है, जिससे वृद्धजनों को बच्चों की गतिविधियों का आनन्द मिल सके ।

निष्कर्ष स्वरूप हम कह सकते है कि वृद्ध व्यक्तियों के प्रति ऐसी प्रवृत्ति का कारण समाज में बढ़ता भौतिकवाद है, आधुनिक परिवार में हर सदस्य प्रत्येक सदस्य से आय की अपेक्षा करता है, जिससे परिवारिक जीवन सुखद एवं आरामदेय हो और यदि नहीं कमाते है तो परिवार पर बोझ माने जाते हैं। जीवन की भागदौड़ में बुजुर्गों की उपेक्षा लगातार बढ़ती जा रही है। भारत में संयुक्त परिवार व्यवस्था का चरमराना बुर्जुगों के लिये नुकसानदायक साबित हुआ है। वर्तमान भौतिकतावादी संस्कृति के प्रसार ने भी इस समस्या को बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।परन्तु हम सबको जब तक इस बात का एहसास नहीं होगा कि यह अवस्था सबके लिए है, तब तक हम उनके प्रति आत्मीय नहीं हो सकते।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. के.एम. कपाड़िया, "मैरिज एण्ड फैमिली इन इण्डिया", ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, बॉम्बे, 1958, पृष्ठ-250.
2. ए.एस. अल्तेकर, "वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन", द कल्चर पब्लिकेशन हाऊस, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी, वाराणसी, 1938, पृष्ठ- 93.
3. डॉ. शुभा सोनेजा, "वृद्ध नागरिकों की देखभाल", रोजगार समाचार, सूचना व प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, 12-18 अगस्त, 2000, पृष्ठ-3.
4. जे.एन.पी. सिन्हा, "प्रॉब्लम्स ऑफ दी एजेड", क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, 1989, पृष्ठ-6.
5. आर.सी. श्रीवास्तव, "द प्रॉब्लम ऑफ द ओल्ड एज" क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, 1994, पृष्ठ-3

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

भारत में जैविक खेती की संभावनायें

• मंजरी अवस्थी

सारांश- वैश्विक महामारी कोविड-19 के कारण पूरे विश्व में बेहतर स्वास्थ्य व सुरक्षित भोजन की मांग में वृद्धि हुयी है। भारत जैविक कृषकों की संख्या के मामले में प्रथम तथा जैविक कृषि क्षेत्रफल के मामले में 9 वें स्थान पर है। जैविक कृषि (आर्गेनिक फार्मिंग) कृषि की वह विधि है जो संश्लेषित कीटनाशकों का उपयोग या न्यूनतम प्रयोग किया जाता है तथा जिसमें भूमि की उर्वरा शक्ति को बचाये रखने के लिये फसल चक्र, हरी खाद, कंपोस्ट, केंचुआ खाद, आदि का प्रयोग किया जाता है। यह सतत विकास लक्ष्य के अनुकूल है, जिसका उदेश्य भूख को समाप्त करना, खाद्य सुरक्षा प्राप्त करना है तथा बेहतर पोषण और कृषि को बढ़ावा देना है।

मुख्य शब्द - जैविक कृषि, फसल चक्र, हरी खाद, कंपोस्ट

सिक्किम पूरी तरह से जैविक कृषि को अपनाने वाला भारत का पहला राज्य बन गया है। त्रिपुरा और उत्तराखंड राज्य भी इस लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में प्रयास कर रहे हैं। पुरातन काल से ही भूमि की उर्वरा शक्ति बनाये रखने के लिये किसान किसी न किसी रूप में खेती की मिट्टी में पोषक तत्वों की पूर्ति करते आये हैं। गत शताब्दी के मध्य तक गोबर, पशुमूत्र और गौशाला से प्राप्त अवशेषों आदि से बनी कम्पोस्ट या फसलों की बनी खाद खेतों में देते आ रहे हैं। इसके अतिरिक्त फसलों की फेर बदल कर बोना, उसमें दलहनी फसलों का समावेश आदि भी मिट्टी की उर्वरा शक्ति में वृद्धिमें सहायक होते है। कभी कभी तो खेतों को एक दो वर्षो तक बिना फसलों के खाली रखा जाता है। विशेष रूप से देश के आजाद होने के बाद बढ़ती आबादी के लिये खाद्यान और औद्योगिक विकास के कच्चे माल की आपूर्ति के लिये फसल बिना खेत रखने की बात तो दूर की रही। उसी खेत में वर्ष में 2 से 3 फसल लेने की आवश्यकता अनुभव होने लगी। उत्पादन क्षमता का पूरा पूरा दोहन करने के लिये इनके अतिरिक्त व अधिक मात्रा में प्रमुख पोषक तत्व नत्रजन, स्फूट और पोटाश (NPK) देना आवश्यक हो गया। यहां परपरागत तरीकों गोबर, हरी खाद, शस्त्र क्रियाओं आदि से पूर्ति किया जाना संभव नही था।

जैविक खाद प्रबंधन-

1. गोबर की खाद
2. घरेलू कचरे की खाद
3. गोबर गैस स्लरी की खाद
4. खलियों की खाद
5. मुर्गी की खाद

• सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, इटारसी

6. पशु जनित खाद
7. तालाब की सड़ी मिट्टी की खाद

अच्छी उपज के लिये मृदा में खाद का विशेष महत्व है। खाद भूमि की उर्वरता को बढ़ाकर पौधों के वृद्धि के लिये आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति करती है। इस हेतु सर्वाधिक महत्वपूर्ण और हानिरहित कार्बनिक होते हैं। जिनमें गोबर खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद व खली आदि मुख्य है।

जैविक खादों से पोषक तत्व प्रबन्धन का मुख्य उदेश्य-

1. उर्वरकों की उपयोग क्षमता में वृद्धि करना,
2. फसलों की उत्पादकता को बढ़ाना,
3. मृदा उर्वरता को बढ़ाना एवं उसे स्थिर रखना,
4. किसानों की सामाजिक तथा आर्थिक दशा को बदलना तथा
5. पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाना।

हरी खाद (Green Compost)- हमारे देश में हरी खाद का प्रयोग प्राचीन काल से ही होता आ रहा है। हरी खाद के रूप में प्रयोग की जाने वाली फसलें, सनई , ढांचा, मोठ,उड़द, मूंग व लोबिया आदि हैं। इस खाद से फसलों को जैव पदार्थो की प्राप्ति, वायुमंडल से नाइट्रोजन की प्राप्ति, भूमि को पोषक तत्वों का निक्षालन द्वारा नष्ट होने से बचाव तथा कार्बन व हाइड्रोजन की प्राप्ति होती है। इस से खरपतवार भी नष्ट हो जाते हैं। हरी खाद केवल नाइट्रोजन व कार्बनिक पदार्थो का साधन नही है। हरी खाद से मिट्टी को कई पोषक तत्व भी प्राप्त होते है। हरी खाद से रोगजनक फफूंदों की विरोधी फफूंद तथा शुक्राणु की संख्या व प्रकार में आशातीत वृद्धि होती है तथा मृदा जनित रोगों का खात्मा भी होता है।

केंचुआ खाद (Vermi Compost)- केंचुआ कृषकों का मित्र तथा भूमि की आंत कहा जाता है। यह सेंद्रिय पदार्थ ह्यूमस व मिट्टी की एक सार करके जमीन के अंदर परतों में फैला है। इससे जमीन पोली होती है और हवा का आवागमन बढ़ जाता है तथा जल की क्षमता में भी वृद्धि होती है। केंचुआ के पेट में जो रासायनिक व सूक्ष्म जीवाणुओं की क्रिया होती है, उससे भूमि में पाये जाने वाले नाइट्रोजन, स्फूट, पोटाश, कैल्सियम व सूक्ष्म तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है। ऐसा पाया गया है कि मिट्टी मे नाइट्रोजन, 7 गुना, फास्फोरस 11 गुना, और पोटाश 14 गुना बढ़ जाता है। केवल अकेले जमीन को सुधारने एवं उत्पादकता की वृद्धि में सहायक नहीं होते बल्कि इनमें सूक्ष्म जीवाणु ,सेन्द्रिय पदार्थ हयूमस आदि का कार्य बढ़ जाता है।

केंचुयें की खाद से लाभ

- केचुओं से भूमि की गुणवत्ता में सुधार आता है।
- केचुआ खाद से भूमि की जल धारण क्षमता बढ़ती है
- यह खाद भूमि का उपयुक्त तापक्रम बनाये रखने में सहायक होती हैं।
- इस खाद को देने पर भूमि में से पानी का वाष्पीकरण कम होता है।
- केंचुये नीचे की मिट्टी उपर लाकर उसे उत्तम प्रकार की मिट्टी बनाते है ।
- केंचुआ खाद में हयूमस भरपूर मात्रा में होने से नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश एवं अन्य सूक्ष्म द्रव्य पौधो को भरपूर मात्रा में जल्दी उपलब्ध होते है।

- इस खाद से भूमि की उपजाऊ क्षमता एवं सिंचाई के अंतराल में वृद्धि होती है।
- रासायनिक खाद पर निर्भता कम होने के साथ लाख खेती की लागत में भी कमी आती है।

जैव उर्वरक (Organic Manure)- कृषक जैव उर्वरकों का भी प्रयोग करते हैं। प्राकृतिक रूप से इनकी सीमित संख्या में वृद्धि की जाती है। तथा पुनः इन जीवों को एक माध्यम के जरिये भूमि तक पहुंचाया जाता है। जैविक खेती तकनीकि के तहत पौधों को न केवल उचित मात्रा पोषक तत्वों को उपलब्ध कराने की व्यवस्था की जाती है। बल्कि भूमि की उर्वरा शक्ति तथा संरचना को संकलित करने का लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि करती है। इसके अतिरिक्त भी इस प्रकार की खेती से अन्य महत्वपूर्ण लाभ इस प्रकार हैं–

- जैविक खेती अपनाकर किसान विषरहित खाद्यानों का उत्पादन कर सकते हैं।
- देश एवं प्रदेशवासियों को विषरहित भोजन उपलब्ध कराया जा सकता है।
- देश एवं प्रदेश के पशुओं को विषरहित स्वस्थ चारा उपलब्ध कराया जा सकता है।
- जैविक खेती अपनाकर न्यूनतम काश्त लागत तकनीकों को अपनाया जा सकता है।
- जैविक खेती से उत्पादित खाद्यान्नों का उपयोग करने से मनुष्य में बीमारियों के प्रति रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धिहोती है।
- जैविक खेती अपनाकर कृषक स्वावलंबी बन सकते हैं।
- जैविक खेती अपनाकर कृषकों की आदानों की बाह्य निर्भरता को कम किया जा सकता है।
- जैविक खेती अपनाने से हरी खाद को अपनाकर भूमि में जल धारण क्षमता में वृद्धि,भूमि में पोषक तत्वों की वृद्धि,भूमि सुधार, उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि संभव है।
- जैविक खेती अपनाने से मृदा की जल भरण क्षमता में वृद्धि की जा सकती है।
- जैविक खेती अपनाकर ग्रामों में स्वच्छता को बढ़ावा दिया जा सकता है।
- जैविक खेती अपनाकर कृषक अपने उत्पाद का बाजार में अधिक मूल्य प्राप्त कर सकते है।
- जैविक खेती अपनाकर मृदा में सूक्ष्म जीवों की संख्या में वृद्धि एवं इनका संरक्षण किया जा सकता है।
- जैविक खेती को अपनाने से पर्यावरण में होने वाले प्रदूषण से होने वाली हानि को रोका जा सकता है।
- विश्व के अनेक देशों के जैविक उत्पादों की मांग अधिक है,अतः जैविक खेती अपनाकर विदेशी मुद्रा अर्जित की जा सकती है।
- जैविक खेती अपनाकर किसान खेती को टिकाऊ और स्थायी बना सकता है।
- जैविक खेती के द्वारा पौधों व मिट्टी के वातावरण में आपसी संतुलन स्थापित किया जा सकता है।
- जैविक खेती अपनानें से पर्यावरण प्रदूषण, जल एवं मृदा संरक्षण, नमी का हास,

मृदा संरचना की क्षतिग्रस्तता, कृषि लागत में बढ़ोतरी को कम किया जा सकता है।

- जैविक खेती को अपनाने से मृदा में जीवांश पदार्थों की मात्रा में वृद्धि संभव है।
- जैविक खेती के अन्तर्गत प्रयोग में लाई जाने वाली सामग्री किसानों के पास उपलब्ध है, अत: इस दृष्टि से भी जैविक खेती लाभदायक है।
- जैविक खेती अपनाने से मृदा में उपस्थित लाभदायक कीटों का संरक्षण किया जा सकता है।
- जैविक खादों के प्रयोग से किसानों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है।
- जैविक खादों की मात्रा अधिक हो जाने पर भी पैदा होने वाली फसल अथवा जमीन पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है।

जैविक व हरी खादों में औसत तत्व

हरी खाद

	पोषक तत्व		
जैविक खाद	**नाइट्रोजन**	**फास्फोरस**	**पोटाश**
फार्म यार्ड खाद	0.80	0.41	0.74
कंपोस्ट खाद	1.24	1.92	1.07
वर्मी कंपोस्ट	1.60	2.20	0.67
धान पुआल को खाद	1.59	1.34	1.37
गेहूं मूसा की खाद	2.00	2.05	0.90
प्रेस मड	2.73	1.81	1.31
जल कुंभी	2.00	1.00	2.30
मुर्गी खाद	2.87	2.03	2.35

जैविक खेती हेतु प्रमुख जैविक खाद एवं दवाइयाँ

सनई	0.43	0.12	0.5
ढैया	0.5	0.10	0.50
बिनौला	3.9	1.8	1.6
महुआ केक	2.5	0.8	1.8
नीम केक	5.2	1.00	1.4
मूंगफली की खली	7.4	1.5	1.3
सनफ्लावर	7.9	2.2	1.9
तिलकेक	6.2	2.00	2.2
सरसों की खली	5.15	1.00	1.2

1. जैविक खाद तैयार करने के लिये कृषकों के अन्य सुझाव
   - भभूत अमृत पानी
   - अमृत संजीवनी
   - मटका खाद

2. जैविक पद्धति द्वारा व्याधि नियंत्रण के कृषकों के अनुभव

1. गौमूत्र
2. नीम की पत्ती का घोल
3. मठ्ठा

4. मिर्च/लहसुन
5. लकड़ी की राख
6. नीम व करंज खली
7. फसलों का अवशेष

जैविक कीट नाशकों के नाम

- ट्राइकोडरमा / ट्राइकोडरमा हारजिएनम ट्राइकोडरमा फफूंदी पर आधारित घुलनशील जैविक फफूंदी नाशक है।
- ब्यूबेरिया बैसियाना फफूंदी पर आधारित जैविक कीटनाशक है।
- स्यूडोमोनास फ्लोरिसेन्स
- मेटा राइजियन एनिसोप्ली
- ट्राइकोग्रामा को लिनिस
- काइ सोपली
- जाइगोग्रामा वाइ को लोराठा

जैविक खेती के गुण

- सस्ती सरल स्वावलंबी स्थायी है।
- पौधों में संतुलित पैदावार एवं भूमि की निरंतरता बनाये रखती है।
- प्रदूषण विहिन पर्यावरण से जन स्वास्थ्य को रोग मुक्त रखती है।
- ग्राम स्वावंलबन पर आधारित स्वदेशी तकनीकि को बढ़ावा मिलता है।
- इसे अपनाना आज के संदर्भ में आवश्यकता निर्विवाद हैं।
- यह कृषि उत्पादन की कार्यशाला है, जिसमें कई उपायों के मध्य समन्वय स्थापित किया जाता है।
- इसे किसान आसानी से अपना सकते हैं।
- यह परम्परागत खेती है। इसे मध्ययुग की खेती ने बिगाड़ दिया था, जिसे पुनः स्थापित किया गया है।
- भूमि को बंजर होने से रोकता है।
- इसमें रसायनों का उपयोग कम से कम होता है।
- जैविक खेती से वर्षा आधारित खेती में उत्पादन संभव है।

जैविक खेती के फायदे

- इस खेती में भूमि की उर्वरा शक्ति बनी रहती है बल्कि उसमें वृद्धि होती है
- इस पद्धति से पर्यावरण प्रदूषण नही होता है।
- इस में कम पानी की आवश्यकता होती है। यह पानी का संरक्षण करती है।
- इस खेती से भूमि की गुणवत्ता बनी रहती है।
- फसल अवशेषों को नष्ट करने की आवश्यकता नही होती है।
- जैविक खाद्यान्न मंहगे मूल्य पर बिकते है।
- कृषि के सहायक जीव भी सुरक्षित होंगे बल्कि उनमें बढोत्तरी होगी
- इस खेती में कम लागत आती है और मुनाफा ज्यादा होता है।
- यह खेती पशुधन और अन्य जीवों के लिये उपयोगी है।

आर्गेनिक फार्मिंग का बाजार- 2019 में भारत से 638.998 मीट्रिक टन जैविक उत्पादों का एक्सपोर्ट किया। इससे देश को 4686 करोड़ रूपये मिले। जबकि 2017 – 18 में हमने 4.58 लाख मीर्टिक आर्गेनिक उत्पादन का एक्सपोर्ट करे 3453.48 रूपये कमाये थे।भारत में जैविक उत्पादों का मुख्य आयातक अमेरिका, यूरोपीय संघ, और कनाडा है। इसके अलावा स्वीटजरलैंड, आस्ट्रेलिया, इजराइल, दक्षिण कोरिया, वियतनाम, न्यूजीलेंड और जापान भी यहां के जैविक उत्पादों के मुरीद हैं।

निष्कर्ष- पिछले पांच वर्षों के दौरान लगभग 29 गुना वृद्धि हुयी है। मार्च 2010 तक भारत में जैविक प्रमाणीकरण की प्रक्रिया के तहत 4.48 लाख हेक्टेयर क्षेत्र से भी अधिक क्षेत्र कृषिगत क्षेत्र था। जबकि शेष 3.4 लाख हेक्टेयर वन तथा शेष क्षेत्र जंगली कृषि भूमि क्षेत्र के अन्तर्गत आती है। भारत में प्राकृतिक खेती कोई नई अवधारणा नहीं है। अतः अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के अनुपालन में उत्पादकों की अधिक जागरूकता और क्षमता निर्माण को बढ़ावा देने से भारतीय जैविक किसान जल्दी ही वैश्विक कृषि बाजार में प्रमुख भूमि निभाने में सक्षम होंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

- डॉ. के. एन. जोशी, डॉ. मंजुला जोशी कृषि अर्थशास्त्र के सिध्दान्त एवं भारत में कृषि विकास, विश्व भारती पब्लिकेशन, नई दिल्ली
- डॉ. एन.एल. अग्रवाल, भारतीय कृषि का अर्थशास्त्र, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी , जयपुर
- सवालिया बिहारी वर्मा, शिव कुमारी सिंह , विजय कुमार सिंघला, ग्रामीण कृषि विपणन, यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली
- डॉ. जय प्रकाश मिश्र, कृषि अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

दलित महिलाओं में सामाजिक गतिशीलता

• गजानन मिश्र

सारांश- अनुसूचित जाति की महिलाएँ समाज में प्राचीनकाल से ही जातिगत तथा लैंगिक आधार पर उपेक्षित रही हैं, वर्तमान में इस भेद के साथ वर्ग विभेद की अवधारणा ही जुड़ गई है। वर्तमान में आधुनिक शिक्षा पश्चिमीकरण, आधुनिकीकरण आदि के कारण महिलाओं के व्यक्तित्व और उनकी भूमिकाओं में अनेक परिवर्तन हुए हैं। आज उनके समक्ष कौन-कौन सी चुनौतियां हैं व उनका क्या समाधान हो सकता है, आदि ऐसे कई प्रश्न है जो समाज में अनुत्तरित है, इनका समाधान आवश्यक है। प्रत्येक देश में महिलाएँ उस देश की आबादी का निर्माण करती हैं, जो देश के विकास में अपना योगदान प्रदान कर सकती हैं, यदि उन्हें भी समान अवसर मिले? यह बात अनुसूचित जाति की महिलाओं पर भी लागू होती है, विभिन्न सामाजिक सुधारों व महिला सशक्तिकरण योजनाओं से तथा अस्पृश्यता और गैर बराबरी के संदर्भ में वैचारिक परिवर्तन एवं समाज के अन्य वर्गों के साथ इनकी क्या सहभागिता है शिक्षा, पारिवारिक स्थिति, व्यवसाय, प्रथाओं, रीति-रिवाजों, उच्च जाति के साथ सामाजिक संबंधों, जीवनशैली, जीवन-स्तर, राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक जागरूकता में क्या परिवर्तन आये हैं, उपरोक्त शोध-पत्र में इन्हीं बिन्दुओं पर चर्चा की गई है।

मुख्य शब्द - अनुसूचित जाति, सामाजिक भेदभाव, अस्यपृश्यता, जीवनशैली

भारतीय सामाजिक व्यवस्था में जनसंख्या का एक बहुत बड़ा हिस्सा सदियों से पिछड़ा है, वह उत्पीड़न, लांछित व अवहेलना की बोझ से ग्रसित रहा है। यह वर्ग अनुसूचित वर्ग के नाम से जाना जाता है, जो वर्षों से अमानवीय जीवन जीने के लिए बाध्य है। संविधान के अनुच्छेद 341 व 342 में इनके बारे में विस्तृत वर्णन है। शैक्षिणिक व आर्थिक दृष्टि से इस वर्ग के पुरूषों के साथ-साथ महिलाएँ भी गम्भीर समस्याओं से ग्रसित हैं। अंग्रेजों ने 1931 की जनगणना के आधार पर इन्हें बाहरी जाति के रूप में वर्गीकृत किया था। महात्मा गांधी ने इन्हें हरिजन संज्ञा से पुकारा। अनुसूचित जातियों को अस्पृश्य समझा जाता रहा है और इसी आधार पर इन्हें अनेक सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक निर्योग्यताओं से ग्रसित माना गया। प्रो. सत्यवृत का ये मानना था कि, अस्पृश्यता समाज की वह व्यवस्था है, जिसके कारण एक समाज दूसरे समाज को परम्परा के आधार पर अगर छूता भी है तो वह अपवित्र हो जाता है और इस अपवित्रता से हटने के लिए उसे किसी प्रकार का प्रायश्चित करना पड़ता है।

अस्पृश्यता उस परम्परागत मनोभाव तथा व्यवहार प्रतिमान का द्योतक है, जिसके अनुसार पंचम वर्ण के सदस्य अछूत या न छूने योग्य हैं और इसलिए उनसे एक सामाजिक दूरी बनाये रखना न केवल उच्च जातियों का कार्य है, अपितु अस्पृश्य जातियों का भी कर्तव्य है कि वे उच्च जाति के सदस्यों से दूर रहें और उन्हें न छुयें। छुआ-छूत की

• महात्मा गांधी महाविद्यालय करेली

भावना, भेद-भाव पर आधारित है, यह भेद-भाव लोगों के व्यवहारों में प्रकट होता है । यह माना जाता था कि पंचम वर्ण के लोग निकृष्ट व अपवित्र होते हैं, अत: उन्हें छूना उनके साथ उठना बैठना, खाना-पीना तथा मंदिरों पर प्रवेश वर्जित था । अम्बेडकर का कहना है कि अछूतों की आज जो दयनीय अवस्था है, इसमें इतिहासकारों की बहुत बड़ी साजिश है, इसके साथ ही अस्पृश्यता को दलित का दर्जा देने में धार्मिक ग्रन्थों के लेखकों के योगदान को भी उन्होंने वर्णित किया है । इन रूढ़िवादी हिन्दू लेखकों ने इन जातियों को शुद्ध और अशुद्ध के साथ जोड़ दिया । यह पहली बार है कि धर्म सूत्र ने अशुद्ध व्यवसाय करने वाली जातियों को अछूत और दलित की श्रेणी में डाल दिया। वास्तविकता यह है कि अछूतों का भला न तो राजनीति कर सकती है और न ही समाज सुधार की योजनायें, इसके लिए अछूतों को स्वयं आगे आना पड़ेगा, उनका हित ही उन्हें देखना पड़ेगा।(दोषी, एस.एल. भारतीय सामाजिक विचारक, रावत पब्लिकेशन जयपुर, पृ.सं. 174)।

अस्पृश्य या अनुसूचित जाति की महिलाओं को हिन्दू समाज में परम्परागत रूप से निम्न समझा गया , उनका शोषण किया गया और विशेषाधिकारों से वंचित रखा गया, उनके साथ अछूतापन एक अनहोनी घटना है, जिसे संसार में किसी भी हिस्से में मानवता ने इसका अनुभव नहीं किया। किसी दूसरे समाज में इस जैसी कोई चीज है ही नहीं न तो यह प्रारम्भिक समाज और न ही वर्तमान समाज में। भारत में अनुसूचित जातियों की महिलाओं के साथ होने वाली निर्योग्यताओं को वैधानिक तौर पर समाप्त कर दिया गया है तथा इन्हें शैक्षणिक, आर्थिक, सामाजिक व धार्मिक उत्थान के लिए विशेषाधिकार प्रदान किये गये हैं। यहां पर मूल प्रश्न यह है कि इन महिलाओं ने इन वैधानिक संरक्षण का कितना लाभ उठाया यह एक यक्ष प्रश्न है। विभिन्न वैधानिक संरक्षणों के बावजूद भी इस वर्ग की महिलाएँ उत्पीड़न का शिकार है, इनका जीवन अभाव, दुख एवं अपमान का जीवन है तथा आज भी ये विभिन्न सुख-सुविधाओं से वंचित, गरीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन कर रही हैं। यह वह वर्ग है जो जर्जर हो चुका है, इनमें अनेक प्रकार की अव्यवस्थाएँ, कुप्रथाएँ, आडम्बर व अविश्वास फैला हुआ है, विभिन्न सरकारी प्रयासों के बावजूद भी इस वर्ग की महिलाएँ शिक्षित न होने एवं शैक्षणिक सुविधाएँ मिलने के बावजूद भी अज्ञानता में अधर में लटक रही हैं एवं आज भी इनकी स्थिति बदतर है ।

पूर्व साहित्य का अध्ययन-

1. "अस्यपृश्य जातियों में जिन्हें धार्मिक व सामाजिक आधार पर निर्योग्य किया गया है तथा उनके कार्य या पेशे अपवित्र वस्तुओं से संबंधित है तथा इनपर निर्योग्यताएँ इस उद्देश्य से लादी गई है कि वे जीवनभर पवित्र क्षेत्र से दूर रहें ।"(डॉ. नयन राजीवन 2006-2007, निम्न वर्गों का समाजशास्त्र, आनंद पुस्तक सदन शिक्षा साहित्य प्रकाशन वाराणसी पृ.सं. 90)।
2. "अस्पृश्यता का संबंध हरिजनों की उन निर्योग्यताओं से है जो उन पर सवर्ण हिन्दुओं द्वारा लादी गई हैं । " (मदान जी.आर. 2011, विकास का समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन दिल्ली-7 पृ.सं. 378)।
3. "अनुसूचित जातियों का वर्ण व्यवस्था में कोई स्थान नहीं है, इसी तरह आर्थिक व्यवस्था के आधार पर इन्हें अलग नहीं किया जा सकता। क्योंकि ये कृषि कार्य

भी करती है।"(डॉ. नयन राजीवन 2006-2007, निम्न वर्गों का समाजशास्त्र, आनंद पुस्तक सदन शिक्षा साहित्य प्रकाशन वाराणसी पृ.सं. 91)।

4. चाण्डाल भवपच कोलका: एघां
   I. सम्भाशणात् स्नांनं दर्शनादर्कवीक्षणम। .... (व्यास स्मृति 1-11-12)
   II. चाण्डाल, दास, श्वपच और कोलक इनसे व्यक्ति बात कर ले तो स्नान करने पर शुद्ध होगा, इन्हें देख ले तो सूर्य की ओर देखने पर शुद्ध होगा। (संतोषी हरिकिशन 2009 दलितों के दलित, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन नई दिल्ली पृ.सं. 94)।
5. एच.आर.इजाक्स (1965) ने दलित शब्दों के प्रयोग के साथ जुड़े इतिहास का विश्लेषण किया है। दलित मूलरूप से मराठी भाषा का एक शब्द है, जिसका प्रयोग दमन और शोषण के शिकार लोगों के लिए किया जाता है। (आहूजा राम 2004 , भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत पब्लिकेशन आगरा, पृ.सं. 102)
6. सेमुआल जयकुमार (1999) गरीबों एवं निर्बलों की सचेतनता की ही तरह दलित पहचान सचेतनता एक वैचारिक भाव है। दलित सचेतनता वास्तव में दलित पहचान एवं दलित इतिहास के पृष्ठों को अपने में समेटे है, यह मुख्यत: आर्यावाद एवं ब्राम्हणवाद विरोधी है। (रावत हरिकृष्ण 2008, उच्चतर समाजशास्त्र विश्वकोष, रावत पब्लिकेशन आगरा, पृ.सं. 102)।
7. साहित्य, इतिहास, राजनीति और समाजशास्त्रियों को खंगालने से दलित महिलाओं के संदर्भ में मुक्तकामी, भीम स्मृति और दासता की प्रतीक मनुस्मृति के सहअस्तित्व के प्रश्न सामने आ सकते हैं।(दुबे अभयकुमार 2007, आधुनिकता के आईने में दलित, वाणी प्रकाशन प्रा.लि. नई दिल्ली, पृ.सं. 230)

इस शोध पत्र का दूसरा बिन्दु सामाजिक गतिशीलता है, जिसका अध्ययन सामाजिक संस्करण एवं सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में किया गया है। सामाजिक गतिशीलता सामाजिक परिवर्तन का ही एक अंश है, जिसमें सामाजिक संबंधों, सामाजिक संरचना एवं प्रकार्यों तथा संगठनों में होने वाले परिवर्तनों से है जिसमें व्यक्ति या समूह की सामाजिक प्रस्थिति या पद में परिवर्तन हो जाता है। मिलर का मत है कि हम सामाजिक गतिशीलता के अध्ययन के द्वारा सामाजिक संस्करण एवं सामाजिक ढांचे में होने वाले परिवर्तन एवं उसकी गति को ज्ञात कर सकते हैं। यहां पर मूलत: इसी बात का पता लगाया गया है कि अस्पृश्य जाति की महिलाओं में सामाजिक गतिशीलता की स्थिति क्या है।

भारत में स्वतंत्रता के बाद अनुसूचित जातियों की महिलाओं को उनकी निर्योग्यताओं के बावजूद भी विशेषाधिकार दिये गये, ग्राम विकास के बावजूद भी ग्राम की सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियां उनके अनुकूल नहीं रही हैं तथा वह निम्न समस्याओं से ग्रसित हैं।

1. **आर्थिक समस्यायें-** विभिन्न वैकासिक योजनाओं के बावजूद भी उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर है, उनको पेशा चुनने की समस्या प्रमुख है, आज भी ये भूमिहीन होने के साथ साथ परिवार के अन्य लोगों के साथ धनी लोगों के यहां काम करती हैं, जो इनका विभिन्न स्तरों पर शोषण करते हैं।

2. **धार्मिक एवं शैक्षणिक निर्योग्यताएँ-** वैदिक काल से ही अस्पृश्य जातियों को सवर्णों की तरह मंदिरों में प्रवेश का अधिकार नहीं है। मंदिरों के बाहर होने वाली साफ सफाई जैसे- नाली साफ करना, घास हटाना इत्यादि कार्य ये पुरूषों के साथ मिलकर करती हैं, मगर मजाल की ये मंदिर में प्रवेश कर जायें। अस्पृश्य जाति की होने के कारण इनके बच्चों को अच्छे स्कूलों में प्रवेश भेदभाव एवं आर्थिक स्थिति ठीक न हो पाने की वजह से मिल नहीं पाता, इससे एक बहुत बड़ा वर्ग शिक्षा से आज भी जमीनी स्तर पर वंचित है। आंकड़े कुछ भी कहीं परन्तु हकीकत यही है कि इन्हें शैक्षणिक आधार पर आज भी सुविधा प्राप्त नहीं है।
3. **निवास की निर्योग्यताएँ-** अस्पृश्य होने की वजह से सवर्ण हिन्दुओं से निवास की बस्तियों का अलग होना इन लोगों के सामाजिक बहिष्कार की ओर संकेत करता है।
4. **राजनैतिक निर्योग्यताएँ-** वैधानिक रूप से विभिन्न संस्थाओं एवं मण्डलों में विभिन्न पदों पर चुनाव में विजित होने के बावजूद भी संचालन का अधिकार उनके पति या ग्राम में उच्च जातिगत पुरूषों के द्वारा संचालित होता है।
5. **सार्वजनिक निर्योग्यताएँ-** अस्पृश्य जातियों की महिलाओं को सार्वजनिक स्थानों का स्वतंत्रता पूर्वक प्रयोग नहीं करने दिया जाता, यह एक बहुत बड़ा सामाजिक अभिशॉप है।

इतनी निर्योग्यताओं से अस्यपृश्य जातियों की महिलाएं समाज में सम्मान के साथ जी सकें, व उन्हें प्राप्त विशेषाधिकार का प्रयोग वह कर सकें, इसके लिए शासन द्वारा विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं को लागू किया गया व उनके परिणाम आशातीत रहे हैं। अस्पृश्य जातियों की महिलाओं में गतिशीलता लाने के लिए शासन द्वारा विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं को लागू किया गया जो निम्नानुसार हैं-

स्वतन्त्रता के बाद से महिलाओं की उन्नति, विकास योजनाओं का केन्द्र बिन्दु रही है, जिसमें अस्पृश्य जाति की महिलाओं को मूल रूप से शामिल किया गया है। महिला और बाल-विकास विभाग प्रारंभ से ही महिलाओं के सामाजिक व आर्थिक स्तर में सुधार लाने के विशेष प्रकार के कार्यक्रम लागू करता रहा है, जिसमें उनके सामाजिक-आर्थिक स्तर को सुधारने की ओर विशेष ध्यान दिया गया है। विभाग द्वारा लागू प्रमुख कार्यक्रम और महिलाओं को अधिकार-सम्पन्न बनाने की दिशा में किए गए प्रयास इस प्रकार हैं -

कल्याण और सहायता सेवाएँ- कामकाजी महिलाओं के लिए होस्टलों के निर्माण की योजना का उद्देश्य अन्य स्थानों से शहरों में आने वाली निम्न आय-वर्ग की महिलाओं को सस्ती दर से सुरक्षित आवास सुविधा उपलब्ध कराना है। कुछ होस्टलों में इन महिलाओं के बच्चों के लिए दिन के समय देखभाल की सुविधा भी उपलब्ध है।

बालिका समृद्धि योजना- बालिका समृद्धि योजना की शुरूआत 2 अक्टूबर 1997 को हुई थी। इसके अन्तर्गत गरीबी-रेखा से नीचे वाले परिवार में 15 अगस्त 1997 को अथवा उसके बाद जन्म लेने वाली बालिका की माँ को 500 रूपये की अनुदान राशि दी जाती है। 500 रूपये की सहायता राशि लड़की के नाम से डाकघर/बैंक खाते में जमा कर दी जाएगी। लड़की जब स्कूल जाने लगेगी तो उसकी सालाना छात्रवृत्ति भी उसी खाते में जमा कर दी जाएगी। यह छात्रवृत्ति पहली कक्षा से दसवीं कक्षा तक दी जाएगी। लड़की की आयु 18 साल होने और उसके तब तक अविवाहित होने पर वह कुल जमा राशि

(ब्याज-सहित) मिल जाएगी। यह योजना निम्नलिखित महिलाओं के लिए है: दीन-हीन विधवाएँ, जिनके परिवार वालों ने उन्हें वृन्दावन, काशी आदि धार्मिक स्थानों पर बेसहारा छोड़ दिया है, जेल से रिहा की गई महिला कैदी, जिसे परिवार का सहारा नहीं है, प्राकृतिक आपदा की शिकार ऐसी महिलाएँ जो बेघर हैं और उनके पास कोई सामाजिक तथा आर्थिक सहारा नहीं है।

इस योजना के तहत जो सहायता पैकेज उपलब्ध कराया जाता है, उसमें निम्नलिखित सुविधाएँ शामिल हैं: आवास, खाना-पीना, कपड़े, स्वास्थ्य की देखभाल और परामर्श की सुविधा, शिक्षा, जनजागरण के जरिए सामाजिक और आर्थिक पुनर्वास के कदम, आचरण संबंधी प्रशिक्षण के जरिए कामकाजी हुनर और व्यक्तित्व का विकास, मुसीबत में फँसी इस प्रकार की महिलाओं के लिए मदद और पुनर्वास की जरूरत होती है। इन्हें अमल में लाने के लिए राज्य सरकारों के समाज कल्याण/महिला और बाल कल्याण विभाग, महिला विकास निगम, स्थानीय शहरी निकाय, प्रतिष्ठित निजी और सार्वजनिक ट्रस्ट अथवा ऐसे स्वयंसेवी संगठनों की मदद ली जा सकती है जो परियोजना-आधार पर ऐसी महिलाओं के पुनर्वास की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले सकें।

कार्ययोजना में निम्नलिखित मुद्दे ये हैं- अवैध व्यापार की रोकथाम, जागृति लाना और सामाजिक संगठन, स्वास्थ्य सेवाएँ, शिक्षा तथा बच्चों की देखभाल, आवास, आश्रयगृहों तथा नागरिक सुविधाओं की व्यवस्था, आर्थिक अधिकार-सम्पन्नता, कानूनी सुधार, कानून लागू करना, बचाव तथा पुनर्वास, संस्थागत तंत्र और पद्धति । महिलाओं तथा बच्चों के अवैध व्यापार और पेशेवर यौन उत्पीड़न का सामना करने के लिए गठित समिति की रिपोर्ट तथा कार्ययोजना केन्द्र सरकार के संबंधित मंत्रालयों/ विभागों तथा राज्य सरकारों/ केन्द्र शासित प्रदेशों को भेज दी गई है, ताकि वे कार्यवाही की मदों को लागू कर सकें।

महिला अधिकारिता वर्ष- राष्ट्र के विकास की मुख्य धारा में महिलाओं का जो उचित स्थान है, उसके बारे में व्यापक स्तर पर लागों में जागरूकता पैदा करने के उद्देश्य से वर्ष 2001 को 'महिला अधिकारिता वर्ष' के रूप में मनाया गया। इस दौरान एक ऐतिहासिक दस्तावेज "महिला अधिकारिता के लिए राष्ट्रीय नीति" पारित की गई। योजना आयोग के उपाध्यक्ष की अध्यक्षता में गठित कार्यदल ने महिलाओं के जीवन से संबंधित करीब 22 कानूनों की विस्तृत समीक्षा का काम अपने हाथ में लिया।

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि दुनिया में अगर न्याय का कोई एक विश्वव्यापी संघर्ष है, तो वह है नारी के लिए न्याय का संघर्ष। अगर किसी एक मुद्दे पर हर सभ्यता, हर परम्परा का दाम दागों से भरा हुआ है, तो वह स्त्री की अस्मिता का मुद्दा। इस न्यूनता का एहसास भी हर समाज के अवचेतन में मौजूद है। इसीलिए अपने स्त्रित्व के प्रति जागरूक और उसके प्रति आग्रहशील स्त्री से हर परम्परा डरती है, डर कर उसे गरियाती है। लेकिन नारी के लिए न्याय का संघर्ष भूमिकाओं की अदला-बदली का संघर्ष नहीं हो सकता, न ही यह समतापरक समाज के लिए जरूरी अन्य संघर्षों से असम्पृक्त हो सकता है। पुरूषवादी वर्चस्व की जो सत्ता स्त्री को हाशिये पर फेकती है, वही सत्ता अपने समाज के भीतर और बाहर उपनिवेशीकरण के विविध रूप गढ़ती है। हमारे समाज का स्त्री विरोधी,

श्रम विरोधी आन्तरिक उपनिवेशीकरण वर्णाश्रम की विचारधारा और जाति व्यवस्था की संरचना में व्यक्त होता है। जाति व्यवस्था ने एक तरफ महिमा मंडन, दूसरी तरफ व्यक्तित्व के निषेध की चतुराई के जरिये ऐसा भावतंत्र गढ़ा है जिसमें जीने वाली सवर्ण स्त्री स्वयं को शूद्र से नहीं, सवर्ण पुरूषवाद से जोड़ती है। दूसरी तरफ जाति व्यवस्था के खिलाफ सामाजिक न्याय के विविध संघर्ष चलाने वाले लोग भी नारी मुक्ति के सवाल को राजनैतिक एजेंडा पर लाने की जरूरत ही नहीं समझते। उल्टे स्वयं इन लोगों तथा इनके राजनैतिक- सांस्कृतिक प्रतिनिधियों को व्यवहार और चिंतन रूग्ण पुरूषवाद से ग्रस्त होता है और इस तरह जाति व्यवस्था के विरूद्ध संघर्ष करूण रूप से आधा-अधूरा रह जाता है। समस्या का यह पहलू कबीर से लेकर आज तक बरकरार है। सामाजिक न्याय की शक्तियों की इस सांस्कृतिक न्यूनता का लाभ जाति-व्यवस्था के सांस्कृतिक वर्चस्व को बनाये रखने और उसके राष्ट्रवाद का मोहक नाम देने के लिए उठाया जाता है। पिछले कुछ वर्षों में हमारे समाज में जाति व्यवस्था साफ तौर से राजनैतिक एजेंडा पर आती दिख रही है। इसके लिए जरूरी है कि नारी मुक्ति के सवाल को सजग रूप से राजनैतिक एजेंडा पर लाया जाये। सामाजिक न्याय का संघर्ष राजनैतिक सत्ता के संघर्ष तक सीमित नहीं है। यह संघर्ष परम्परागत सांस्कृतिक वर्चस्व के खिलाफ है। स्त्री और शूद्र को पशु के समकक्ष रखने वाली मर्यादा का प्रतिवाद करते हुए मर्यादा की ऐसी अवधारण गढ़नी है, जो पशु के साथ भी मानवीय व्यवहार करे। ऐसी मर्यादा प्रतिशोध के प्रस्थान बिन्दु से नहीं, बल्कि प्रेम की गंगोत्री से आरम्भ होगी। प्रचलित मर्यादा के सांस्कृतिक वर्चस्व के विरूद्ध इस नयी मर्यादा का संघर्ष पुरूष को भी दण्डित करने को नहीं, बल्कि उसे सूक्ष्म दासता से मुक्त करने के लिए होना चाहिए। सामाजिक न्याय की व्यापक स्तर एवं ठोस रूप देने वाले इस संघर्ष को सांस्कृतिक परम्परा की जीवित स्मृतियों के सृजनात्मक विकास का रूप लेना होगा। इसलिए सामाजिक न्यािय के पक्ष में राजनीति-सांस्कृतिक संघर्ष का नारा होना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. दास भगवान (1991) डॉ. अम्बेडकर के विचार, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल
2. दास भगवान (1998) बाबा साहिब भीमराव अम्बेडकर और भंगी जातियां, 18/455- इंदिरा नगर लखनऊ
3. शर्मा, आर.एस. (1998) अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1981 एवं 1995- इंडिया पब्लिकेशन कंपनी इन्दौर
4. शर्मा, प्रज्ञा (2001) वर्तमान समाज में महिलाओं की स्थिति, पोइंटर पब्लिकेशन, जयपुर
5. राम, जगजीवन (1981) भारत में जातिवाद और हरिजन समस्या, राजपाल एण्ड संस दिल्ली
6. निरूपण, विद्यालंकार (1975) हिन्दू धर्मशास्त्रों में शूद्रों की स्थिति, शास्त्रीय प्रकाशन मेरठ
7. इन्तिजार, नईम (1998) दलित समस्या जड़ में कौन? साहित्य सौरभ, 1781 होंज, सुई वालान, नई दिल्ली
8. ठाकुर, अरूण (1996) नरक सफाई, राधाकृष्ण प्रा.लि. नई दिल्ली
9. श्रीनिवास, एम.एन.(1987) आधुनिक भारत में जातिवाद, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल
10. संतोषी हरिकिशन (2009) दलितों के दलित सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन नई दिल्ली पृ. सं. 100

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

पूर्व मध्य कालीन आर्थिक जीवन में सिक्कों की भूमिका

• वेद प्रकाश

सारांश- प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया गया है कि पूर्व मध्य कालीन आर्थिक जीवन में सिक्कों की क्या भूमिका थी, हमने देखा कि तत्कालीन सिक्कों की गुणवत्ता में कमी देखने का मिलती है जो पूर्वकालिक शासनों में नही थी। जॉन एस. डेयल (**1990:4-7**) ने तर्क सम्मत ढंग से प्रमाणित किया है कि पूर्व मध्यकालीन भारत में मुद्राओं की कमी नही थी और ना ही समकालीन राज्य किसी भी गंभीर वित्तीय संकट की स्थिति से गुजर रहे थे। यह कहना उचित है कि सिक्कों के प्रकार में इस समय कमी देखने को मिलती है तथा सिक्कों की भौतिक गुणवत्ता भी सही नही कही जा सकती, किन्तु इस समय के सिक्कों को यर्थाथ को पूर्ववर्ती कुछ शताब्दियों से जोड़कर देखना अधिक तर्कसंगत होगा। क्योंकि इस युग में सिक्कों की संख्या में कोई भी अप्रत्याशित कमी नही देखने को मिलती। डेयल का इस संदर्भ में किया गया अध्ययन उत्तर- **1000** सा.सं के काल पर आधारित है। उनका मानना है कि सिक्कों की गुणवत्ता में कमी किसी वित्तीय संकट या किसी सामान्य आर्थिक संकट का द्योतक नहीं है। यह उस स्थिति का भी परिचायक हो सकता है, जब सिक्कों की मांग के अनुरूप श्रेष्ठ धातुओं की उपलब्धता में कमी आ गई हो। उपलब्धता में कमी आने के अन्य कई कारण भी हो सकते है, कि जैसा कि समय-समय पर विश्व के कई हिस्सों में देखा गया है। हम जानते है कि भारतीय उपमहाद्वीप के लिए अफगानिस्तान चांदी का मुख्य स्त्रोत रहा है। डेयल का तर्क है कि उत्तर भारत **1000** सा.सं में चांदी की प्रबल अनुपलब्धता का अनुभव कर रहा था। (बल्कि कुछ स्थानों पर यह कमी **750** सा.सं. से ही महसूस की जाने लगी थी) और यह एक प्रमुख कारण हो सकता है कि शासकों को चांदी के सिक्कों को संदर्भ में मिलाकर करनी पड़ रही थी

मुख्य शब्द - आर्थिक जीवन,सिक्का, गुणवत्ता, मुद्रा, वित्तीय संकट

पूर्व मध्यकाल भारतीय इतिहास का एक ऐसा महत्वपूर्ण समय है, जहाँ अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित अनेकानेक प्रगतियां दृष्टिगोचर होती हैं। इस समय अनेक राजवंशो का उदय हुआ जिसका कारण स्थानीय अर्थव्यवस्था ही थी। इन क्षेत्रों में कृषि, पशु-पालन, उद्योग-व्यवसाय, वाणिज्य-व्यापार, व्यापारिक मार्ग एवं व्यापारिक केन्द्रों (नगरों) का विकास हुआ। जहाँ तक आर्थिक व्यवस्था का प्रश्न है तो आर्थिक व्यवस्था में जो महत्वपूर्ण आधार है उनमें मुख्यतया वाणिज्य-व्यापार, शिल्प-उद्योग, कृषि-पशुपालन, मुद्रा-विनिमय, आय-व्यय, आर्थिक संगठन एवं व्यापारिक केन्द्र (नगर) महत्वपूर्ण हैं जो किसी भी काल की आर्थिक दशा को दर्शाते हैं। यद्यपि हमारे पास पूर्व मध्यकालीन उत्तर भारत की आर्थिक स्थिति के अध्ययन के लिए पुरातात्विक एवं साहित्यिक स्त्रोतों की उपलब्धता है किन्तु महत्वपूर्ण पुरातात्विक स्त्रोतों में सिक्के

• **शोध छात्र, प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति विभाग, महात्मा ज्योतिबा फुले, रूहेल खण्ड विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.)**

(मुद्राएं) इस काल खण्ड में सर्वथा शोध के योग्य रहे हैं जो अपनी नगण्य एवं दुर्बल स्थिति के कारण सदैव ही पुरातत्वेत्वायों मुद्रा शास्त्रियों, विद्वानों तथा इतिहासकारों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करते रहे है। अत: पूर्व मध्यकालीन उत्तर भारतीय आर्थिक व्यवस्था को जानने के लिए हमे तत्कालीन अन्य स्त्रोतों के साथ-साथ सिक्कों का अध्ययन करना आवश्यक हैं ताकि हम तत्कालीन अर्थव्यवस्था की स्थिति और उसमें सिक्कों की भूमिका को जान सकें।

प्राय: संसार में धातु के बने सिक्के ही विनिमय के साधन के रूप में जाने जाते है। अगर हम भारत की ही बात करे तो ई.पू. आठ सौ वर्षों से चांदी के सिक्के ही उपयोग में आते रहे है। प्राचीन काल की ही भाँति पूर्व मध्य काल में भी सोने, चांदी तथा तांबे के सिक्के पर्याप्त संख्या में निर्मित होते रहे परन्तु इस समय चांदी से निर्मित सिक्कों का ही अधिक प्रचलन देखने को मिलता है उस समय के लेखों में सिक्कों के लिए द्रम शब्द का प्रयोग देखने को मिलता है। द्रम को दीनार शब्द का बिगड़ा हुआ रूप मानते हैं। दीनार गुप्त काल में एक प्रसिद्ध स्वर्ण सिक्का था तथा चांदी को लिए रूपक शब्द का प्रयोग मिलता है, इस आधार पर तो पूर्व मध्यकालीन (द्रम) को सोने का सिक्का मानना उचित होगा। परन्तु यह मानना पूर्णतया: उचित नही होगा कि द्रम एक स्वर्ण सिक्का ही था। गुप्त काल में मिश्रित सोने या खराब सोने के सिक्के बनने लगे थे, पर उसे भी दीनार कहा जाता था, सम्भवता: उसी नाम का अनुकरण करके पूर्व मध्यकालीन शासकों ने खराब सोने या चांदी के सिक्कों को द्रम के नाम से सम्बोधित किया तथा जिन्हे समकालीन लेखों में भी स्थान दिया गया। गुर्जर-प्रतिहार के सियादोनी तथा ग्वालियर लेखों में कर के सम्बन्ध में अर्ध (विग्रह पालीय) द्रम का उल्लेख मिलता है। राजा के नाम के साथ द्रम को जोड़ देने के कारण लेखों में विग्रह पालीय द्रम या श्रीमदादि बाराह द्रम का उल्लेख मिलते हैं। नौंवी शदी के ग्वालियर लेख में एक व्यापारी को 1350 द्रम उधार देने का वर्णन प्राप्त होता है। उस परिस्थिति को देखकर निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि द्रम सिक्के मिश्रित या चांदी की धातु के बने होते होंगे।

अत: इस युग में द्रम को हम सोने का सिक्का (पुराना दीनार) नही मान सकते। डॉ. चक्रवर्ती का मत है कि बंगाल में गुप्त साम्राज्य के समाप्त हो जाने पर वहां पर एक प्रकार की अंशाति तथा अराजकता की समस्या उत्पन्न हो गई थी, इस कारण कौड़ी ही उस समय विनियम का साधन हो गई। जब पाल शासकों ने बंगाल में सुशासन स्थापित किया तत्पश्चात् उन्होनें द्रम यानि धातु के सिक्के प्रचलित किये। धर्मपाल के बोध गया लेख में द्रम शब्द का उल्लेख प्राप्त होता है। सेन लेख में कर्मदक पुराण का नाम मिलता है। किन्तु अभी तक उस नाम का कोई भी सिक्का प्राप्त नही हुआ है, दोनों चांदी के ही सिक्के थे।

कहने का तात्पर्य यह है कि इस युग में द्रम नाम सिक्के का प्रयोग सर्वत्र होता था। लोकनाथ के टिपेरा लेख तथा महास्थान ब्राहमी लेख में 'कांकिणी' शब्द सिक्के के लिये आया है जो तांबे के पैसे के समान सिक्का थ। इसके अलावा द्रम के बीसवें भाग को 'विशोपक' कहते थे। कौड़ियो का प्रयोग भी समाज में किया जाता रहा। मुसलमान यात्रियों ने भी बंगाल में कौड़ियो का प्रयोग पाया था जो व्यापार-विनिमय में काम आता था। गण्डक नामक सिक्का चार कौड़ियों के बराबर माना जाता था।

पूर्व मध्य काल में ज्यादातर सिक्के गुप्त शैली के ही बनते रहे। छठी शदी में मौखरी वर्धन तथा हूण राजाओं ने गुप्त शैली के ही चांदी के सिक्के तैयार करवाये थे, मध्य भारत में ससैनियन ढ़ंग को सिक्के इतने विकृत रूप में चलते रहे कि उन पर किसी प्रकार की आकृति दिखलाई नही पड़ती। ऐसे सिक्के गधिया नाम से पुकारे जाते थे जो अधिकतर तांबे के बनते थे।

गुर्जर-प्रतिहार राजाओं ने मध्य भारत से लेकर विहार तक अपना प्रभुत्व बनाये रखा। उनमें से मिहिर भोज ने प्रभुता सूचक सिक्का चलाया जो अत्यधिक संख्या में प्राप्त होते है। (कन्नौज के राजाओं के सिक्के) कुछ लोगों का मत है कि हूण सरदारों की नकल पर पश्चिमी-राजपूताना मे सिक्के प्रचलित किये गये थ। मिहिर भोज के सिक्के ससैनियन मुद्रा से मिलते हैं। उनके

अग्रभाग	पृष्ठ भाग
दो पंक्तियों में लेख श्री मदादि बाराह व यज्ञ कुण्ड का चिन्ह है।	विष्णु के अवतार वाराह की खडी मूर्ति है।

मारवाड़ से सिक्कों का एक ढ़ेर मिला है। उसमें चपटे ताँबे के सिक्के भी हैं, जिन्हे गधिया पैसा कहा जाता था। 12वीं शताब्दी तक इस प्रकार के भद्दे सिक्के प्रचलन में थे। 10वीं शदी में प्रतिहार वंश का पतन हो जाने पर बुन्देलखण्ड तथा मध्यभारत में नए राज्य उत्पन्न हो गये, जबलपुर के पास चेदि वंश की स्थापना हुई थी। गांगेयदेव चेदि ने विक्रमादित्य की पदवी धारण की और स्वतंत्रता के सूचक सिक्के तैयार करवाये। सम्भवत: उन दिनों देश की कुछ आर्थिक अवस्था कुछ अच्छी प्रतीत होती है तथा स्वर्ण सिक्कों का समाज में प्रचलन सम्भव था तथा उन्हे विनिमय के लिए प्रयोग में लाया गया। गांगेयदेव ने हल्के 62 ग्रेन के स्वर्ण द्रम तैयार कराये जिनकी बनावट भद्दी और कला रहित थी। उसके-

अग्रभाग	पृष्ठ भाग
तीन पंक्तियों में राजा का नाम श्रीमद गांगेय देव	बैठी हुई लक्ष्मी की चर्तुभुजी मूर्ति बनी हुई है।

ये सोने के सिक्के गुप्त शैली के ही बनते रहे लेकिन उनकी मिश्रित धातु थी। इनकी बनावट में पहले के सिक्के से अन्तर दिखाई पड़ता है। सम्भवत: मुस्लिम शासकों के सिक्के इन्ही के अनुकरण पर तैयार किये गये थे जिनमें एक ओर राजा का नाम मात्र लिखा जाता था। राजा की आकृति सदा के लिए हटा दी गई। लक्ष्मी का रूप तो पुराना ही था। अत: गंगादेय देव के सिक्के गुप्त के सिक्कों से मिलते-जुलते थे। इसके बाद चन्देल, गढ़वाल और तोमर राजाओं ने इसका अनुकरण किया था इसलिए यह गांगेयदेव शैली के नाम से प्रसिद्ध हो गया। सोने के अलावा चांदी तथा तांबे के सिक्के भी तैयार किये गये थे। अर्धद्रम, पाद (चौथाई) द्रम के सिक्के अश्वारोही शैली के मिलते है तथा तांबे के सिक्कों पर हनुमान की मूर्ति है।

10वीं शदी में महमूद ने कालिंजर तक चढ़ाई की थी जहाँ बाद में चन्देल वंश का अधिकार हो गया। उसके प्रथम राजा कीर्ति बर्म देव गांगेयदेव शैली के सिक्के निकाले थे

इसी प्रकार के सिक्के दूसरे राजाओं ने भी चलाये। (चन्देल सिक्के) चन्देल सिक्कों को द्रम के नाम से ही पुकारते है। द्रम, अर्धद्रम तथा पाद द्रम तीन प्रकार के सिक्के चलाए गये जो विनिमय तथा व्यापार के लिए अत्यन्त उपयोगी थे। अश्वारोही प्रकार वाले सिक्के सबसे पहले उत्तर-पश्चिम भारत के शाही वंश के शासकों द्वारा चलाये गये थे जिन्हे हिन्दूशाही का नाम दिया जाता है। ये सिक्के इतने प्रसिद्ध थे कि बाद में आने वाले मुस्लिम शासकों ने भी यही तकनीक अपनायी थी। जैसा कहा गया है, प्रतिहार वंश के स्थान पर राजपूताने में अनेक राजा उत्पन्न हो गये जिनमें से अग्निकुल मुख्य माने जाते हैं।

(राजपूतों के सिक्के) तत्कालीन परिस्थिति, आन्तरिक कलह तथा पारस्परिक झगड़ो ने ऐसा माहौल उत्पन्न किया कि पश्चिमी देशों से स्थल तथा जलमार्ग से व्यापार लगभग बन्द सा हो गया। अरब वालों की शक्ति बढ़ जाने के कारण भारत से उसका आपसी कारोबार बन्द हो गया। चांदी विदेश से नहीं आ सकी इसलिये राजपूतों ने मिश्रित धातु के सिक्के तैयार करवायें। तोमर, चौहान, राठौर सभी ने उसी शाही तकनीक (अश्वारोही) शैली को अपनाया तथा उस प्रकार के तांबे के सिक्के भी बनने लगे। गढ़वाल राजा गोविन्द्र चन्द्र ने सोने के सिक्के भी तैयार करवाये थे। स्यात दान में दक्षिणा के निमित्त उन्हे ढ़ाला गया था। धातु के ना मिलने से सिक्कों की तौल कम कर दी गई थी और तौल में 32 रत्ती के बराबर सिक्के बनते रहे। तोमरों के सिक्कों को मुसलमान लेखकों ने दिल्ली वाल सिक्के कहा है। चौहान सिक्कों को भी द्रम कहा जाता था। यद्यपि वे चांदी और तांबे के बनते रहे। राजपूताना तथा दिल्ली में राजपूतों का शासन होने के कारण विनिमय में राजकीय सिक्के काम में आते रहे। शाही तथा किदार कुषाण ढ़ाल के भद्दे और अशिष्ट सिक्के भी इस समय तक चलते रहे। मुसलमान विजेताओं ने शनैः शनै उनके स्थान पर इस्लामी सिक्को का प्रसार किया। सबसे पहले दिल्ली प्रान्त जीतने पर गुलामवंश के सुल्तानों ने दिल्लीवाल सिक्कों को ही अपनाया था। इसके बाद ही अपना नाम इस सिक्कों पर खुदवाया था। मुहम्मद-बिन-साम (मौहम्मद गौरी) का नाम नागरी अक्षरों में खुदवाया गया था। हिन्दू देवताओं की मूर्तियाँ भी खुदवाई गई। शिव के वाहन नन्दी को स्थान दिया गया था। आश्यर्च तो यह है कि कट्टरपंथी महमूद ने अरबी के स्थान पर संस्कृत को सर्वप्रथम सिक्कों पर स्थान दिया था। इन सब का यह कारण था कि सुल्तान विजित प्रदेशों में प्रजा को शांत रखना चाहता था अथवा इनके सामने हिन्दू राजाओं के सिक्कों के अनुकरण के अलावा और कोई भी चारा नही था। पूर्व मध्य कालीन उत्तर भारत से सिक्कों एवं बहुमूल्य धातुओं के पलायन या लूट भी तत्कालीन समृद्धि और बहुमूल्य सिक्कों की कमी का एक महत्वपूर्ण कारण माना जा सकता है। उत्बी, आफी, गिरदी, हसन निजामी आदि जैसे तत्कालीन इतिहासकारों ने महमूद गजनी द्वारा 17 बार भारत पर आक्रमण करने और उससे प्राप्त लूट के धन का उल्लेख किया है। जिसमें क्रमशः 1001 ई. में पेशावार के शाही नरेश जयपाल से ढ़ाई लाख दिरहम (चांदी के सिक्के) 1005-06 ई. में मुल्तान से 2 करोड दिरहम, 1007 ई. में 4 लाख दिरहम, 1008 ई0 में कोटा कांगडा के शाही शासको से 7 करोड़ चांदी के सिक्के तथा 7 लाख 400 मन सोने और चांदी के पैसे, 1018 ई0 में 10 लाख दिरहम बरन से और मथुरा से 93300 मिस्कल (ईरानी तौल) सोना और इतनी ही चांदी, कन्नौज लूटने के पश्चात् 2 करोड़

दिरहम प्राप्त किया। इसलिए हम कह सकते है कि पूर्व मध्यकाल में उत्तरी भारत बेहद समृद्ध था। तभी तो महमूद गजनवी यहाँ से लूटकर इतने सारे सोने-चांदी के सिक्के तथा अन्यु वस्तुएं ले गया जिसके फलस्वरूप एक ओर तत्कालीन पश्चिमोत्तर एवं उत्तर भारत की आर्थिक स्थिति कमजोर हुई दूसरी ओर बहुमूल्य धातुओं की कमी ने तत्कालीन मुद्रा नीति को प्रभावित किया। जिसके परिणामस्वरूप हम बची हुई धातुओं की मुद्राएं ही मिश्रित चांदी और तांबे के सिक्कों के रूप मे आज उपलब्ध होती हैं। इस लूट-पाट के बाद जो सोने-चांदी के सिक्के बचे रहे उसमें से भी अधिकतर को मुस्लिम शासन काल में गलाकर नये सिक्के बना दिये गये जैसा कि अलाउद्दीन खिलजी के दिल्ली टकसाल के अधिकारी ठक्कुर फेरू की 'द्रव्य परीक्षा' नामक ग्रन्थ से ज्ञात होता है जिसमें टकसाल में गलने वाले सिक्कों की लम्बी तालिका प्रस्तुत की गई है, इस प्रकार हम देखते है कि लूट-पाट और गलने-पचने के बाद जो थोड़े सिक्के बचे रहे वे ही आज हमें तत्कालीन मुद्रा तात्विक ज्ञान प्राप्त कराते हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. सिंह उपिन्दर : प्राचीन एवं पूर्व मध्यकालीन भारत का इतिहास, पाषाण काल से 12वीं शताब्दी तक, पृष्ठ सं.- 629, प्रकाशक: पियर्सन इंडिया एजुकेशन सर्विसेज प्रा. लिमिटेड
2. उपाध्याय वासुदेव : पूर्व मध्य कालिन भारत अर्थात 7वीं सदी से 12वीं सदी तक उत्तर भारत का सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ सं.-135, 36, 37, 38, प्रकाशक- भारत दर्पण ग्रन्थमाला, ग्रन्थ संख्या-7 भारती-भंडार लीडर प्रेस
3. गौरव, प्रशांत, पूर्व मध्यकालीन भारत, पृष्ठ- 13-14
4. गुप्त, पी.एल.,भारत के पूर्व कालिक सिक्के, पृष्ठ-4
5. उपाध्याय वासुदेव, प्राची भारतीय मुद्राएं, पृष्ठ- 165 वही
6. गुप्ता, पी.एल., पूर्वोहत, पृष्ठ-77
7. प्रतिहार लेख, ए.ई.भा. 8, पृष्ठ 32
8. गहड़वाल लेख, ए.ई.भा. 8, पृष्ठ 154
9. जा.न्यू.सो.इं., भाग-8, फलक-5
10. उपाध्याय, वासुदेव, पूर्वोहत, पृष्ठ-163

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

सारण जिले के प्रमुख खाद्यान्न फसलों का उत्पादन एवं विकास की संभावनाएं : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

• शैलेन्द्र मालाकार

सारांश- सारण जिला की अवस्थितिकी ऐसे क्षेत्र में है जहां कृषि विकास संबंधी सभी अनुकूल परिस्थितियां जैसे मिट्टी, सिंचाई, विस्तृत बाजार, श्रमिक उपलब्धता, अनुकूल जलवायू, आदि उपलब्ध है। सारण जिला में लगभग सभी खाद्यान्न फसल उपलब्ध है, अतः आवश्यकता इस बात की है कि अध्ययन क्षेत्र में बेहतर प्रबंधन द्वारा खाद्यान्न फसलों का उत्पादन किया जाय।

मुख्य शब्द - कृषि, क्षेत्र, बाढ़, संरचना

सारण जिला एक कृषि प्रधान क्षेत्र है। कृषि भूमि उपयोग के स्वरूप में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक दशाओं के अनुसार परिवर्तन होते रहते है। सारण जिले में खरीफ, रबी, एवं जायद तीनों ही प्रकार की फसले बोई जाती है, किन्तु बाढ़ की विभीषिका एवं कृषि संबंधित आधारभूत संरचना का समुचित विकास नहीं होने के कारण उत्पादन कम होता है। अतः जलोढ़ मिट्टी से युक्त इस क्षेत्र में सुनियोजित विकास की रणनीति अपनाई जाए।

सारण जिला की अवस्थितिकी एवं विस्तार- सारण जिला का अक्षांशीय विस्तार 25040' उत्तरी अक्षांस से लेकर 26015' उत्तरी अक्षांस तक देशांतरीय विस्तार 84025' पूर्वी देशांतर से लेकर 85015' पूर्वी देशांतर के बीच अवस्थित है। इस जिले की आकृति त्रिभूजाकार है इसके पश्चिम में घाघरा और पूर्व में गंडक नदी है।

अध्ययन का उद्देश्य-

1. सारण जिले के प्रमुख खाद्यान्न फसलों के क्षेत्रफल, उत्पादन का पता लगाना है।
2. खाद्यान्न फसलों के उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि हेतु व्यवहारिक सुझाव प्रस्तुत करना है।
3. विभिन्न प्रकार के खाद्यान्न फसलों के उत्पादन में सारण जिला की बिहार में क्या स्थिति है, विश्लेषण करना।

परिसंकल्पना-

1. कृषिगत उत्पादन पर धरातलीय व जलवायु विशेषताओं का प्रभाव पड़ता है।
2. सरकारी नीतियां एवं बेहतर व प्रबंधन से उत्पादन एवं उत्पादकता में बढ़ोतरी होती है।
3. नवीन कृषि तकनीक बाजार एवं विपणन व्यवस्था खाद्यान्न उत्पादन को प्रभावित करती है।

• शोधार्थी, भूगोल विभाग, जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा

विश्लेषण एवं व्याख्या-

फसल	क्षेत्रफल हेक्टेयर में	उत्पादन टन में
गेहूँ	89,600	2,55,803
चावल	64,211	65,212
मक्का	22,869	58,557

स्रोत-सारण डिस्ट्रिक्ट फैक्ट बुक

गेहूँ - सारण जिले में गेहूँ प्रमुख खाद्यान्न फसल है अध्ययन क्षेत्र में गेहूँ 89,600 हेक्टेयर क्षेत्र में बोई जाती है, 2018-19 में गेहूँ का उत्पादन 2,55,803 टन हुआ तथा गेहूँ उत्पादन में पूरे बिहार में सारण का स्थान 10वाँ था।

चावल- सारण जिले केप्रमुख खाद्यान्न फसलों में से एक है, धान के बीज को चावल कहते है, धान के ऊपर से छिलका हटाने पर प्राप्त होता है। सारण जिले में लगभग सभी जगह चावल की खेती होती है। चावल में न सिर्फ फाइबर पाया जाता है, इसके अलावे थायमिन, आयरन, कैल्शियम आदि जैसे पोषक तत्व भी पाए जाते हैं। सारण जिले के 64,211 हेक्टेयर क्षेत्र में चावल की खेती होती है। 2018-19 में सारण जिले में 65,212 टन चावल का उत्पादन हुआ तथा साथ ही पूरे बिहार में चावल उत्पाादन में सारण का 28वाँ स्थान था।

मक्का- मक्का को मोटे अनाजों की श्रेणी में रखा जाता है। इसका वानस्पतिक नाम Zea Maize है जो एक प्रमुख खाद्य फसल है। अध्ययन क्षेत्र के लगभग सभी जगह इसकी खेती होती है। मैग्नीशियम, आयरन, फेस्लिक एसीड, बीटा-कैरोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स, कैरोटेनॉयड्स, विटामिन और फाइबर जैसे विभिन्न पोषक तत्व मक्का में पाए जाते हैं। सारण जिल के 22,869 हेक्टेयर क्षेत्र में मक्का की खेती होती है। अध्ययन क्षे0 में 2018-19 में 58,557 टन मक्का की उत्पादन हुआ तथा मक्का उत्पादन में सारण जिले का स्थान पूरे बिहार में 14वां था।

फसल	क्षेत्रफल हेक्टेयर में	उत्पादन टन में
रागी	304	318
जौ (Barley)	64	127
अरहर/तूर (खरीफ)	464	912

स्रोत-सारण डिस्ट्रिक्ट फैक्ट बुक

रागी/मडुआ- रागी या मडुआ सुखे क्षेत्रों में उगाया जाने वाला मोटा अन्न है। इसके एक बार पकने के बाद किसी भी प्रकार का कीट या फुफुन्द का प्रभाव नहीं पड़ता है और भंडारण करना बेहद सरल होता है। रागी में अमीनों अम्ल मेथोनाइन पाया जाता है। अध्ययन क्षेत्र के 304 हेक्टेयर क्षेत्र में रागी की खेती होती है। 2018-19 में सारण जिले में 318 टन रागी का उत्पादन हुआ तथा पूरे बिहार में सारण जिले का रागी उत्पादन में 5वां स्थान था।

जौ (Barley)- जौ प्राचीनकाल से ही पृथ्वी पर उगाए जाने वाले प्रमुख फसलों में से एक है। इसका उत्पादन विभिन्न्न प्रकार की भूमियों पर किया जा सकता है। इसके लिए मध्य दोमट भूमि सर्वाधिक उपर्युक्त है और साथ ही खेत समतल और जल निकास योग्य होना चाहिए।

सारण जिले के 64 हेक्टेयर क्षेत्र में जौ की खेती होती है। वर्ष 2018-19 में सारण जिले में कुल जौ का उत्पादन 127 टन हुआ तथा पूरे बिहार के जिले में जौ उत्पादन में 16वां स्थान था।

अरहर/तूर (खरीफ)- यह एक महत्वपूर्ण फसल जिसकी खेती प्राचीनकाल से होती आ रही है। यह फसल प्रोटीन का महत्वपूर्ण स्त्रोत है। इससे खनिज, कार्बोहाइड्रेट, लोहा, कैल्शीयम आदि की पर्याप्त मात्रा में प्राप्ति होती है।

अध्ययन क्षेत्र के 464 हेक्टयर क्षेत्र में इसकी खेती होती है। 2018-19 में सारण जिले में अरहर का उत्पाादन 912 टन हुआ तथा पूरे बिहार के जिले में अरहर उत्पादन में सारण जिले का स्थान 13वां था।

फसल	क्षेत्रफल हेक्टेयर में	उत्पादन टन में
मूंग/हरा चना	1610	905
मटर	246	242
मसूर/मसूर दाल	64	76

स्रोत-सारण डिस्ट्रिक्ट फैक्ट बुक

मूंग/हरा चना- मूँग लेग्यूमिनेसी कुल का पौधा है जिसका वानस्पतिक नाम बिगना रेडिएटा है इसमें कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा तथा अल्प मात्रा में विटामिन पाया जाता है।चना रबी मौसम में ऊगाई जाने वाली फसल है (शुष्क एवं ठंडे जलवायु की फसल) इसकी खेती के लिए दोमट मिट्टी सर्वाधिक उपर्युक्त है। अध्ययन क्षेत्र के 1610 हेक्टेयर क्षेत्र में मूंग और हरा चना की खेती होती है। हरा चना और मूंग का 2018-19 में अध्ययन क्षेत्र में उत्पादन 905 टन हुआ तथा पूरे बिहार में मूंग और हरा चना के उत्पादन में बिहार का स्थान 20वां था।

मटर (रबी फसल)- खरीफ फसल की कटाई के बाद मटर की खेती की जाती है, अध्ययन क्षेत्र के सीमित क्षेत्रों में इसकी खेती होती है। राइजोबियम जीवाणु की उपस्थिति मटर के पौधो में होती है, जिससे भूमि उपजाऊ बनी रहती है।

अध्ययन क्षेत्र के 246 हेक्टेयर क्षेत्र में 2018-19 में मटर के पौधे की खेती हुआ तथा 2018-19 में सारण जिले में 242 टन मटर का उत्पादन हुआ तथा मटर उत्पादन में बिहार में सारण जिला का स्थान 22वां था।

मसूर/मसूर दाल (रबी)- मसूर रबी मौसम की फसल है, सामान्यत: खरीफ फसल की कटाई के बाद अक्टूबर के प्रथम सप्ताह से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक अध्ययन क्षेत्र में इसकी बुआई होती है, सिचिंत अवस्था में बोनी मध्य अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक होती है।

अध्ययन क्षेत्र में 2018-19 में 64 हेक्टेयर क्षेत्र में मूसर की खेती हुआ तथा उत्पादन 76 टन हुआ, वहीं सारण जिला का बिहार में 2018-19 में मसूर उत्पादन में 37वां स्थान था।

फसल	क्षेत्रफल हेक्टेयर में	उत्पादन टन में
उड़द/काला चना	66	60
खेसारी	23	23

स्रोत-सारण डिस्ट्रिक्ट फैक्ट बुक

उड़द/काला चना (खरीफ)- उड़द की खेती विभिन्न प्रकार की भूमि में होती है इसकी खेती के लिए हलकी रेतीली दोमट तथा मध्यम प्रकार की भूमि जिसमें पानी का निकास अच्छा हो उड़द के लिए उपर्युक्त होता है।

अध्ययन क्षेत्र में सीमित रूप से उड़द और काला चना की खेती होती है। 2018-19 में सारण जिले के 66 हेक्टेयर भूमि पर उड़द और काला चना की खेती की गई, तथा कुल उत्पादन 60 टन हुआ। वहीं पूरे बिहार में उड़द और काला चना उत्पादन में बिहार में सारण जिला का स्थान 15वां था।

खेसारी- खेसारी का वानस्पतिक नाम लैथिरस सैटिवस है। प्राचीन काल से ही इसकी खेती अध्ययन क्षेत्र में होती आ रही है।

अध्ययन क्षेत्र में काफी सीमित क्षेत्र में इसकी खेती होती है। 2018-19 में मात्र 23 हेक्टेयर क्षेत्र में इसकी खेती हुआ तथा कुल उत्पादन 23 टन हुआ, वहीं खेसरी उत्पादन में बिहार में सारण जिला का 30 वां स्थान था।

विकास की संभावनाएं- सारण जिले में प्राचीन काल से ही खाद्यान्न फसलों का उत्पादन होता आ रहा है, सारण जिले में खाद्यान्न फसलों का उत्पादन बड़े पैमाने पर होता है लेकिन जिस मात्रा में खाद्यान्न फसलों का उत्पादन होना चाहिए उस मात्रा में नहीं हो पा रहा है उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट होता है कि पूरे बिहार में केवल रागी फसल का उत्पादन (2018-19) में सारण जिला का स्थान 5वां रहा और गेहूँ के उत्पादन में 10वां स्थान रहा, बाकी सभी फसलों के उत्पादन में सारण जिला पिछड़ेपन की स्थिति में रहा।

सारण जिले में खाद्यान्न फसलों के उत्पादन की असीम संभावनाएं है, जिले में आबादी बढ़ने के साथ ही खाधान्न फसलों की मांग बढ़ने लगी है, अत: खाद्यान्न फसल उत्पादन बढ़ाने की आवश्यकता है। जरूरत इस बात की है कि जिले में क्षेत्रवार खाद्यान्न फसलों के उत्पादन की संभावनाओं के अनुरूप योजनाबद्ध तरीके से कार्य की जाये। खाद्यान्न उत्पादन क्षेत्र के कृषकों को संगठित करके उन्हें प्रशिक्षण एवं आवश्यक सुविधाएं देकर अच्छी फसलों को चयन करने के लिए प्रेरित करने की आवश्यकता है, जिसमें उत्पादन में वृद्धि हो उत्पादन के साथ सरकार द्वारा विपणन व्यवस्था में सुधार करना होगा।

सारण जिले में खाद्यान्न फसलों के विकास के संभावनाओं के लिए प्रमुख तथ्यों को आंकलन किया गया है, जिसे निम्न रूपों में देख सकते है।

1. सारण जिले में खाद्यान्न फसलों की खेती जलवायु पर निर्भर करता है, सारण जिला में ग्रीष्म, शीत और वर्षा ऋतुओं में खाद्यान्न फसले ऊगाई जाती है। खाद्यान्न फसलों का चयन उस स्थान की मृदा प्रकार, जलवायू, मौसम को ध्यान में रखकर करना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक मौसम में खाद्यान्न फसलों की खेती भिन्न-भिन्न मौसम में की जाती है। अत: फसलों का चयन मौसम एवं तापमान के अनुसार करना चाहिए। इसमें उत्पादन एवं उत्पादकता में बढ़ोतरी होती है।
2. भूमि में जरूरत के अनुसार रासायनिक खाद एवं जैविक उर्वरक डालकर खेती की जाए परिणाम अच्छा मिलेगा।

3. खाद्यान्न फसलों की उचित वृद्धि एवं विकास के लिए भूमि में नमी की उपर्युक्त मात्रा बनाए रखने के लिए सिंचाई का बेहतर प्रबंध करना आवश्यक है। किसी भी फसल से पूर्ण उत्पादन प्राप्त करने के लिए समय पर तथा पर्याप्त मात्रा में सिंचाई की परम आवश्यकता होती है। सारण जिला सिंचाई सुविधा प्राप्त जिला है, अत: यहाँ पर खाद्यान्न उत्पादन एवं विकास की बेहतर संभावनाएं है।
4. खाद्यान्न उत्पादन में समन्वित कीट प्रबंधक पद्धति अपनाया जाय ताकि खाद्य फसलों को कीटों के प्रकोप से बचाया जाय और उत्पादन में बढ़ोतरी हो।
5. सारण जिला की अवस्थितिकी मैदानी क्षेत्र में है और सघन आबादी वाले क्षेत्रों में है, अगर कृषि आधारित उद्योग जैसे आटा उद्योग, चावल उद्योग, डबल रोटी उद्योग आदि गतिविधियों को बढ़ावा दिया जाय तो किसानों की आकर्षण कृषि गतिविधियों की तरफ बढ़ेगा और इसका बेहतर लाभ मिल सकता है।
6. सारण जिले में शीत गृह उपलब्धता समय की मांग है। इससे खाद्यान्न फसलों की क्षति नहीं के बराबर होगी फलत: उत्पादन की संभावनाएं बढ़ जाएगी।
7. अध्ययन क्षेत्र के खाद्यान्न फसलों का उत्पादन में कृषि अनुसंधान में हुए नए तकनीक जैसे ड्रीप सिंचाई, स्प्रिंकलर सिंचाई, ड्राइवर लैस ट्रैक्टर, रोटावेटर, सीडड्रिल मशीन, प्लान्टर और हार्वेस्टर आदि जैसे नई तकनीक का प्रयोग करने से एक तरफ लागत कम होगा तो दूसरी तरफ उत्पादन में बढ़ोतरी होगी।

निष्कर्ष- निष्कर्षत: हम कह सकते है कि सारण जिला की अवस्थितिकी ऐसे क्षेत्र में है, जहां कृषि विकास संबंधी सभी अनुकूल परिस्थितियां जैसे मिट्टी, सिंचाई, विस्तृत बाजार, श्रमिक उपलब्धता, अनुकूल जलवायु आदि उपलब्ध है जैसे कि उपर में वर्णन किया जा चुका है कि सारण जिला में लगभग सभी खाद्यान्न फसल उपलब्ध है, अत: आवश्यकता इस बात की है कि अध्ययन क्षेत्र में बेहतर प्रबंधन द्वारा खाद्यान्न फसलों का उत्पादन किया जाय।

संदर्भ ग्रन्थ सूची -

1. सारण डिस्ट्रिक्ट फैक्ट बुक, सारण डिस्ट्रिक्ट
2. सिंह आर.पी. (1986) : कृषि दर्पण, पराग प्रकाशन नई दिल्ली।
3. कुमार अनिल 2008 : 'बहुउपयोगी मेथी की खेती' कुरूक्षेत्र पत्रिका, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली दिसम्बर माह
4. मिश्र जयशंकर (2008) : गृह वाटिका, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी।

UGC Journal No. (Old) 40942,
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 5.125, ISSN 0973-3914
Vol.- 34, Hindi Edition, Year-17, Jan.- June 2021

अहिच्छत्रा का मूर्ति शिल्प

• बृजेश स्वरूप कटियार

सारांश- प्राचीन भारतीय इतिहास एवं कला की धरोहर को अपने आंचल में जिन सास्कृतिक नगरियों ने छिपाए रखा और यथा अवसर उसे उजागर भी किया है उनमें मथुरा, कौशाम्बी, श्रावस्ती, काशी, कोशल, पाटलिपुत्र, अवन्तिका आदि की भाँति अहिच्छत्रा का महत्वपूर्ण स्थान है। अहिच्छत्रा साहित्य, धर्म एवं कला तीनों ही की त्रिवेणी रही है। इन्हीं कारणों से इसका गौरवमय अतीत रहा है। यहाँ से जो पुरा- सम्पदा प्राप्त हुई है उससे यह सुस्पष्ट होता है कि ब्राह्मण, बौद्ध एवं जैन सभी मतों के अनुयायी यहाँ रहते थे। यहाँ की कुछ मिट्टी की मूर्तियाँ जिनमें प्रेमासक्त दम्पत्ति, मानवमुख, राजपुरूषों जैसी वेशभूषा वाली कलाकृतियाँ वहाँ के लोक जीवन के जीवन्त प्रतीक हैं।

मुख्य शब्द - इतिहास, कला, साहित्य, धर्म

अहिच्छत्रा अधुना जनपद बरेली के आंवला तहसील के रामनगर नामक कस्बे में है। अपने खण्डहरों में रूप में ही बची है। अहिच्छत्रा की गुप्तकालीन विश्वविश्रुत गंगा – जमुना की दीर्घकाय मिट्टी की मूर्तियाँ व कलापुणं पार्वतीमुख इस समय राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली की शोभा बढ़ा रहा है। कुछ कला—तियां जिनेश्वरदास संग्रह में हैं, जिनमें गुप्तयुगीन धनु धारिणी विशेष उल्लेख योग्य है। राज्य संग्रहालय में भी यहाँ से मिट्टी, की 39 मूर्तियाँ सन् 1956 में आयी हैं।[1] यहां से कुल सात प्रस्तर की प्रतिमायें समय – समय पर लखनऊ संग्रहालय में अधिगृहित हुयी है।

1. **सर्वतोभद्र या चौमुखी को चरण चौकी**- जैन धर्म में विशेष रूप से ऐसी प्रतिमाएं बनती थीं जिन्हें चारों तरफ से देखा जा सके, इन्हें 'चौमुखी' कहते हैं। चौमुखी में तीर्थंकर बैठे या खड़े बनाए जाते हैं। इस चौमुखी में तीर्थंकर खड़े दर्शाये गये थे, क्योंकि चारो तरफ चरण बने हैं। यहलाल चित्तीदार पत्थर की है इस पर सौभाग्य से लेख कुषाण ब्राह्मी में है चरण चौकी पर इस प्रकार लेख खुदा है[2]

अ–1– सं 7 4 ग्रि. 1 हि 5 अरूय वरनतो गणतो
  2– लतो वजनकरितो शाखातो अय्य श्रीरिक (तो)
ब– 1– नडहनस्य वचकस्य शिशिनिये अ (य्य)
  2– ....इसस
स– 1– हि वलये पनतिथीरिये शिशिनिये अयहसिये
  2– वस्य कुटंविनिये घखलायदिति।

प्रस्तुत लेख मथुरा के कंकाली टीले से प्राप्त कुषाण युगीन जैन प्रतिमा लेखों की भाँति है। इस चरण चौकी पर चारों ओर धर्मचक्र बीच में स्तम्भ पर सामने की ओर तीन उपासक दोनों ओर वन्दन मुद्रा में खड़े हैं, पीछे सात आकृतियाँ हाथ जोड़े खड़ी हैं। चौकी बायीं – दायीं तरफ एक साधु साध्वी व एक – एक उपासक खड़े हैं। प्रस्तुत लेख में तिथि को 74

• विभागाध्यक्ष, इंस्टीट्यूट ऑफ फाईन आर्ट्स, सी.एस.जे.एम. विश्वविद्यालय, कानपुर

पढ़ा गया था। इसमें 78 जोड़कर 152 ई. की कृति माना गया है। किन्तु लगभग दो वर्ष पूर्व भारतीय लिपि शास्त्र की लब्धि प्रतिष्ठित जर्मन विदुषी प्रो. मेटलवालनर ने इसे 14 पढ़ा है। इस प्रकार 92 ई. की कलाकृति माना है। यदि इस पाठ को सही मान लिया जाता है तो यह और सर्वप्राचीन चौमुखी की चरण चौकी ठहरती है, और धरवल के दान का उल्लेख करती है।

2. **तीर्थंकर प्रतिमा की चरण चौकी**- दूसरा लाल चित्तीदार पत्थर की किसी तीर्थंकर की बैठी प्रतिमा रही होगी क्योंकि पीछे पीठ का भाग स्पष्ट है।[3] सामने का हिस्सा पर्याप्त घिस चुका है ध्यान से देखने पर आसन चौकी के मध्य में धर्मचक्र तथा बायीं – दायीं ओर एक गणधर बैठे थे जिनके घुटनों का भास मात्र है। यह लेख इस प्रकार दो पंक्तियों में है :-

1. यक गणतो धनियानस्य धि (तु) अय्य अ (f) धच्छत्र
2. तन

3. **तीर्थंकर प्रतिमा**- यहाँ पर 'अधिक्षत्र' पद ध्यान देने योग्य है जो अहिछत्रा का यह सर्वप्राचीन उल्लेख प्रतीत होता है। तीसरी प्रतिमा लाल चित्तीदार पत्थर की कुषाण काल की है, किसी तीर्थंकर की बैठी लेखयुक्त प्रतिमा है।[4] मूल प्रतिमा केवल बायें हाथ से टूटी है। तीर्थंकर प्रतिमा भावपूर्ण है। आसन चोकी के मध्य में स्तम्भ पर धर्मचक्र सुशोभित है। इसके बाएं – दायें एक – एक तु दिल – गणधर वन्दन मुद्रा में बैठे हैं। इन्हीं के पास दोनों ओर उपासक उपासिकाएं, आर्यिकाओं के अंकन हैं। सिंहासन दो सिंहों द्वारा वाहित है। सिंहों के मुँह सामने तथा जीभ बाहर निकली है। लेख इस प्रकार है :

1- सं. 10, 2 व 4 दि 10 एतस्य पूर्व्वायास कोटियतो गणतो वभदस य तो कुलतो उचे
2- ...नगरितो शाखतो गणिस अय्यल यस्य सिसिन...........भगिनियेव...............
3- तनसवकान वधु जिनदासी रूद्रदेवजितदेव गह रूद्रवेवसमिनि रूद.....दत्त गहमित्र.........
4- कुमारशिरिवमदसिस्य धित गृह श्री.........जय.......मित्र श्री।

अर्थात सम्वत् 12 में उच्चनगर-आधुनिक बुलन्दशर शाखा के ब्रह्दासी की पुत्री गृहश्री, जय, मित्रश्री ने इस प्रतिमा को स्थापित करवाया।

4. **आयागपट्ट**- एक लेखयुक्त आयागपट्ट भी लाल चित्तीदार पत्थर का है।[5] इस पर चारो ओर किनारे दोनों ओर बाजुओं पर अंगूर के गुच्छों सहित बेल बनी है। नीचे घट से पत्रावली निकल रही है। ऊपर बीच में एक दूसरे से बेल को पंख दिया गया है। पुनः चारों ओर चौकोई बोर्डर है भीतर चारों कोनों पर बायीं ओर नीचे ऊपर सगुच्छ पुष्पित पुष्प बने हैं। दायीं ओर ऊपर नीचे श्रीवत्स इनके बीच चार नन्दीपद बने हैं। मध्य में खिले कमल की पत्रों का चक्र बनाया गया है। जो घिस गया है। यहाँ पर सम्भव है लघु तीर्थंकर बने हों या मात्र खिला कमल भी हो सकता है। नीचे लेख दो पंक्तियों में इस प्रकार है-

1. (ते)........... रूपनंदिकस पुत्रेन नंदिघोशेन (ते) वणिवेन अ....त.....अ...ले त
2. ननं नेंदिरे आयापट्टा प्रतिथपित (ा).....................।

यहां पर यह उल्लेखनीय है कि व्यूलर[6] ने (ते) वणिवेन जबकि ल्यूडर[7] ने सुवर्णिकेन पढ़ा है बाद वाला मत अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है क्योंकि कुषाणकालीन मथुरा के अन्य जैन प्रतिमा लेखों पर गंधिकार और लौहकार के उल्लेख प्राप्त होते हैं। यह आयाग फ्ट्ट रामनगर किले के टीले से उपलब्ध हुआ था।

5. **बुद्ध जीवन दर्शन पट्ट**- इन जैन निदेर्शनों के अतिरिक्त रामनगर से बुद्ध बुद्ध जीवन – दर्शन – पट भी मिला है।[8] इस लाल पत्थर की पटिया पर बुद्ध के जन्म, तप, प्रथम उपदेश व महापरिनिर्वाण के दृश्यों को दर्शाया गया है। इस पर कोई लेख नहीं है। यह गुप्तकाल की रचना

है। क्योंकि जितनी भी आकृतियाँ बनी है वे अत्यन्त मनोरम है यहाँ तक की भार – कन्या एक झण्डा – केतु लिये है जिस पर मगर बना हुआ है जो कि कामदेव का प्रतीक है। यहाँ, यह भी उल्लेखनीय है कि यह प्रतिमा दो बार जापान प्रदशिनी में संग्रहालय से भेजी जा चुकी है।

6. **यक्ष अथवा कीचक मूर्ति**- बरेली जनपद के आंवला तहसील के कोतवाल श्री हरिप्रसाद धवन ने सन् 1952 में एक बड़ी ही महत्वपूर्ण कीचक अथवा यक्ष की मूर्ति संग्रहालय को भेंट स्वरूप प्रदान की थी जिसे पहले गुहयक (टोड़ी) माना गया था।[9] किन्तु इसका सूक्ष्म एवं तुलनात्मक अध्ययन से यह चौकी या आसन प्रतीत होती है क्योंकि मथुरा के वेदिका स्तम्भों पर जो यक्षियों की मूर्तियाँ पायी जाती हैं वे कीचक की पीठ या पेट पर खड़ी बनायी गयी थीं बहुत सम्भव है इसे भी भिक्षुओं के बैठने अथवा स्नान हेतु इसे बनाया गया हो।[10] ऐसी ही पीटिकायें पटना, कौशाम्बी, भोटा आदि से भी मिली थी। प्रस्तुत प्रतिमा के मस्तक पर जो लेख उत्कीर्ण हैं उसमें अहिच्छत्रा का कुषाण युगीन अभिलेखी प्रमाण है। लेख इस प्रकार है।

1. भिक्षु य धमधोणस्य दान फरगुल वि
2. हार अहिछत्रये।

7. **शवारुढ़ा चामुण्डा**– संग्रहालय में इसी वर्ष एक चतुर्भुजी चामुण्डा की प्रतिमा भी क्रय हुयी है देवी ऊपर वाले बायें हाथ की उंगली चाट रही हैं नीचे के बायें हाथ से गदा पकड़े हुये हैं नीचे के दायें हाथ में खप्पर तथा ऊपर के दायें हाथ में कटार पकड़े हैं जिसका आगे का हिस्सा नहीं है।[11] देवी गले में लम्बी माला पहने हुये हैं, पोछे खिले हुये कमल का प्रभा मण्डल भी बनाया गया है। यह मूर्ति हल्के पीत श्वेत – बफ कलर के पत्थर से गढ़ी गयी है। इसको कला – मर्मज्ञों ने लगभग 9 वीं शती की कृति अनुमाना है। यह मूर्ति जनपद बरेली के कस्बा फरीदपुर व ग्राम पंचौमी से प्राप्त हुयी है। यहाँ पर देवी को भाव पूर्ण दर्शाया गया है। संक्षेप में अहिच्छत्रा के ये लावण्यमय साक्ष्य वहाँ की ऐतिहासिकता, धार्मिक सहिष्णुता, लोक रुचि एवं सांस्कृतिक वैभव के दर्पण हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. म्यु. रिपोर्ट. 1954-60 पृ. 198-201 सं. 56[0] 485-56, 523
2. संग्र. संख्यक-जे. 684, सइज 22X17 X 12 सेमी.
3. रा. सं. सं. जे-685. आकार 42 X 37 X 17 सेमी. इपी. इं. ब्लूम-10 पृ. 114
4. रा. सं. सं. जे-686 आकार-87 X 63 X 18 सेमी.
5. रा. सं. सं. जे-686 ए आकार 85 X 75 X 8 सेमी. इपी. इ. ब्लूम-10 पृ. 120
6. इपी. इ. ब्लूम-01 पृ. 379
7. इ. ए. क्वे. ब्लूम. 33 पृ.150 नं. 27
8. रा. सं. सं. 45[0] 13 आकार 99 X 21 X 6 सेमी.
9. रा. सं. सं. 52 1 आकार 45 X 23 X 22 सेमी.
10. (अ) यू. पी. हि. सो. ब्लूम 6, पार्ट 1-1951-54 पृ. 193-95 प्रो. के. डी. बाजपेयी का लेख
    (ब) यू. पी. हि. सो. ब्लूम 6 पार्ट-1 न्यू, श्री वी. एन. श्रीवास्तव का पृ. 471
11. सं. सं. 86, 94 आकार 16 X 6 X 5 सेमी.।

RNI No MP BIL 01034 / 12 / 1 / 2005 - TC
REGISTRAR OF NEWS PAPERS IN INDIA, GOVT. OF INDIA

Centre for Research Studies
Rewa-486001 (M.P.) India
Registered Under M.P. Society Registration Act,
1973, Reg. No. 1802, Year-1997
www.researchjournal.in

ISSN 0973-3914

Editor : Prof. Braj Gopal, Printed and Published by Dr. Gayatri Shukla on behalf of Gayatri Publications,Rewa - 486001 (M.P.)
and Printed at Lineage Offset Rewa - 486001 (M.P.)